Peer Reviewed Journal for M.Phil. , Ph.D. & Appointment of Teacher in Universities & College

ISSN : 2394-3580 VOLUME - 9 No. : 3, Jan. - 2022

Swadeshi Research Foundation

A MONTHLY JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH

राष्ट्रीय संगोष्ठी

शिक्षा, साहित्य, कला और संस्कृति

Date : 09 January 2022, Sunday

Venue : Jabalpur (M.P.), INDIA

Peer Reviewed & Refereed Journal

Indexing & Impact Factor 5.2

Published by :

Swadeshi Research Foundation & Publication

Seva Path, 320 Sanjeevani Nagar,

Veer Sawarkar Ward, Garha, Jabalpur (M.P.) - 482003

CONTENTS

S. No.	Paper Title	Author Name	Page No.
1	वेदादि शास्त्रोक्त राष्ट्र और राष्ट्रशक्ति : स्वरूप एवं तात्त्विक विमर्श	डॉ. आशुतोष पारीक	1-4
2	सांस्कृतिक चेतना को उजागर करती हिंदी ग़ज़ल	प्रा. डॉ. नरसिंगदास ओमप्रकाशजी बंग	5-6
3	काका कालेकर का यात्रा साहित्य	डॉ. मोनिका निझावन	7-9
4	प्राचीन भारतीय पुराकथाओं में नीतिगत उपदेश एवं शिक्षा	डॉ. हिमा गुप्ता	10-15
5	''स्टैच्यु ऑफ बिलीफ'' विश्वास स्वरूपम्	विजेन्द्र कुमार डॉ. मुक्ति पाराशर	16-18
6	ब्रज क्षेत्र के श्रम परिहार के गीत	संजू रोहलानियां	19-22
7	जैन दर्शन में निहित शांति शिक्षा के तत्वों की माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों में तनाव को कम करने में उपयोगिता	दीपक जैन	23-27
8	पर्यावरण विषमता का मानवजाति पर प्रभाव	कमलेश कुमार जोशी	28- 30
9	आदिवासी क्षेत्र में शिक्षा का विकास चुनौतियाँ एंव उपाय	डॉ. दीप्ति सिंह	31-33
10	गोपालदास नीरज के काव्य में सामाजिक एवं सांस्कृतिक चेतना	देवीलाल रोझ	34-38
11	1857 ई. की क्रांति में उत्तर प्रदेश की महिलाओं की भूमिका	योगेन्द्र कुमार डॉ. बलराम बघेल	39-40
12	मालवा में बौद्ध प्रतिमाएँ	हरि ओम सिंह	41-43
13	भारतीय ऑटोमोबाइल उद्योग में रोजगार के अपार अवसर–एक अध्ययन	गोरधन जाटव डॉ. केशव मणि शर्मा	44-48
14	आदिवासी जीवन केन्द्रित हिंदी उपन्यासों में नारी समस्याएँ	अर्जुन जगताप	49-54
15	शिक्षक शिक्षा में आई.सी.टी. की भूमिका : राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के संदर्भ में	Ashok Kumar Sharma Mayank Verma	55-57
16	अमृतलाल वेगड़ का साहित्यिक योगदान (यात्रा वृत्तांत के सन्दर्भ में)	डॉ. रीता सोनी	58-59
17	प्रसाद का स्कन्दगुप्त में नाट्यकला : स्कन्दगुप्त का नाट्य–शिल्प या शैली	डॉ. जितेन्द्र कुमार सिंह डॉ. नीकू कुमारी	60-62
18	सोशल मीडिया का समाज पर बढ़ता प्रभाव	डॉ. राजेश कुमार धुर्वे	63-66

Swadeshi Research Foundation A Monthly Journal of Multidisciplinary Research
International Peer Reviewed, Refereed, Indexing & Impact Factor - 5.2, Ex- UGC S.N. 4990
ISSN : 2394-3580, Vol. – 9, No. – 3, Jan. – 2022, Conference Special Issues
2022

वेदादि शास्त्रोक्त राष्ट्र और राष्ट्रशक्ति : स्वरूप एवं तात्त्विक विमर्श

डॉ. आशुतोष पारीक
सहायक आचार्य, संस्कृत विभाग, सम्राट पृथ्वीराज चौहान राजकीय महाविद्यालय, अजमेर

शोध सारांश :– राष्ट्र के विविध सन्दर्भों को प्रायः देखा जाता है। इन सन्दर्भों में कहीं जाति की महत्ता तो कहीं आर्थिक स्वार्थों की तत्परता, कहीं सामाजिक राग–द्वेष की प्रचुरता तो कहीं किसी राजपरिवार की महत्ता को हावी होता देखा जाता है। वैदिक राष्ट्र का स्वरूप और उसकी शक्ति इन सभी संकुचित विचारों त्याग का परिचय कराती है। हम कैसे राष्ट्र को अपने अस्तित्व, अधिकार और कर्तव्य का आधार बनाना चाहते हैं, इसका उचित निदर्शन करती है। अतः आइए, वैदिक राष्ट्र के स्वरूप को जानें और मानवीयता के सच्चे पथप्रदर्शक के रूप में ''वसुधैव कुटुम्बकम्'' के सद्भाव को पनपने का सुदृढ़ आधार प्रदान करें।

संकेताक्षर :– आर्ष, राष्ट्र, वर्णाश्रमधर्म, राष्ट्रभृत् देव, सभा, समिति, तेज, बल, धृति, शौर्य, तितिक्षा, औदार्य, उद्यम, स्थैर्य, ब्रह्मण्य, ऐश्वर्य, क्षत्रप्रकृतियाँ।

आ ब्रह्मन् ब्राह्मणो ब्रह्मवर्चसी जायतामा राष्ट्रे राजन्यः शूर इषव्योऽतीव्याधी
महारथो जायतां दोग्ध्री धेनुर्वोढानड्वा–नाशुः सप्तिः पुरन्धिर्योषा जिष्णू रथेष्ठाः
सभेयो युवास्य यजमानस्य वीरो जायतां निकामे निकामे नः पर्जन्यो वर्षतु फलवत्यो न औषधयः पच्यन्तां योगक्षेमो नः कल्पताम्।।[1]

राष्ट्र के माहात्म्य को प्रतिपादित करता यह यजुर्वेद का मन्त्र उदात्त विचारों का सम्प्रेष्ण करता है। हम जानते हैं कि सम्पूर्ण विद्याओं और प्रत्ययों का मूल वेद है। स्वामी दयानन्द के मत में **''वेद सब सत्यविद्याओं का पुस्तक है। वेद का पढ़ना–पढ़ाना और सुनना–सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है।''**[2] अतः हमें जब भी किसी प्रत्यय पर विचार करना होता है तो हम उसका मूल वेद में खोजने का प्रयत्न करते हैं। हमारा सनातन राष्ट्रीय चिन्तन भी वेदमूलक है। समग्र राष्ट्रीय चिन्तन ब्रह्मज्ञान में समाहित है। वेद ब्रह्म है, ब्रह्म बल है, बल राष्ट्र है, जिसकी प्रधान रूप से चार शक्तियाँ हैं– 1. ज्ञानशक्ति, 2. रक्षकशक्ति, 3. पोषकशक्ति एवं 4. धारकशक्ति। ऋग्वेद के पुरुष सूक्त में कहा गया है–

ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद् बाहू राजन्यः कृतः।
उरू तदस्य यद् वैश्यः पद्भ्यां शूद्रोऽजायत।।[3]

अर्थात् उस विराट् पुरुष से ही चारों वर्णों की उत्पत्ति हुई, जो राष्ट्र के अंग थे। यह मन्त्र शरीर, समाज, राष्ट्र और भूमण्डल तथा विश्व मण्डल के राष्ट्र स्वरूप में समान रूप से घटित है। अथर्ववेद में राष्ट्र की उत्पत्ति के सम्बन्ध में कहा गया है–

भद्रमिच्छन्तः ऋषयः स्वर्विदस्तपो दीक्षामुपनिषेदुरग्रे।
ततो राष्ट्रं बलमोजश्च जातं तस्मै देवा उपसंनमन्तु।।[4]

अथर्ववेद के उच्छिष्ट सूक्त में राष्ट्र को उच्छिष्ट में निहित बताया गया है।[5] 'राजृ दीप्तौ' धातु से करण अर्थ में ष्ट्रन् प्रत्यय से राष्ट्र शब्द निष्पन्न हुआ है। कोशों में राष्ट्र का अर्थ राज्य, देश, साम्राज्य, जिला, प्रदेश, दुर्ग, बल आदि किये गये हैं[6] किन्तु जिस राष्ट्र की अवधारणा वेद में है, वह सम्पूर्ण त्रिलोक है, वह अध्यात्म, अधिदैव तथा अधिभूत अर्थ का प्रतिपादक है। राष्ट्र शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग ऋग्वेद में वाक् सूक्त के अन्तर्गत मिलता है। वेद, ब्राह्मण, उपनिषद्, पुराणादि में राष्ट्र की सीमा व स्वरूप का चिन्तन विस्तृत रूप से अभिव्यक्त हुआ है। हमारा वर्तमान जगत् राष्ट्र के आधिभौतिक स्वरूप को ही महत्त्व प्रदान कर पा रहा है किन्तु इसके अध्यात्म व अधिदैव स्वरूप का दर्शन कराने वाले मन्त्रों का भी निदर्शन वर्तमान समाज के लिए उपादेय होगा। यजुर्वेद के अध्याय 20 में राज्य के आध्यात्मिक स्वरूप का इस प्रकार वर्णन मिलता है–

शिरो मे श्रीर्यशो मुखं त्विषिः केशाश्च श्मश्रूणि।
राजा मे प्राणो अमृतं सम्राट् चक्षुविराट् श्रोत्रम्।।
जिह्वा मे भद्रं वाङ्महो मनो मन्युः स्वराड् भामः।
मोदाः प्रमोदाऽङ्गुलीरङ्गानि मित्रं मे सहः।।
बाहू मे बलमिन्द्रियं हस्तौ मे कर्म वीर्यम्।
आत्मा क्षत्रमुरो मम।।
पृष्ठीर्मे राष्ट्रमुदरमसौ ग्रीवाश्च श्रोणी।
उरू अरत्नी जानुनी विशो मेऽङ्गानि।।[7]

प्रस्तत मंत्र में पृष्ठ भाग को राष्ट्र कहा गया है जो समस्त जीवन का सुदृढ आधार है। अधिदैवत राष्ट्र के स्वरूप का निदर्शन कराता हुआ वेद कहता है–

राज्यसि प्राची। सम्राडसि प्रतीची। स्वराडस्युदीची। अधिपत्न्यसि बृहती।।[8]

इसी प्रकार अथर्ववेद में कहा गया है कि अधिदैव रूप से वर्तमान राष्ट्र को सविता, अग्नि, इन्द्र, बृहस्पति, मित्रावरूण आदि देवों द्वारा धारण किया जाता है। वरूण को राजा कहा गया है–

येन देवं सविस्तारं परि देवा धारयन्,
तेनैव ब्रह्मणस्पते परिराष्ट्राय धत्तन।
ध्रुवं ते राजा वरुणो ध्रुवं देवा बृहस्पतिः,
ध्रुवं इन्द्रश्चाग्निश्च राष्ट्रं धारयतां ध्रुवम्।।[9]

अथर्ववेद में राष्ट्रभृत् देवों को सूर्य के चारों ओर विचरण करते हुए बताया गया है।[10] कहा गया है कि जो राष्ट्रीभूत देवता सूर्य के अभिमुख होकर गति करते हैं, वे सम्यक् ज्ञान, सुमन वाने रोहित राष्ट्र को धारण करें। अथर्ववेद के 13वें काण्ड में रोहित का सविस्तार वर्णन है। मन्त्रों में आया हुआ राष्ट्र शब्द व्यष्टि और समष्टि से संवलित व्यापक आधार को सूचित करता है। राष्ट्र के रक्षक के रूप में क्षत्र अथवा क्षत्रिय की नियुक्ति की गई है, जिसके कर्म आश्रमव्यवस्था के अन्तर्गत नियन्त्रित किये गये हैं। अथर्ववेद के ब्रह्मचारी सूक्त में कहा गया है–

ब्रह्मचर्येण तपसा राजा राष्ट्रं विरक्षति।।

यहाँ ब्रह्मचर्य तप से तात्पर्य राष्ट्र के समग्र वृद्धिभाव से है तथा रक्ष् धातु संवरण, दान, व्यापन, हिंसा एवं रक्षा अर्थ वाली धातुओं का अर्थ ग्रहण किए हुए हैं। श्रीमद्भागवत में तेज, बल, धृति, शौर्य, तितिक्षा, औदार्य, उद्यम, स्थैर्य, ब्रह्मण्य, ऐश्वर्य को क्षत्रप्रकृतियाँ कहा है।[11] इन्द्र को प्रधान योद्धा के रूप में चित्रित किया गया है।[12] यजुर्वेद में आपोदेवी को राष्ट्रदा कहा गया है।[13] यजुर्वेद में सब कुछ यज्ञ से सम्पन्न होने की कामना है। राजा से सम्बन्धित आसन्दी, कुम्भी, सुरापानी आदि नामों का उल्लेख प्राप्त होता है।[14] अथर्ववेद में प्रजापति की पुत्रियों के रूप में सभा और समिति का उल्लेख[15] किया गया है–

सभा च समितिच्चावतां प्रजापतेर्दुहितरौ संविदाने।।

सभा को नरिष्टा एवं सभा में बैठने वालों को सभासद् कहा गया है तथा सभी की वाणी को संयत होने की कामना की गई है–

सभा विदुषां समाजः।
सर्वत्र भान्ति देवा यत्र सा सभा यद्वा समानरूपेण यद्वा सह।
समितिः संयन्ति संगच्छन्ते युद्धाय अत्रेति समितिः।
संग्रामः। सा ग्रामीणजनसभेत्यर्थः।
यद्वा संग्रामनामानि यज्ञनामानि भवन्तीति
यास्केनोक्तत्वात् समितिः शब्देन यज्ञ उच्यते।।[16]

वर्तमान में सभा, समिति शब्द मन्त्रिपरिषद् अर्थों में प्रयुक्त होता है। शासन कार्य में राजा को सब प्रकार से सहायता देने वाले मन्त्री होते हैं, राजा इन पर आश्रित रहता है, इनसे पथप्रदर्शन प्राप्त करता है, इन्हें रत्निन् भी कहा जाता है। ये राजकर्ता या राजकृत् कहे गये हैं।[17] जो राजा के लिए उपदेशक, राजपुत्रों व प्रजाओं के लिए शिक्षक, विचारमन्त्र में ऋषि, समाज के लिए पथप्रदर्शक और योद्धाओं के लिए अग्रगामी होते हैं उन्हें पुरोहित कहा गया है–

वयं राष्ट्रे जागृयाम पुरोहिताः।।

अथर्ववेद में पौरोहित्य कर्म वर्णित है।[18] ऐतरेय ब्राह्मण में यज्ञ करने वाले ब्राह्मण को पुरोहित बनाने के लिए कहा गया है। आधिभौतिक पुरोहित के स्वरूप का वर्णन करते हुए कहा गया है–

अग्निर्वाव पुरोहितः। पृथ्वी पुरोधाता, वायुर्वा पुरोहितोऽन्तरिक्ष पुरोधाता,
आदित्यो वाव पुरोहितो द्यौः पुरोधाता।
एष वै पुरोहित य एवं वेद अथ स तिरोहितो य एवं न वेद।
पुर एनम् अग्रे दधाति दधति इति वा पुरोहितः।।[19]

जिस प्रकार पृथ्वी आदि पिण्डों में पुरोहित अग्नि का प्राधान्य रहता है, उसी प्रकार राजा के यहाँ पुरोहित का प्रभाव रहता था। अग्नि, वायु, सूर्य का तीनों वेदों से क्रमशः सम्बन्ध है, अतः पुरोहित का वेदविद् होना आवश्यक माना गया है। बृहस्पति देवों के पुरोहित थे। तद्वत् मनुष्य राजा के पुरोहित होते हैं।

बृहस्पतिर्हे देवानां पुरोहितः तमन्वन्ये मनुष्य राज्ञां पुरोहिताः।।[20]

यजुर्वेद में भी बृहस्पति को पुरोहित कहा गया

है। ऐसे शासकों को क्रमिक उच्चता के अनुसार अधिराज, राजाधिराज, सम्राट्, स्वराट्, विराट्, सर्वराट् कहा गया है। अपने पद–गौरव प्रदर्शन के लिए राजसूय, वाजपेय, अश्वमेध, पुरुषमेध, सर्वमेध आदि यज्ञ करते थे। इनका विस्तार से वर्णन ब्राह्मणग्रन्थों में प्राप्त होता है। ऐतरेय ब्राह्मण में तत्कालीन शासनपद्धतियों का उल्लेख भी प्राप्त होता है।

स्वस्ति साम्राज्यं भौज्यं स्वाराज्यं वैराज्यं पारमेष्ठ्यराज्यं महाराज्याधिपत्य..... पृथिव्यै समुद्रपर्यन्ताया एकराडिति, तदप्येष श्लोकोऽभिगीयते।।

इन सभी शब्दों के मूल में राज् धातु है जिसका अर्थ दीप्त होना है। सम्राज् अर्थात् सम्यक् रूप से प्रकाशित होना, विराट् अर्थात् विशेष या विविध रूप से प्रकाशित होना। प्रकाशमान सम्राज् स्वयं एक ओर अद्वैत है, स्वराज् अवस्था में वह अपने स्व को ही विषय बना लेता है और एक बाह्य इदं रूप में देखकर अहमस्मि का अनुभव करता है। यही स्व विराज् अवस्था में पहुँचकर वि में परिवर्तित हो जाता है, यही विराज् के स्थान पर विराजानि बन जाता है।

प्राकृतिक पृथ्वी, अन्तरिक्ष और द्यौः के अधिपति क्रमशः अग्नि, वायु और आदित्य को माना गया है। सूर्य की त्रिलोकी रोदसी में सूर्य की प्रधानता है। सूर्य की अग्नि के अधीन उसी के विकास रूप से अन्तरिक्ष की अग्नि विद्युत् तथा पृथ्वी की अग्नि दोनों ही सूर्य से उत्पन्न हैं।

सूयाप्रसूतावग्नी तु दृष्टौ मध्यमपार्थिवौ।।

इस प्रकार सूर्य ही सबका अधिपति नियामक स्वराट् है, सूर्य प्राण ही इन्द्र है, फलतः स्वराट् है, सूर्य की शक्ति ही ब्रह्माण्ड मे शासन करती है। स्वयंभू एवं परमेष्ठी से ब्रह्म और विष्णु विराट् कहे गए हैं। इसी प्रकार प्राकृतिक व्यवस्था के आधार पर भौम त्रिलोकी की व्यवस्था हुई। भौम स्वर्ग के अधिपति इन्द्र माने गये हैं, अतः हमारी राजा आदि अवधारणाएँ वैदिक हैं। राजा अपने राज्य में स्वतंत्र होता था किन्तु अन्य राजाओं के सम्बन्ध में वह सम्राट् के अधीन माना जाता था। इसी प्रकार सम्राट् भी स्वराट् के अधीन समझा जाता था। इन्द्र त्रिलोक के अधिष्ठाता थे, इसका स्पष्ट उल्लेख ऋग्वेद में प्राप्त होता है।[21] वरुण को भी राजा कहा गया है।[22] वाक् सूक्त में परमेष्ठी मण्डल की अधिष्ठात्री आपो देवी स्वयं को राष्ट्री कहती है–

अहं राष्ट्री संगमनी।[23]

वेदमन्त्रों में आए हुए ग्राम, ग्रामणी, विश्, विशांपति, जन, जनपद, गोप्ता आदि शब्दों को देखकर सम्पूर्ण राजतन्त्र को पाँच भागों में बाँटा गया है– 1. गृह, 2. कुल, 3. जन, 4. जनपद, 5. राष्ट्र। इस प्रकार वैदिक मन्त्रों में आए हुए राष्ट्र, राष्ट्री, राष्ट्रभृत् आदि शब्द अपना व्यावक अर्थ रखते हैं। आध्यात्मिक और आधिदैविक राष्ट्र के स्वरूप को अभिमुख कर उससे समतुलित पार्थिव राष्ट्र–जीवन की योजना हमारे मनीषियों ने की है। राष्ट्र को ध्रुव रूप में स्थिर रखने के मन्त्र भी प्राप्त होते हैं। वैदिक राष्ट्रचिन्तन अहं भाव से ऊपर उठकर सर्वात्मभाव वाला था। वहाँ सभी के हित की कामना है। उनके चिन्तन में सूक्ष्मता से स्थूलता और स्थूलता से सूक्ष्मता की ओर गति–आगति करने वाले प्राणों की अभिव्यक्ति थी। अतः उन्होंने सबके कर्म, गति, वाणी, मन, चित्त और संकल्प के एक होने की कामना की। ऋग्वेद के दसवें मण्डल का अन्तिम संज्ञान सूक्त इन्हीं भावों को प्रदर्शित करता है।

समानो मन्त्रः समितिः समानी समानं मनः सह चित्तमेषाम्।
समानं मन्त्रमभिमन्त्रये वः समाने वो हविषा जुहोमि।।[24]

वर्तमान जगत् राष्ट्रवादी होने का तात्पर्य क्षेत्रविशेष अथवा वर्गविशेष के प्रति अपनी निष्ठा से समझने का प्रयास करता है, ऐसा राष्ट्रवाद स्वयं में अहं और अन्यों में विद्रोह के भावों को ही भर सकता है। अतः वैदिक राष्ट्र की व्यापक अवधारणा ही हमारे जीवन को सर्वांगपूर्ण बना सकेगी। मात्र स्वयं के हित की कामना न करते हुए सम्पूर्ण विश्व के कल्याण की कामना ही वैदिक राष्ट्र की वास्तविक अभिव्यक्ति है। जब वेद कहता है **'कृण्वन्तो विश्वमार्यम्'** तो इसका तात्पर्य किसी वर्गविशेष से नहीं अपितु समस्त विश्व के कल्याण से है।

अतः आइये हम ऐसे ही राष्ट्रवाद के पोषक और प्रेरक बनें... विश्व के कल्याण में अपने हित को देखें... स्वार्थभाव से विमुख हो परमार्थ भाव का चिन्तन करें, तब ही हम राष्ट्र के स्वरूप और उसकी शक्ति से सच्चे अर्थों में अवगत हो सकेंगे।

सन्दर्भ सूची :–

1. यजुर्वेद 22.22
2. आर्यसमाज का तीसरा नियम
3. ऋग्वेद 10.90.1
4. अथर्ववेद 19.42.1
5. पूर्ववत् 11.9.17–18
6. अमरकोश, मनुस्मृति 7.32, 7.109, 9.254, 10.61
7. यजुर्वेद 20.4–8
8. यजुर्वेद 15.10,12–14
9. अथर्ववेद 13.1.20, 6.88.2
10. ऋग्वेद 10.173.5
11. अथर्ववेद 13.1.35
12. श्रीमद्भागवत 11.17.17
13. ऋग्वेद 31.12.3
14. यजुर्वेद 10.3
15. यजुर्वेद 19.16
16. अथर्ववेद 7.13.1, 8.11.8–11
17. अथर्ववेद 7.13.21
18. अथर्ववेद 3.5.7
19. अथर्ववेद 3.19.11
20. ऐतरेयब्राह्मण 8.5.1
21. ऐतरेय ब्राह्मण 8.5.3
22. यजुर्वेद 20.11
23. ऋग्वेद 10.89.10
24. ऋग्वेद 1.25.5
25. ऋग्वेद 10.125.3
26. ऋग्वेद 10.191.3

सहायक ग्रन्थसूची–

1. ऋग्वेद भाष्य – स्वामी दयानन्द सरस्वती, वैदिक यन्त्रालय, अजमेर।
2. यजुर्वेद भाषा भाष्य – स्वामी दयानन्द सरस्वती, दयानन्द संस्थान, दिल्ली।
3. सामवेद भाष्य – ब्रह्ममुनि परिव्राजक विद्यामार्तण्ड, वैदिक यन्त्रालय, अजमेर।
4. अथर्ववेद भाष्य – प्रो. विश्वनाथ विद्यालंकार, वैदिक यन्त्रालय, अजमेर।
5. मनुस्मृति – महर्षि मनु, सं. प्रो. सुरेन्द्र कुमार, आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट, दिल्ली।
6. ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका– स्वामी दयानन्द सरस्वती, आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट, दिल्ली।
7. सत्यार्थप्रकाश – स्वामी दयानन्द सरस्वती, वैदिक यन्त्रालय, अजमेर।

Swadeshi Research Foundation A Monthly Journal of Multidisciplinary Research
International Peer Reviewed, Refereed, Indexing & Impact Factor - 5.2, Ex- UGC S.N. 4990
ISSN : 2394-3580, Vol. – 9, No. – 3, Jan. – 2022, Conference Special Issues
2022

सांस्कृतिक चेतना को उजागर करती हिंदी ग़ज़ल

प्रा. डॉ. नरसिंगदास ओमप्रकाशजी बंग
सहयोगी प्राध्यापक एवं अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, पुण्य श्लोक अहिल्यादेवी होलकर महाविद्यालय,
राणीसावरगांव, जि. परभणी (महाराष्ट्र)

मानव जीवन में संस्कारों का महत्व अनन्यसाधारण होता है। संस्कारों का जन्म उसकी संस्कृति व्दारा होता है। 'संस्कृति' शब्द का अर्थ है– परिष्करण या परिमार्जन की क्रिया। 'संस्कृति' व्दारा मानव की सहज स्वाभाविक प्रवृत्तियों का परिष्कार होता है, आचार विचारों का परिमार्जन होता है। बाबु गुलाबराय संस्कृति के संबंध में लिखते हैं ''संस्कृति शब्द का संबंध संस्कार से है जिसका अर्थ है संशोधन करना, उत्तम बनाना, परिष्कार करना।''[1] संस्कृति का संबंध मनुष्य की उदात्त वृत्तियों से होता है। भारतीय संस्कृति के उपकरणों के रूप में सत्य, अहिंसा, प्रेम, दया, त्याग, क्षमा, संयम, साधना, बंधुभाव, जनकल्याण, सहयोग, परोपकार, आदि को देखा जा सकता है। इस संस्कृति की ठोस आधारशीला यहाँ का दर्शन रहा है। भारत के वंदनीय ऋषि–मुनियों ने प्राणिमात्र के सुखों का विचार किया। सभी लोगों के सुख और समाधान के साथ जीवन की कामना उनके इस भाव में दिखाई देती है–

'सर्वे ऽ पि सुखिनः सन्तु, सर्वे सन्तु निरामयः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु, मा कश्चित् दुखःमाप्नुयात।।'

इन्हीं विशेषताओं के कारण विश्व की महानतम संस्कृतियों में भारतीय संस्कृति का नाम लिया जाता है।

हिंदी ग़ज़ल के लिए एक नई ज़मिन तैयार करने का काम दुश्यंत कुमार ने किया है। दुश्यंत कुमार के पूर्व भी हिंदी में अनेक कवियों व्दारा ग़ज़लें लिखी गई है। परंतु उनके व्दारा बनाया गया रास्ता आनेवाले नये ग़ज़लकारों के लिए पथ–प्रदर्शक रहा है। दुश्यंत कुमार के बाद जिन आधुनिक ग़ज़लकारों ने हिंदी ग़ज़ल को नई उँचाईयाँ प्रदान की है, उनमें डॉ. कुँअर बेचैन का योगदान अत्यंत महत्वपूर्ण है। एक गीतकार के रूप में हिंदी साहित्य के क्षेत्र में पदार्पण करनेवाले डॉ. कुँअर बेचैन ने ग़ज़लकार के रूप में ख्याती अर्जित की है। अब तक उनके तेरह ग़ज़ल संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं।

डॉ. कुँअर बेचैन ने अपनी ग़ज़लों में ग़ज़ल के परंपरागत भावों के साथ ही वर्तमान व्यवस्था में जीते हुए इन्सान की विभिन्न समस्याओं को उजागर किया है। एक ओर उनकी ग़ज़लों में प्रेम और सौंदर्य भरा है तो दूसरी ओर समाजिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक, आर्थिक, धार्मिक बोध और इन सब में फैली विसंगतियों तथा विद्रुपताओं पर करारा व्यंग्य मिलता है। भारतीय संस्कृति का यथार्थ चित्रण उनकी ग़ज़लों में दिखाई देता है। साथ ही वर्तमान समय की सांस्कृतिक स्थिति भी मिलती है–

''अब तो घर – घर में नई तहज़ीब की है रोशनी
अब कहाँ मिट्टी के दीपक, अब कहाँ कंदील है।''[2]

डॉ. कुँअर बेचैन के उपर्यक्त ग़ज़ल के शेर में मिट्टी के दीपक से तात्पर्य हमारी प्राचीन संस्कृति से है। इस नई सभ्यता के दौर में हमारी प्राचीन संस्कृति खोती जा रही है इस बात को उन्होंने जगह–जगह पर अपनी ग़ज़लों के माध्यम से व्यक्त किया है।

आज भारतीय संस्कृति के परम्परागत आदर्शों में बहुत परिवर्तन हुआ हैं। लोग एक–दूसरे से टूट रहे हैं। समाज में झूठ और फरेब को इस कदर स्थान मिल रहा है कि सच्चाई और इमानदारी पर चलने वालों को तिरस्कृत और अपमानित होना पड़ रहा है। आज की इस विसंगतियों को डॉ. कुँअर बेचैन इस प्रकार व्यक्त करते हैं –

''इधर आग है और धँआ है घरों में।
उधर कैचियाँ है, हमारे परों में।।
अभी झूठ हाकिम, हुआ है हमारा।
अभी सच खड़ा है, कई कटघरों में।।''[3]

वर्तमान समय में रिश्तों के संबंध में स्वार्थलोलुपता ने घर कर लिया है। अपनी स्वार्थ सिद्धि तक ही मनुष्य रिश्तों को निभा रहा है। कपडों की तरह आदमी रिश्ते बदलने लगा है। डॉ. कुँअर बेचैन इस भाव को अपनी एक ग़ज़ल में अभिव्यक्त करते हुए लिखते हैं –

''गैर बनकर रह रहा है, अब सगों के बीच में।
खून बहता ही नहीं अपनी रगो के बीच में।।
देखकर खूँखार चेहरा आज के इस दौर का।

गठरियाँ खुलने लगी है, खुद ही ठगों के बीच में।।''[4]

समाज में प्रेम, समर्पण तथा अपनापन की भावना नष्ट हो रही है। रिश्तों की गरिमा समाप्त हो रही है। संबंधों में अब पहले जैसी मधुरता नहीं है, उसकी जगह नफरत, घृणा और स्वार्थ ने ले रखी है। डॉ. कुँअर बेचैन के शब्दों में –

''प्यार, रिश्ते और वफा क्या खुबसुरत लफ़्ज थे।
किस कदर बदरंग अब इनके मआनी हो गये।।''[5]

आज गांव उजड़ रहे हैं और शहरों की भीड बढ़ रही है। महानगरीय जीवन के व्यवहार में अधिकतर छल, कपट और धोखाधड़ी का ही बोलबाला है। इस महानगरीय सभ्यता को लेकर डॉ. कुँअर बेचैन लिखते हैं–

''छा गया यह सोच सन्नाटा शहर में
क्यों पसीने को गया डाटा शहर में।
गाँव से चलकर शहर तक साथ आया
साँप ने अक्सर हमें काटा शहर में।''[6]

हमारे पर्व और त्योहार उल्लास के प्रतीक होते हैं। वे हमें सुखानुभूति और अनंदानुभूति दोनों की ओर ले जाते हैं। खुशियाँ प्रदान करने वाले इन सांस्कृतिक प्रतीकों की वर्तमान स्थिति से अवगत कराते हुए डॉ. कुँअर बेचैन लिखते हैं।

''ये मत पूछो हमको क्या–क्या दुनिया ने त्योहार दिए
मिली हमें अंधी दिवाली, गूँगी होली बाबूजी।''[7]

आरती और नमाज़ यह पुजाघरों के उपादान है। आरती और अजान से प्रेम और सौहार्द का वातावरण निर्माण होता है। परंतु डॉ. कुँअर बेचैन के शब्दों में यह दोनों मज़हबी वैमनस्य फैलाते हैं जो नफरत को जन्म देकर समाज में दंगे–फसाद कराते हैं–

''ऐ मज़हब! चलकर किसी का क़त्ल करने के लिए

आरती करके, कभी पढ़ के नमाज़ आएगा तू।''[8]

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि हमारा वर्तमान सांस्कृतिक जीवन पूरी तरह परिवर्तित हो गया है। भौतिक युग ने हमारे अध्यात्मिक जीवन को एक तरह से तहस–नहस कर दिया है। परिणामस्वरूप हमारे सांस्कृतिक जीवन में बिखराव आ गया है। डॉ. कुँअर बेचैन ने अपनी ग़ज़लों के माध्यम से आज की सांस्कृतिक विद्रुपता एवं विसंगतियों को मार्मिकता से अभिव्यक्त किया है। उनकी ग़ज़लों में वर्तमान सांस्कृतिक मूल्यों के अधःपतन का विस्तृत लेखा–जोखा प्रस्तुत हुआ है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. भारतीय संस्कृति, बाबू गुलाबराय, पृ. 03
2. आग पर कंदील, डॉ. कुँअर बेचैन, पृ. 17
3. रस्सियाँ पानी की, डॉ. कुँअर बेचैन, पृ. 58
4. आँधियों धीरे चलो, डॉ. कुँअर बेचैन, पृ. 41
5. कोई आवाज देता है, डॉ. कुँअर बेचैन, पृ. 43
6. शामियाने काँच के, डॉ. कुँअर बेचैन, पृ. 61
7. शामियाने काँच के, डॉ. कुँअर बेचैन, पृ. 80
8. दिवारों पर दस्तक, डॉ. कुँअर बेचैन, पृ. 72

Swadeshi Research Foundation A Monthly Journal of Multidisciplinary Research
International Peer Reviewed, Refereed, Indexing & Impact Factor - 5.2, Ex- UGC S.N. 4990
ISSN : 2394-3580, Vol. – 9, No. – 3, Jan. – 2022, Conference Special Issues
2022

काका कालेकर का यात्रा साहित्य

डॉ. मोनिका निझावन
व्याख्याता : हिन्दी साहित्य, महाराणा प्रताप महाविद्यालय, रावतभाटा

दत्तात्रेय बालकृष्ण कालेलकर (दिसम्बर 1885–21 अगस्त 1981) को भारतीय चिन्तन जगत काका कालेलकर के नाम से जानता हैं। उन्होनें अपने जीवन की शुरुवात क्रांतिकारी के रुप में की थी और अन्त किया समन्वय के साधक के रुप में। काका कालेलकर के व्यक्तित्व को किसी एक साँचे मे ढालना कठिन था। उनमें गहरे से गहरे और सूक्ष्म से सूक्ष्म जीवन रहस्यों का सहज भाव से आकलन करने की अद्भुत क्षमता थी।[1]

काका के जन्म के समय उनके पिता सतारा जिले के कलेक्टर के कार्यालय में हेड एकाउटेंट के पद पर थे। कार्य के सिलसिले में बालकृष्ण कालेलकर को अनेक देसी राज्यो की राजधानियों में जाना पड़ता था तो काका भी विधाभ्यास की चिन्ता किए बिना पिता के साथ चले जाते थे। इस प्रकार उन्हे अनेक राज्यो की राजधानियों में जाने का सयोग मिला और उनमे भ्रमण की प्रवृति पैदा हो गयी।

दूसरी ओर अंग्रेज अपनी नीति कैसे चलाते है, यह भी देखने का अनुभव प्राप्त हुआ। इस तरह क्रांति के नाम से देश में जो कुछ चल रहा वह भी निराशाजनक था। काका कालेलकर इस तरह से अपने आप को परास्त मानने लगे। इसी निराशा ने उन्हे आध्यात्मिक साधना की ओर उन्मुख किया। उन्होने प्रमुख तीर्थ स्थलों की यात्राएँ की।[2]

दक्षिण भारत में गोकर्ण एक प्रसिद्ध तीर्थ क्षेत्र जिसका माहात्मय काशी से भी ज्यादा माना जाता था जिसको देखना उनके जीवन की एक बहुत बडी रोमांचकारी यात्रा थी। यहॉ से लौटते समय वे उत्तर की ओर गोवा में मंगेशी नामक स्थान गए जो उनके कुटुम्ब के कुलदेवता का था। वँहा काका कालेलकर ने एक महीना बिताया था। काका कालेलकर हर यात्रा से बिल्कुल नए होकर लौटे। असल में काका की सही शिक्षा–दीक्षा इसी यात्रा रुपी पाठशाला से हुई। इन तीर्थो के अलावा उन्हें सांवतवाडी–मिरज, जत, रामदुर्ग मूघोल, सावनूर जैसी देशी रियासतें भी देखने को मिली। प्राकृतिक शोभा की दृष्टि से उन्हे सांवतवाडी रियासत गोवा और कारवार से भी निराली मालूम हुई।[3]

इतनी कम उम्र मे इतना सारा अनुभव पाना कम नही कहा जा सकता। सौभाग्य से कालेलकर को पिता के रुप में ऐसे शख्स मिले जो पाठशालाओं की शिक्षा से ज्यादा यात्राओं से मिलने वाली शिक्षा–दीक्षा का महत्व जानते थे। बचपन में पाए हुए घुमक्कडी संस्कारों को अब नए आयाम मिले और भारत दर्शन के द्वारा भारत भक्ति की उत्कंठा उनके दिमाग में जाग उठी। भारतीय संस्कृति के संबंध में उनके दिल में पहले से ही श्रद्धा भाव था। भारतीय संस्कृति को प्रतिष्ठित और पुनः स्थापित कर के उसके सामने विश्वविजय का जो आदर्श विवेकानन्द ने रखा था उसने काका कालेलकर को मोहित कर दिया। लेकिन भारत माता को स्वतन्त्र देखने के जो स्वप्न थें वे सब बेकार हो गए और उनको चारों ओर अंधेरा दिखाई देने लगा। अन्तर्मुख होकर वे अपनी निराशा के विरुद्ध लड़ते रहे और इसी निराशा के अंधेरे में उनकी आँखो के सामने हिमालय आ खडा हुआ। इस प्रकार राष्ट्रीय शिक्षा, देश की स्वतन्त्रता और अपनी गृहस्थी सब कुछ छोड़ कर हिमालय के लिए चल पड़े। [4]

जिस दिन काका बड़ोदा छोड़ कर प्रयाग यानी इलाहाबाद गए वह दिन अक्षय तृतीया का दिन था। प्रयाग काशी और गया इन तीर्थो की यात्रा को त्रिस्थली यात्रा भी कहते है और यही पर काका कालेलकर ने अपने पिता की अस्थियों का विसर्जन कर गया जी में पिता का श्राद्ध किया।[5] इसी समय में उन्होनें प्रयाग, काशी और गया में अज्ञान व अंधश्रद्धा का ही साम्राज्य फैला हुआ देखा तो दूसरी ओर पुरोहित का पाखंड, ढोंग दम्म मिथ्याचार। क्या यही वह हिन्दू धर्म है जिसके प्रति स्वामी विवेकानन्द ने मेरे मन में श्रद्वा पैदा की थी। इन प्रश्नों ने धीरे–धीरे मेरे मन में खोज का रुप ले लिया। अब यह तीर्थ यात्रा मामूली तीर्थ यात्रा नही रही, खोज यात्रा में रुपान्तरित हो गई।[6] इस प्रकार त्रिस्थली की यात्रा के बाद हिमालय यात्रा शुरु की। हिमालय तो हिमालय है। हिमालय के विषय में उनका अनुराग कभी कम नही हुआ। फिर बचपन से ही जो सृष्टि की ओर ईश्वर के आद्य अवतार के रुप में देखता आया था वह हिमालय के एक से एक भव्य और दिव्य दृश्यों की लालसा भला कैसे छोड़ सकता था। प्रकृति प्रेमी के लिए हिमालय मानों रत्नों की एक बडी खान है।[7]

काका कालेलकर हिमालय के सौन्द्रर्य पर मुग्ध थे। उन्होने सन् 1912–14 के बीच हिमालय की ढाई हजार मील की पैदल यात्रा की थी। डेढ दो साल वे हिमालय घूमते रहे। इस यात्रा में उन्होने जो देखा वह इतना भव्यतर था दिव्य और दिव्यतर था कि उसका आनन्द, अनुभव करना अकेले के लिए कठिन था। हिमालय के इस दिव्य दर्शन से उनका आंतरिक जीवन समद्ध हो गया था। फिर भी देश की स्वतन्त्रता के लिए कुछ करना ही चाहिये यह भावना बचपन से जाग्रत थी। इसी भावना ने उन्हें यहाँ चैन से बैठने नही दिया। स्वराज्य सेवा में एक भी प्रदेश ऐसा नही बचा होगा जहाँ एक से अधिक बार न गये हो।[8] काका ने बहुत यात्राएँ की पर सैरगाह की तरह जीवन का अनुभव करने के उददेश्य से नही की वे जहाँ भी गय वहाँ के लोगो के साथ एकरुप हो गए। वे तब तक देश के बाहर नही गये जब तक स्वराज्य नही मिला। वे बाहर जाने में संकोच महसूस करते थे कि गुलाम हूँ बाहर कैसे जाऊ? स्वराज्य मिलने के बाद वे लगभग सारी दुनिया घूम आए।[9] जैसा कि हिमालय के तीर्थो में जाने की प्रवृति हिन्दू मात्र में स्वाभाविक रुप से होती है इसका वैभव संसार के सभी सम्राटों के समस्त वैभवों से बढकर है।

राजा हो या रंक बूढा हो या जवान, पुरुष हो या स्त्री हर एक यह अनुभव करता है कि जीवन में अधिक नही तो कम से कम एक बार तो हिमालय के दर्शन अवश्य ही किये जाए। इस प्रकार हिमालय यात्रा में पशु, पक्षी, वनस्पति, नदी, सरोवर, पर्वत और बादल प्रकृति के सभी उन्मेंषो में उन्हें ईश्वर के दर्शन होते थे। वे सौन्दर्य के परम उपासक थे उनकी ऑखे जहाँ तहाँ सौन्दर्य को ढूढती रहती थी। सौन्दर्य ईश्वर का ही अविष्कार है जो सुन्दर है सत्य है शिव भी है। इस सत्य की प्रतीति काका कालेलकर को ही थी इसलिए रुप, गुण, भाव, प्रेम सब में उन्हे सौन्दर्य दिखाई देता है। [10]

इस प्रकार हिमालय की यात्रा वर्णन उनके अनुपम साहित्यकार की पहचान कराता है। हिमालय की यात्रा में उन्होने जो शब्द चित्र उकेरे है वे प्रेम चित्र ही है। जिस वस्तु से प्रेम हो जाता है उस वस्तु का प्रेम रहित विचार नही हो सकता।[11] काका साहेब ने बहुत यात्राए की थी। वे भारत यात्रा को भारत भक्ति और पूजा का एक प्रकार मानते थे। भगवान के गुण गाना जिस तरह नवधा भक्ति का एक प्रकार है। उसी तरह भारत की भूमि उसके पहाड और पर्वत श्रेणिया, नदिया और सरोवर आदि के वर्णनों द्वारा उनका परिचय देना भी वे भारत भक्ति का एक आनन्दमयी रुप मानते है। [12]

अतः जिस भक्ति भाव से काका कालेलकर ने सेतुबन्ध रामेश्वर से लेकर हिमालय की यात्रा की उसी भक्ति भाव से सन् 1950 से 1972 तक अफ्रीका, अमेरिका, यूरोप और एशिया महाद्वीपों के अनेक देशों की यात्राएँ की।[13]

1950 के पूर्व अफ्रीका के देशो की यात्रा का वर्णन करते हुए काका कालेलकर ने कहा कि इस भूमि पर अफ्रीका, यूरोप और एशिया की तीनो महाप्रजाओं का सहयोग चल रहा है, जो मानव जाति के भविष्य के लिए अत्यन्त महत्व का है। अफ्रीका में वे लगभग तीन महीने घूमें। वहॉ जो कुछ भी देखा, विचारा और कहा वह सब पडौसी धर्म से प्रेरित होकर कहाँ। यह एक ऐसा भू भाग था जहाँ करीब दस करोड़ मनुष्य ऐसे है, जो अब भी अपनी प्रागैतिहासिक काल की सामाजिक सांस्कृतिक प्राचीन परम्परा में ही रहते आए है अफ्रीका की यात्रा के बाद उनकी विदेश की यात्राएँ बडी तेजी से शुरु हो गई।[14] सन् 1952 में यूरोप की यात्रा की। स्विट्जरलैंड, फ्रांस, जर्मनी और हालैण्ड में घूमकर महायुद्ध के कारण यूरोप की जो बर्बादी हुई थी उसका प्रत्यक्ष दर्शन कर आए ओर यूरोप की प्रजा में फिर में सजीवन होने की कितनी जबरदस्त शक्ति है, यह भी देख आए। सन् 1954 में वे पहली बार जापान गए। कुल मिलाकर छः बार जापान की यात्रा की। जापान का नाम उन्होने बचपन में ही सुन रखा था, फिर भी जापान देखने की इच्छा कभी नही हुई थी।[15] इस प्रकार संसार के सभी देश देखने की इच्छा रही। पिछड़े अविकसित, उपेक्षित देशो का विशेष आकर्षण रहा। क्योंकी इन देशों के पास और कुछ हो या न हो उनकी अपनी संस्कृति तो है ही। पर जापान के बारे में मन में यही ख्याल था कि उसके पास अपना मौलिक कुछ भी नही था। जो लिया सब उधार लिया हुआ था। लेकिन प्रत्यक्ष देखने पर महसूस हुआ कि उधार की पूँजी लेने वाले भी यथासम्भव अपना विकास कर सकते है। जापान मे बौद्ध धर्म के बारह–तेरह पंथ है इस देश पर प्रकृति इतनी प्रसन्न थी कि उसके अनेक बार दर्शन करने पर भी आंखे कभी तृप्त नही होती थी। प्रकृति ने यंहा अपना शांत सौम्य स्वरुप जैसे चारो ओर बिखेर दिया, वैसे ही बीच–बीच में धधकते ज्वालामुखियों को देखकर अपने रुद्र स्वरुप के भी दर्शन कराए है।[16] 1957 में काका साहब जब दूसरी बार जापान गए तब लौटते समय चीन में तीन सप्ताह बिताए। इस यात्रा के बाद 1958 से पहले वेस्टइंडीज, ट्रिनीडाड, ब्रिटिश गुयाना और सूरीनाम की यात्रा की। ब्रिटिश गुयाना में

एक अद्भभुत प्राकृतिक दृश्य था। पोटारो नाम की एक नदी अपने चार सौ फुट चौडे पाट के साथ एक पहाड़ से लगभग साढे सात सौ फुट नीचे छलांग लगाती है। इसे केचूर प्रपात कहा जाता है। इस प्रपात को देखना जीवन का एक बहुत बड़ा आनन्द माना है। वहाँ से लौटते समय वे अमेरिका गए और वहॉ का नायगारा का प्रपात भी देखा और यहॉ पर गॉधीवादी नीग्रो वीर डा0मार्टिन लूथर किंग से मिले। मार्टिन ने अमेरीका की अलगाव नीति पर काका कालेलकर से चर्चा की जो गोरे चला रहे थे। इस चर्चा ने उनके जीवन पथ को नया मोड़ दिया और किंग की सादगी, निर्दोषता और उत्सुकता से बड़े ही प्रभावित हुए और उन्हे भारत आने का निमंत्रण दिया।[17]

सन् 1961 में काका कालेलकर ने रुस की यात्रा की। इस यात्रा में प्रसिद्ध लेखक विष्णु प्रभाकर भी उनके साथ थे। काका कालेलकर विश्व भ्रमण करते रहे और उसे शब्दबद्ध किया । उनके यात्रा वर्णनों में सहजता, स्पष्टता, अतिरेक अतिभावुकता कही भी नही थी। उनकी यात्रा वर्णन की शैली सीधी प्रांजल और आडम्बर रहित है। वाल्मीकि से लेकर रवीन्द्रनाथ की जो सांस्कृतिक धारा इस देश मे बहती आई है उसके काका कालेलकर सुयोज्य, सयोग्य उत्तराधिकारी थे। उनकी प्रसन्न गम्भीर शैली में पिछले पॉच हजार साल की संस्कृति की सौरभ भी महकती है।[18]

सन्दर्भ ग्रंथ सूची :–

1. आधुनिक भारत के निर्माता–रवीन्द्र केलेकर, पृष्ठ सख्या–3
2. कालेलकर ग्रंथावली (आत्म चरित्र)–काका कालेलकर, पृष्ठ सख्या–4
3. आधुनिक भारत के निर्माता–रवीन्द्र केलेकर, पृष्ठ सख्या–63
4. आधुनिक भारत के निर्माता–रवीन्द्र केलेकर, पृष्ठ सख्या–233
5. भारतीय साहित्य के निर्माता–विष्णु प्रभाकर, पृष्ठ सख्या–18
6. आधुनिक भारत के निर्माता–रवीन्द्र केलेकर, पृष्ठ सख्या–238
7. आधुनिक भारत के निर्माता–रवीन्द्र केलेकर, पृष्ठ सख्या–245
8. आधुनिक भारत के निर्माता–रवीन्द्र केलेकर, पृष्ठ सख्या–250
9. भारतीय साहित्य के निर्माता–विष्णु प्रभाकर, पृष्ठ सख्या–65
10. कालेलकर ग्रंथावली (प्रवास भारत)–काका कालेलकर, पृष्ठ सख्या –43
11. आधुनिक भारत के निर्माता–रवीन्द्र केलेकर, पृष्ठ सख्या–529
12. आधुनिक भारत के निर्माता–रवीन्द्र केलेकर, पृष्ठ सख्या–532
13. आधुनिक भारत के निर्माता–रवीन्द्र केलेकर, पृष्ठ सख्या–535
14. आधुनिक भारत के निर्माता–रवीन्द्र केलेकर, पृष्ठ सख्या–539
15. आधुनिक भारत के निर्माता–रवीन्द्र केलेकर, पृष्ठ सख्या–536
16. आधुनिक भारत के निर्माता–रवीन्द्र केलेकर, पृष्ठ सख्या–541
17. आधुनिक भारत के निर्माता–रवीन्द्र केलेकर, पृष्ठ सख्या–548
18. आधुनिक भारत के निर्माता–रवीन्द्र केलेकर, पृष्ठ सख्या–532

Swadeshi Research Foundation A Monthly Journal of Multidisciplinary Research
International Peer Reviewed, Refereed, Indexing & Impact Factor - 5.2, Ex- UGC S.N. 4990
ISSN : 2394-3580, Vol. – 9, No. – 3, Jan. – 2022, Conference Special Issues
2022

प्राचीन भारतीय पुराकथाओं में नीतिगत उपदेश एवं शिक्षा

डॉ. हिमा गुप्ता
सहायक आचार्य, संस्कृत, राजकीय कला महाविद्यालय, कोटा (राज.)

वेदों के कर्म और ज्ञान के क्रमिक विकास को क्रमशः ब्राह्मण ग्रंथों और उपनिषदों ने विरासत के रूप में प्रस्तुत किया। धीरे–धीरे ब्राह्मण–ग्रंथ पुरोहित वर्ग और उपनिषद्–ग्रंथ संत समाज तक सीमित होते गये और जनसामान्य को इनसे दूर रखा जाने लगा। उसी समय जैन और बौद्ध सम्प्रदायों का उदय हुआ, जो वैदिक कर्मकाण्ड की रूढ़िवादिता और वर्ग एवं जातीय व्यवस्था के विरोध में जनता में प्रतिष्ठित हुआ। सनातन परम्पराओं को उदार एवं जन–सुलभ बनाने के लिए भारतवर्ष में वैदिक धर्म के पुनः संस्कार के रूप में पौराणिक धर्म का आविर्भाव हुआ। परम्पराओं के आदर्शों से युक्त तथा सुगम धर्माचरण, जो सर्वसामान्य के लिए ग्राह्य एवं उपयोगी था, उसका प्रवर्तन हुआ। अब वैदिक पुरोहितों का स्थान पंडितों ने ले लिया। धर्म, कर्म, साधना, रीति, परम्परा आदि की दृष्टि से वेदों से सर्वथा परिवर्तित व्यवस्था एवं परिस्थितियों ने विकास किया। वर्ण संकीर्णता और जातिगत भेद–भाव के प्रति विद्रोह की भावना के कारण जो आध्यात्मिक तथा सामाजिक उथल–पुथल भारत में हुई, उसके परिणामस्वरूप नई आचार संहिता का प्रवर्तन कर मानवमात्र में समानता की स्थापना करना पुराणों का एक श्रेष्ठ कार्य था। इस दृष्टि से पुराण साहित्य वस्तुतः मानवधर्म के प्रतिपादक ग्रंथ हैं, जिन्होंने शूद्रों, स्त्रियों, पतितों और दासों के लिए एक ऐसे उदात्त धर्म की स्थापना की, जिसका अनुसरण करता हुआ सर्वसामान्य स्वयं का विकास कर सकता था। व्यक्ति स्वातंत्र्य पर आधारित होने के कारण ही पुराण श्रेष्ठ एवं वरणीय माने गये हैं।

यद्यपि भारतीय साहित्य में पुराणों की प्राचीनता वेदों जितनी प्राचीन है। अथर्ववेद में कहा गया है कि पुराण, ऋक्–साम–छंद–यजुष् के साथ ही आविर्भूत हुए –

ऋचः सामानि छंदांसि पुराणं यजुषा सह।

उच्छिष्टाज्जज्ञिरे सर्वे दिवि देवादिविश्वतः।।[1]

विपुलकाय धार्मिक साहित्य के निर्माण और विकास का महत्वपूर्ण घटक हैं– पुराण। यही नहीं ये भारतीय आचार शास्त्र और दर्शनशास्त्र के विश्वकोश हैं। प्राचीन भारत के अनेक ऐतिहासिक एवं भौगोलिक तथ्य पुराणों से प्राप्त होते हैं तथा इनमें उच्चकोटि का काव्य समाहित है। भागवतपुराण को विंटरनित्ज ने एक उत्कृष्ट साहित्यिक रचना स्वीकार किया है।[2] पुराणों का मुख्य उद्देश्य उस वर्ग को यथा– स्त्रियों औा शूद्रों को शिक्षा प्रदान करना था, जिन्हें वेदों के अध्ययन का अधिकार प्राप्त नहीं था। यही नहीं वेदों के ज्ञान हेतु भी पुराणों के उपबृंहण को आवश्यक माना गया–

इतिहासपुराणाभ्यां वेदं समुपबृंहयेत्।

बिभेत्यल्पश्रुताद् वेदो मामयं प्रहरिष्यति।।[3]

कौटिल्य ने पुराणों की इतिहास के विषयों में गणना की है–

पुराणमितिवृत्तमाख्यायिकोदाहरणं
धर्मशास्त्रमर्थशास्त्रं चेतीतिहासः।[4]

'इतिवृत्त' किसी ऐतिहासिक घटना को कहा जाता है तथा 'पुराण' का अर्थ 'पुरातन आख्यानों से संबंधित एवं पारम्परिक विषय' किया जा सकता है। वास्तव में पुराण और इतिहास स्वतंत्र विषय हैं अतः पुराण को इतिहास नहीं कहा जा सकता। यह निर्विवाद है कि वेदों की भाँति 'पुराण' शब्द भी साहित्य की एक विधा का वाचक है–

पुराणन्यायमीमांसाधर्मशास्त्रांगमिश्रिताः।

वेदाः स्थानानि विद्यानां धर्मस्य च चतुर्दश।।[5]

'पुराणम् पंचलक्षणम्' में उल्लिखित सर्ग, प्रतिसर्ग, वंश, मन्वन्तर तथा वंशानुचरित के साथ ही पुराणों में विभिन्न प्रकार के अन्य वर्णन भी प्राप्त होते हैं। इनमें आचार शास्त्र, धर्मशास्त्र सहित दार्शनिक अंशों का भी बाहुल्य है। पुराणों के सभी विषय कथोपकथन के ढंग पर लिखे गये हैं। किसी ऋषि ने दूसरे ऋषि से सुना और किसी अन्य से कहा। उस ऋषि ने भी किसी देवता से सुना था और उस देवता ने ब्रह्मा से। इस प्रकार पुराण साहित्य विषय परम्परा से मौखिक रूप में या शिष्य परम्परा के क्रम से विकसित होते रहे। पुराणों में सभी प्रकरणों का विस्तार कथाओं के माध्यम से किया गया है। प्राचीन होने के कारण इन्हें 'पुराकथा' कहा जा सकता है। प्रायः कथाओं की माला के रूप में

गुम्फित ये कथाएँ वैदिक काल से प्रचलित होती रहीं है तथा श्रुति परम्परा से आगे विस्तार प्राप्त करती रही हैं।

'पुराकथा' शब्द का सम्बन्ध ग्रीक शब्द मिथोस् (Mythos) से माना जा सकता है, जिसका तात्पर्य 'कहानी अथवा कथन' है। कथाएँ प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से वर्णनात्मक होती है और किसी न किसी उद्देश्य को पूर्ण करने के लिए उनका विकास होता है। 'पुराकथा' स्वयं के प्रचार के पूर्ण यौवनकाल में उस युग का सत्य मानी जाती रही है या किसी सामाजिक उद्देश्य की पूर्ति के लिए अथवा किसी पारलौकिक विश्वास को मूर्तरूप देने के लिए ही इस प्रकार की वर्णनात्मक पुराकथाओं का विकास होता है।

मेरा मानना है कि जिस प्रकार कोई नीतिकथा बालमन पर गहरा प्रभाव डालती है, इस तथ्य के प्रकाश में धार्मिक प्रजा को नीतिमार्ग पर प्रेरित करने, उसे अलौकिक तत्व के चमत्कार एवं गुणों के प्रति श्रद्धा एवं निष्ठा युक्त रखने तथा विशिष्ट सम्प्रदाय की परम्पराओं को अक्षुण्ण बनाये रखने के लिए ही इन पुराकथाओं का विकास किया गया है।

भारतीय वाङ्मय में पुराकथाओं का विकास वैदिक काल से ही प्रारम्भ हो जाता है[6], परन्तु उनका पूर्ण कथात्मक विकास पुराणों में प्राप्त होता है। इन पुराकथाओं के अध्ययन से ज्ञान होता है कि मानव समाज में व्याप्त भय के कारणों के बौद्धिक विश्लेषण में परिवर्तनों के फलस्वरूप विभिन्न प्रकार की पुराकथाओं का निर्माण होता है और वे अनेक प्रकार के भय सार्वजनीन हो जाते है। भय में सहानुभूति प्राप्त करने की प्रवृत्ति होती है, जिससे भय की निवृत्ति हो जाये यद्यपि भय और सहानुभूति दो विरोधी प्रवृत्तियाँ हैं तथापि मानव मन में दोनों के प्रति चुम्बकीय आकर्षण होता है। यही प्रवृत्ति पुराकथाओं के निर्माण और विकास में कार्य करती है।

भारतीय पुराकथाओं में सृष्टि के निर्माण और विकास संबंधी कथाएँ प्राप्त होती हैं। भारत की धर्मप्राण जनता की आस्थाओं एवं निष्ठाओं के अनुरूप ये प्रायः धार्मिक हैं और अवतार मूलक या देवतामूलक हैं, जिनका प्रधान उद्देश्य आध्यात्मिक विचारों का प्रतिपादन करना है। वस्तुतः वैदिक सकाम यज्ञानुष्ठानों ने ही पुराणों की देवतामूलक भक्तिभावना को जन्म दिया है तथापि अनेक नीतिगत उपदेश भी इन कथाओं के अन्तर्गत प्राप्त होते हैं, जिनको ग्रहण करने से मानव जीवन में वैयक्तिक दुःखों का उन्मूलन किया जा सकता है तथा जीवजगत् को जानने, समझने की दृष्टि का विकास भी होता है। चूँकि वैयक्तिक भय और दुःख समाज में व्याप्त होते हैं अतः पुराकथाओं में उपदेशात्मक अंश का विकास दो कारणों से होता है– प्रथम, दार्शनिक चिन्तन का प्रभाव तथा द्वितीय, सामाजिक व्यवस्था।

दुःख का निवारण, सुख प्राप्ति के साधन, अवगुणों से पतन, धर्म का पालन, ज्ञान साधना, दाम्पत्य धर्म का निर्वहन, राजधर्म और लोक रज्जन इत्यादि अनेक विषयों पर इन कथाओं में विचार किया गया है। वस्तुतः मानव समाज में ही जीवन व्यतीत कर सकता है और वहाँ वह अनेक व्यक्तियों के सम्पर्क में आता है। किसके साथ सम्पर्क उसके लिए कल्याणप्रद अथवा दुःखप्रद हो सकता है। इसका विवेचन एवं उपदेश पुराकथाओं के माध्यम से किया गया है।

सौभरि मुनि, राजा ययाति, पराशर ऋषि, गौतम ऋषि, सोमदत्त ब्राह्मण, देवराज इन्द्र, राजा हरिश्चन्द्र, महर्षि दधीचि, आडी और वक, राजा वेन आदि अनेक कथाएँ मानव मस्तिष्क को उन सभी कृत्यों अथवा परिणामों से दूर रखने के लिए प्रेरित करती हैं, जिनसे मानव की सुख, शान्ति एवं समृद्धि सुरक्षित नहीं है।

1. **सौभरि ऋषि**[7] – विषयों में संग बुद्धि को तद्नुकूल विचारों से युक्त कर देता है और विषयाकारा बुद्धि अन्ततः दुःख का कारण बन जाती है। यमुना क्षेत्र में मत्स्यराज को कामकेलि करते हुए सौभरि ऋषि ने देखा और बाल्यकाल से ही मोक्ष साधना में रत उनके मन में भोगलालसा उत्पन्न हुई। अयोध्या के राजा मान्धाता के पचास कन्याएँ थी। उनके पास जाकर ऋषि ने उनसे एक कन्या स्वयं के लिए मांगी। राजा ऋषि के शाप से भयभीत था, अतः मना नहीं कर सकता था परन्तु जीर्णदेह, ऋषि को अपनी कन्या प्रदान नहीं करना चाहता था। उपाय सोचकर मान्धाता ने कहा कि कुल की रीति के अनुसार कन्या स्वयं सत्कुलोत्पन्न वर का वरण करती है, उसी को दी जाती है। सौभरि राजा का अभिप्राय समझ गये। उन्होनें राजा के अन्तःपुर में जाने की अनुमति लेकर स्वयं को युवा एवं रूपवान् बना लिया। अन्तःपुर में राजा की सभी कन्याओं ने सौभरि का वरण करना चाहा। मान्धाता को अपने वचनानुसार सभी का विवाह ऋषि से करना पड़ा। ऋषि ने अपने क्षेत्र में आकर तेजोबल से सबके लिए पृथक–पृथक भवन बनवा दिये और विलास में रत रहने लगे। उनके अनेक

पुत्र–पौत्रादि हो गये। बड़े कुल में कलह होने लगा और अत्यधिक ममता के कारण उनका जीवन दुःखपूर्ण हो गया। कुछ समय पश्चात् अपनी अवस्था के प्रति उनके मन में निर्वेद हुआ। वे जान गये कि वर्षों की तपस्या भोगरत मत्स्य के दर्शन के कारण नष्ट हो रही है। तप करने वाले मनुष्य को ऐसे रागमय प्रसंग से दूर रहना चाहिये था। अन्त में ऋषि संसार त्याग कर वन में चले गये। कठोर तपस्या करते हुए देह त्याग कर परब्रह्म में लीन हो गये। इस पुराकथा के द्वारा विषयों में आसक्ति को दुःखों का कारण बताया गया है–

निसंगता मुक्तिपदं यतीनां संगादशेषः प्रभवन्ति दोषाः।

आरूढयोगो विनिपात्स्यतेऽधस्संगेन योगी किमुताल्पसिद्धि।।[8]

2. **राजा ययाति**[9] – विषयों को भोगने की लिप्सा कभी समाप्त नहीं होती। मनुष्य सदा अतृप्त रहता है। जैसे–जैसे वह विषयों को अधिकाधिक भोगता जाता है, वैसे–वैसे उसकी उन भोगों के प्रति आसक्ति बढ़ती जाती है, जो अन्ततोगत्वा दुःखातिरेक को उत्पन्न करती है। राजा ययाति की पुराकथा इस सत्य को उद्घाटित करती है–

न जातु कामः कामानामुपभोगेन शाम्यति।

हविषा कृष्णवर्त्मेव भूय एवाभिवर्धते।।[10]

चन्द्र वंश के राजा नहुष के छः पुत्रों में से ययाति को राज्याधिकार प्राप्त हुआ। ययाति का विवाह शुक्राचार्य की पुत्री देवयानी से हुआ। देवयानी के साथ उसकी सखी तथा असुरराज वृषपर्वा की पुत्री शर्मिष्ठा भी दासी के रूप में ययाति को प्राप्त हुई। शुक्राचार्य ने ययाति से प्रतिज्ञा ली कि वह देवयानी के अतिरिक्त किसी अन्य स्त्री से सम्बन्ध स्थापित नहीं करेगा परन्तु ययाति को देवयानी से दो पुत्र तथा शर्मिष्ठा से तीन पुत्र प्राप्त हुए। इस प्रकरण का पता चलने पर वचनभंग के कारण शुक्राचार्य ने ययाति को शुक्रहीन तथा वृद्ध होने का शाप दिया।

ययाति ने अपने वार्धक्य को पुत्रों में से किसी को दान कर उसका यौवन प्राप्त करना चाहा परन्तु पुरू के अतिरिक्त अन्य कोई पुत्र इसके लिए सहमत नहीं हुआ। यद्यपि पुरू पुत्रों में सबसे कनिष्ठ था परन्तु ययाति ने राज्याधिकार पुरू को प्रदान किया और स्वयं यौवन का सुख भोगते रहे। बहुत समय तक भी भोगों को भोगने के उपरांत भी ययाति को तृप्ति नहीं हुई–

या दुस्त्यजा दुर्मतिभिजीर्यतो याम जीर्यते।

तां तृष्णां दुःखनिर्वहा शर्मकामो द्रुतं त्यजेत्।।[11]

ययाति को वासनाओं से तृप्ति न मिलने पर घृणा हो गई और पुरू का यौवन लौटा कर वैराग्य धारण कर लिया। उन्हें वास्तविकता का ज्ञान हुआ–

भोगा न भुक्ता वयमेव भुक्ताः तपो न तप्तं वयमेव तप्ताः।

कालो न यातो वयमेव याताः तृष्णा न जीर्णा वयमेव जीर्णाः।।[12]

3. **पराशर ऋषि**[13] – पराशर ऋषि वाष्कल और याज्ञवल्क्य के शिष्य थे। पराशर ऋषि के पिता को राक्षस कल्माषपाद ने खा लिया। यह जानकर पराशर अत्यन्त क्रूद्ध हो गये और उन्होंने राक्षसों के समूल नाश के लिए राक्षससत्र नामक यज्ञ प्रारंभ किया। उस यज्ञ में एक–एक करके राक्षस भस्म होने लगे। ऐसे में ऋषि वसिष्ठ ने पराशर ऋषि के पास पहुँचकर उनसे वह यज्ञ रोकने का निवेदन किया और अहिंसा का उपदेश किया–

संचितस्यापि महता वत्स क्लेशेन मानवैः।

यशसस्तपसश्चैव क्रोधो नाशकरः परः।।[14]

क्रोध ज्ञान को हर लेता है। अज्ञानमयी प्रवृत्तियों से दुःखों का सागर हिलोरे मारता है, अतः मनुष्य को क्रोध का त्याग कर देना चाहिये। श्रीमद्भगवद्गीता में भी काम और क्रोध को अनर्थ और पाप का कारण माना गया है–

काम एष क्रोध एष रजोगुणसमुद्भवः।
महाशनो महापाप्मा विद्ध्येनमिह वैरिणम्।।[15]

4. **ब्राह्मण सोमदत्त**[16] – अहंकार से मनुष्य का विवेक नष्ट हो जाता है और विवेकहीन वह, उचित–अनुचित का निर्णय नहीं कर पाता। इसी कारण सकल साधन सम्पन्न होकर भी दुःख प्राप्त करता है–

अहंकार विमूढानां विवेको नैव जायते।
ऐश्वर्यमदमत्तानां क्षुधितानां च कामिनाम्।।[17]

मदोन्मत्त होने कारण ही वह पतन को प्राप्त करता है। एक बार सोमदत्त ब्राह्मण ने अहंकार के वशीभूत होकर ऋषि गौतम को प्रणाम नहीं किया। अतः उसे अगले जन्म में राक्षस योनि प्राप्त हुई–

गुर्ववज्ञा कृता येन राक्षसत्वं नियुक्तवान्।
ज्ञानतो अज्ञानतो वापि योऽवज्ञां कुरूते गुरोः।।[18]

5. **गौतम ऋषि**[19] – ईर्ष्या एक ऐसा विकार है, जिससे भी व्यक्ति का पतन होता है। ईर्ष्या से ग्रस्त मनुष्य सामने वाले की हानि करने के लिए छल–कपट करता है, परन्तु उसका परिणाम अच्छा नहीं होता। प्राचीन काल में ऋषि गौतम ने तपस्या के द्वारा वरूण से वर प्राप्त किया और इसके कारण उनके आश्रम में जल की कमी नहीं थी। अन्य ब्राह्मण गौतम के प्रति ईर्ष्या भाव रखने लगे। इन्द्र के कोप के कारण अनावृष्टि की स्थिति में विवशतावश ब्राह्मणों ने देवारूवन में गौतम के आश्रम में शरण ली। उनके आश्रय में उन ब्राह्मणों को कष्ट नहीं हुआ परन्तु गौतम की ख्याति चारों ओर फैलता देख वे ईर्ष्या से और भी अधिक दग्ध हो गये। उन्होंने गौतम ऋषि के मान–मर्दन का विचार किया और एक मायावी गौ ऋषि को प्रदान की। संरक्षण के लिए गौतम ऋषि के हाथ लगाते ही वह मर गई। गौतम गौहत्या के पाप के भागी हुए। इस पास से मुक्ति के लिए उन्होने तप किया। अन्ततः ब्राह्मणों की छल–नीति को जानकर उन्हें शाप दिया।

वराह पुराण में भी यह कथा प्राप्त होती है। वहाँ वे मायावी गौ शाण्डिल्य ऋषि के आश्रम में देखते हैं।[20] शिवपुराण में यह कथा कुछ भिन्नता से प्राप्त होती है।[21] यहाँ ऋषि गणेश की स्तुति करते हैं और निवेदन करते हैं कि वे गौतम ऋषि को हानि पहुँचायें। विवश होकर गणेश दुर्बल गौ का रूप धर कर ऋषि गौतम के खेत में जाते हैं। गाय को फसल चरते देखकर ऋषि छोटा सा तृण लेकर उसे हटाने आते हैं किन्तु तिनके का स्पर्श होते ही गाय की मृत्यु हो जाती है। गौ हत्या का भागी बता वे ब्राह्मण गौतम ऋषि को अनेक विकट प्रकार के प्रायश्चित्त करने के लिए कहते हैं और किसी प्रकार उनका पीछा नहीं छोड़ते। अन्त में शिव की स्तुति करने पर उन्हें गंगा–अवतरण का वर प्राप्त होता है तथा ईर्ष्यावश किये गये इस अनुचित कर्म की परिणति ब्राह्मणों को शाप के रूप में होती है। इस कथा का उपदेश यही है कि विद्वान भी ईर्ष्यावश नितान्त हेय एवं सुखसाधनहीन जीवन प्राप्त कर अपने पद से भ्रष्ट हो जाते हैं।

6. **राजा हरिश्चन्द्र**[22]– सूर्यवंश के राजा त्रिशंकु चक्रवर्ती सम्राट थे, जिन्हें ऋषि विश्वमित्र ने अपने योगबल से सशरीर स्वर्ग भेजने का प्रयास किया था। राजा हरिश्चन्द्र इन्हीं त्रिशंकु के पुत्र थे। वे धर्मात्मा, सत्यपरायण तथा दानी थे। राजा हरिश्चन्द्र के धवलयश के तीनों लोकों में प्रसार से देवराज इन्द्र ईर्ष्यालु हो उठे और महर्षि विश्वामित्र से उनकी परीक्षा लेने के लिए प्रार्थना की। विश्वामित्र ने उनके सत्यव्रत को भंग करने के लिए समस्त राज्य का दान, एक हजार स्वर्ण मुद्रा की दक्षिणा रूप दो परीक्षा ली। अंतिम परीक्षा में पुत्र के श्मशानान्त वस्त्र के लिए उनकी पत्नी ने अपने वस्त्र का एक भाग दिया। अन्त में धर्मपालन की इस दृढ़ता को देखकर उन्हें इन्द्र का पद प्राप्त हुआ।

इस कथा का उपदेश यही है कि अनेक विपत्तियों और यातनाओं को सहन करके भी सत्य का मार्ग नहीं छोड़ना चाहिये। जीवन में सत्य का पालन और धर्माचरण श्रेयस्कर होता है।

7. **आडी और वक**[23] – एक बार बारह वर्ष तक महर्षि वसिष्ठ ने उदकवास किया। जब वे बाहर आये तो उन्हें पता चला कि इन्द्र के कहने पर विश्वामित्र ने हरिश्चन्द्र को यातनाएँ सहन करने के लिए विवश किया है। सम्पूर्ण वृतान्त को जानकर ऋषि वसिष्ठ अत्यन्त क्रुद्ध हुए और उन्होंने विश्वामित्र को बगुले की योनि प्राप्त हो जाने का शाप दिया। इस प्रकरण को जानकर विश्वामित्र भी क्रुद्ध हो गये और उन्होंने भी वसिष्ठ को आडी योनि में चले जाने का शाप दे दिया। इस प्रकार दोनों ऋषियों को पक्षियों की योनि प्राप्त हुई। आडी और वक बनते ही दोनों में युद्ध प्रारम्भ हो गया। यह युद्ध उत्तरोत्तर भयंकर होता गया। उसे देखकर सम्पूर्ण जगत् में हाहाकार मच गया। प्रजापति ब्रह्मा ने देवताओं सहित उपस्थित होकर दोनों को समझाने का प्रयत्न किया पर युद्ध से दोनों ही को विरत न कर सके। अन्त में ब्रह्मा ने उनके पक्षों का हरण कर लिया। पंखों के हटते ही महर्षियों को पूर्वदेह पूर्ववत् प्राप्त हो गये और ब्रह्मा के उपदेश दिये जाने पर वे क्रोध की तामसिक वृत्ति से विरत हुए। क्रोध तामसिक होता है, अज्ञान के आवरण से आवृत्त करता है। इस कारण विवेक नष्ट हो जाता है और व्यक्ति पतन को प्राप्त करता

है।

8. **महर्षि दधीचि**[24] – भारतीय संस्कृति में तप, तपोवन और त्याग की उच्चतम महिमा का स्वरूप दिखाई देता है। संरक्षण का अंतिम मूल्य भी त्याग ही माना हाता है– **''तडागोदरसंस्थानां त्याग एव हि रक्षणम्''।** परमार्थ के लिए किया गया त्याग महान् प्रतिष्ठा को प्राप्त करता है। महर्षि दधीचि की कथा से यही शिक्षा प्राप्त होती है।

ब्रह्मा से वर प्राप्त करके असुरराज वृत्र अपराजेय हो गया। उसने देवलोक पर आक्रमण किया और इन्द्र को पराजित कर देवलोक का अधिपति हो गया। अन्त में देवगणों ने नारायण भगवान् की स्तुति की और वृत्रासुर के वध की प्रार्थना की। नारायण ने उन्हें महर्षि दधीचि के पास जाने का परामर्श दिया। उनकी इच्छा से प्राप्त शरीर की हड्डियों से विश्वकर्मा ने एक आयुध बनाया और उस 'वज्र' नामक आयुध से इन्द्र के द्वारा वृत्रासुर का वध हुआ। ब्रह्मपुराण में उल्लिखित यह पुराकथा महर्षि दधीचि के महान् त्याग की प्रतिष्ठा स्थापित करती है।

इस कथा का प्रतीकात्मक रूप से एक और अर्थ लिया जाता है। वृत्रासुर के तीन सिर मन, वचन और कर्म हैं। ये तीनों ही विषम हैं और एक नहीं हो पाते। भगवद् भक्ति की ओर अग्रसर होकर ही यह वृत्रासुर मुक्ति का मार्ग प्राप्त कर सकता है। अतः प्रयत्नपूर्वक ज्ञान और पवित्रता सहित दृढ़ संकल्प धारण करना चाहिये। यही महर्षि दधीचि और उनकी अस्थियाँ हैं। वज्र सदृश कठोर संकल्प से ही मन वचन और कर्म का अभिमान गलता है और धीरे–धीरे मनुष्य अपने शुद्ध–स्वरूप को प्राप्त करता है।

9. **देवराज इन्द्र**[25] – गुरू का आदर–सत्कार करना चाहिये। उनके प्रति श्रद्धा रखनी चाहिये। किसी प्रकार भी उनका निरादर नहीं करना चाहिये। कारण कि माता एवं पिता के बाद गुरु का स्थान सर्वश्रेष्ठ होता है – **आचार्यदेवो भव**। ज्ञान अथवा अज्ञान में भी गुरू की अवज्ञा करने पर बुद्धि, विद्या एवं सत्क्रिया का विनाश हो जाता है। भागवतपुराण की पुराकथा में इन्द्र के द्वारा देवगुरू बृहस्पति के अपमान का प्रसंग आया है। त्रिलोकों का ऐश्वर्य प्राप्त कर इन्द्र को अभिमान हो गया और इस कारण वे प्रायः धर्ममर्यादा एवं सदाचार का उल्लंघन करते रहे। एक बार उनकी सभा में देवगुरु बृहस्पति आये परन्तु इन्द्र ने उन्हें देखकर भी अनदेखा कर दिया और स्वागत नहीं किया। बृहस्पति इन्द्र के मद दोष को समझकर सद्यः ही घर चले गये। बाद में इन्द्र ने उन्हें मनाने का प्रयास किया पर वह सफल न हो सका। उनकी अनबन को जानकर असुरगण अपने गुरु शुक्राचार्य के पास गये और निस्तेज देवों पर आक्रमण की योजना बनाने लगे। यह जानकर देवगण भी ब्रह्माजी के पास गये और सहायता का निवेदन किया। तब ब्रह्माजी ने गुरु के अपमान और आदर का भेद दर्शाया और कहा कि असुर गुरु भक्ति के कारण ही सशक्त हुए हैं–

मद्यवन् द्विषतः पश्य प्रक्षीणार्न्गुवतिक्रमात्।
संप्रत्युपचितान्भूयः काव्यमाराध्य भक्तितः।।[26]

गुरू का सत्कार परम सेवा माना गया है। सबसे अधिक पुण्यदायक कार्य है, अतः गुरू के प्रति श्रद्धा रखनी चाहिये।

10. **राजा वेन**[27] – पुराणों में राज धर्म और लोक रंजन की ओर भी अनेक पुराकथाओं में संकेत किया गया है। राजा प्रजा के हितों को ध्यान में न रखता हुआ कार्य करता था तो दण्डनीय था। अत्याचारी को प्रजा सिंहासन से च्युत कर सकती थी। राजा का प्रमुख कर्त्तव्य था कि वह प्रजा हित में कार्य करे।

राजा अंग के कोई पुत्र नहीं था, इस कारण उनके अश्वमेघ यज्ञ का भाग देवताओं ने ग्रहण नहीं किया। इस पर राजा ने पुत्रकामेष्टि यज्ञ किया। यज्ञ से निकलकर राजा को एक दिव्य पुरूष ने खीर का कटोरा दिया। उसकी रानी ने खीर ग्रहण की किन्तु सुनीथा नामक वह रानी अधर्मी वंश मृत्यु की पुत्री थी, अतः राजा के जो पुत्र हुआ वह माता के कुल के दोषों से पीड़ित था–

स मातामहदोषेण तेन मृत्योः सुतात्मजः।
निसर्गादेव मैत्रेय दुष्ट एव व्यजायत।।[28]

उसका नाम 'वेन' रखा गया। वह अत्यन्त दुष्ट था। उसके उपद्रवों से प्रजा त्राहि–त्राहि करने लगी। राजा अंग ने उसे अनेक बार दण्डित किया परन्तु उसमें सुधार नहीं हुआ। राजा अंग को क्लेशपूर्ण जीवन से वैराग्य हो गया और वह वन को चले गये। वेन राजा बना और उसने अधर्मरत होकर यज्ञ तथा देवपूजन का राज्य में निषेध कर दिया। उसने घोषणा करवा दी कि राजा सर्वदेवमय होता है, अतः सम्पूर्ण प्रजा को राजा वेन की पूजा करनी चाहिये। यह प्रजा का धर्म है कि

वह राजाज्ञा का पालन करे अन्यथा कठोर दण्ड दिया जायेगा।

ऋषिगण मिलकर राजा वेन को समझाने लगे तो उसने उनके परामर्श की अवज्ञा की। उसके अत्याचारों से क्रुद्ध होकर ऋषियों ने हुंकार भरकर वेन को कुशों के प्रहार से मार दिया। राज्य में अराजकता व्याप्त न हो इसके लिए उसके शरीर से दो पुत्र उत्पन्न किये गये– पहला, निषाद और दूसरा, पृथु। पृथु को राजा बनाया गया, जिसने प्रजा का कल्याण किया। परमप्रतापी राजा पृथु ने अनन्तकाल तक समुद्रपर्यन्त पृथ्वी पर शासन किया।

पुराकथाओं में श्रद्धायुक्त मस्तिष्क मनुष्य को उन सभी कार्यों और परिणामों से दूर रखता है जिनसे उसकी सुख, शान्ति और समृद्धि सुरक्षित नहीं रहती। किसी अलौकिक व अदृश्य शक्ति के अनुग्रह अथवा अननुग्रह से ही सुख अथवा दुःखों की प्राप्ति नहीं होती वरन् विषय–वासनादि विकारों से भी उनकी प्राप्ति होती है अतः उन पर नियन्त्रण रखने के लिये आवश्यक उपाय करने के संकेत अनेक स्थलों पर किये गये हैं। विषयविकारों के अतिरिक्त सामाजिक परिस्थितियाँ भी दुःख का कारण बनती है। अतः आवयश्क है कि समाज एवं व्यक्ति की शान्ति एवं सुरक्षा के लिए उन्हें प्रेरित किया जाये कि एक दूसरे के प्रति कर्तव्यों में प्रमाद होने पर प्राप्त होने वाले दुष्परिणमों को उन्हें भुगतना ही होगा। जिससे सामाजिक प्राणियों के मध्य मधुर सम्बन्ध स्थापित किये जा सकें और यह कार्य पुराकथाएँ अत्यन्त कुशलता से करती है तथा वैयक्तिक और सामाजिक दो प्रकार की सुख–शान्ति का उपदेश करती हैं।

संदर्भ सूची :–

1. अथर्ववेद, 11.9.28
2. विंटरनित्ज, ए हिस्ट्री ऑफ इण्डियन लिटरेचर, वाल्यूम–1, पृष्ठ – 556
3. वसिष्ठ धर्मसूत्र 27.6
4. कौटलीय अर्थशास्त्र, 1.5.14
5. याज्ञवल्क्यस्मृति 1.3
6. शतपथ ब्राह्मण, 14.6.10.6 , बृहदारण्यक, 2.4.10 तथा छान्दोग्य उपनिशद्, 7.1.1
7. विष्णुपुराण, 4.2 तथा भागवतपुराण, 5.8 व 9.6
8. विष्णुपुराण, 4.2.124
9. मत्स्यपुराण, अध्याय 24, ब्रह्मपुराण, अध्याय 24, भावगतपुराण, अध्याय 9.18–19, वामनपुराण, अध्याय 93, लिंगपुराण,अध्याय 67
10. भागवतपुराण, 9.19.14
11. भागवतपुराण, 9.19.16
12. भर्तृहरि, वैराग्यशतकम्, 7
13. विष्णुपुराण, 1.1
14. विष्णुपुराण, 1.1.18
15. श्रीमद्भगवद्गीता, 3.37
16. नारदीयपुराण, अध्याय–9
17. नारदीयपुराण, 8.103
18. नारदीयपुराण, 9.108
19. कूर्मपुराण, अध्याय–16
20. वराहपुराण, अध्याय–71
21. शिवपुराण, को.रू.सं.अ. 24–26
22. मार्कण्डेयपुराण, अध्याय–8
23. मार्कण्डेयपुराण, अध्याय–9
24. ब्रह्मपुराण, अध्याय–110
25. भागवतपुराण, 6.7
26. भागवतपुराण 6.7.23
27. ब्रह्मपुराण, अध्याय–4, विष्णुपुराण, 1.13, भागवतपुराण, 4.14
28. विष्णुपुराण 1.13.12

Swadeshi Research Foundation A Monthly Journal of Multidisciplinary Research
International Peer Reviewed, Refereed, Indexing & Impact Factor - 5.2, Ex- UGC S.N. 4990
ISSN : 2394-3580, Vol. – 9, No. – 3, Jan. – 2022, Conference Special Issues
2022

''स्टैच्यु ऑफ बिलीफ'' विश्वास स्वरूपम्

विजेन्द्र कुमार (शोधार्थी)
अम्बेडकर कॉलोनी कुन्हाडी कोटा राजस्थान
डॉ. मुक्ति पाराशर (शोध निर्देशक)

सृष्टि के निर्माण के बाद मनुष्य के अस्तित्व की कहानी का और प्रकृति के बदलते स्वरूप एवं कई प्रकार के जीवों की उत्पत्ति का हिसाब वैज्ञानिकों रखना शुरू किया धीरे–धीरे मनुष्य के धर्म रीति–रिवाजों उसकी आदतों, पहनावें, भोजन आदि का स्वरूप समय अन्तराल में बदलता रहा है और आज भी बदल रहा है। दुनिया परिवर्तन शील है, जिसके इतिहास सभ्यताओं के आगमन से अब तक अध्ययन कर रहे हैं।

मनुष्य इस जीवन को चलाने के लिए रोजमर्रा की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए बाधित रहा है और इन सभी के लिए वह किसी न किसी ऐसी शक्ति को स्वीकारता रहा है जो अदृश्य है या कभी–कभी प्रकट भी होती है। उसे इससे भय रहा है अथवा उसके जीवन के अस्तित्व को बनाए रखने के लिए जो आवश्यक वस्तुऐं संसाधन चाहिए किसी न किसी रूप में उसकी पूर्ति करने वाली है जैसे हवा, पानी, सूर्य प्रकृति, वन जंगल जीव–जन्तु आदि को उसने अपना इष्ट माना है मनुष्य खतरों से खेलना कम, बचना ज्यादा चाहता है। अतः उन खतरों से बचने के लिए वह उस अदृश्य शक्ति की उपासना करने लगा और उसे प्रसन्न करने लगा।

अतः उसने मान लिया कि इस प्रकृति को या संसार को चलाने वाली शक्ति अवश्य है तभी उसने एक शक्ति जो पैदा (उत्पन्न) करती है और दुसरी जो इसका रखरखाव करती है यानि पालती है तथा तीसरी शक्ति जो इसको नष्ट करती है उन्हीं तीनों शक्तियों को प्रतीकों के रूप में ब्रह्मा, विष्णु और महेश को मान्यता दी।

आज से लगभग 5000 वर्ष पूर्व सिन्धु घाटी सभ्यता जिले हड़प्पा सभ्यता भी कहते है का अस्तित्व माना जाता है बीसवीं शताब्दी में जब उक्त स्थानों में खुदाई हुई तो उसके अवशेषों से यह जानकारी मिली कि उस समय भी लोग पूजा, भक्ति–स्तुति करते थे कुछ प्रतीकों के माध्यम से हमे यह समझने में आसानी हुई है कि मनुष्य अपना जीवन–यापन करने के साथ अपने जीवन बचाने या आत्म सन्तुष्टि के लिए कुछ प्रतीकों की पूजा अर्चना भी करता था।

भगवान शिव देवों के देव है तथा अन्य देवताओं से अलग एवं निराले होने के कारण इनको महादेव कहा जाता है उनके विराट्, विशाल, अद्भूत एवं चमत्कारी, नानाविध रूपों में विरोधाभासों का ऐसा सम्मिश्रण है जो युगों से अनुभूत दार्शनिक यथार्थ तथा अध्यात्मिक विवेक के प्रतिबिम्ब है इन धार्मिक प्रतीको एवं बिम्बों की सशक्त व्याख्या ही भारतीय मूर्तिकला है। रूद्र (शत्रुओं को रूलाने वाले) से महादेव (सबका कल्याण करने वाले) की यह जययात्रा ही उनके व्यक्तित्व की गाथा है। विरोध में सांमजस्य के शाश्वत् रहस्य के वे मूर्तिरूप है। इसीलिए वे सृजन एवं विनाश दोनों के ही कारक है।

शिव जिनके नाम में ही एक परिपूर्णता व आध्यत्मिकता का समावेश है वे हिन्दू देवताओं में एक महत्वपूर्ण स्थान रखते है आर्य व अनार्यों में समान रूप से पूजनीय है देवाधिदेव औधडदानी, आशुतोष, रूद्र नीलकण्ठ, नटराज, शिव व महादेव के नाम से पूजित मन्दिरों व मूर्तियों की संख्या भारत में ही नहीं वरन् नेपाल, मॉरीशस, फीजी, इण्डोनशियां आदि देशों में भी हैं। शिव के स्वरूपों के प्रमाण मोहनजोदड़ों तथा हडप्पा के प्राप्त मूर्तियों में कई आकृतियां शिव के पशुपति, किरात एवं वृषभ रूपों से साम्य रखती है, इनके अतिरिक्त कुछ अन्य अवशेष भी सिन्धु घाटी से प्राप्त हुए है। जिन्हें ''शिवलिंग'' कहा जा सकता है। सिन्धु घाटी सभ्यता के अलावा वैदिक काल, महाकाव्य काल कुषाण, मौर्य, गुप्त आदि के समय में भी शिव के विभिन्न स्वरूपों को देखा गया है।

भारतीय मूर्तिकला में शैव धर्मों में भगवान शिव के तीन स्वरूपों को देखा गया है। प्रथम 'प्रतीक रूप'' में लिंग विग्रह (मुखलिंग–लिगोदयक) द्वितीय पशुरूप मे जिनमें वृषभ अथवा नन्दीरूढ़ तथा तृतीय रूप ''मानवीय विग्रह'' के रूप में है।

भारत वैसे तो भिन्न–भिन्न मतावलिम्बियों तथा धार्मिक आस्थाओं के लोगों का स्थान है यहां पर विभिन्न धर्मों के मन्दिर, मस्जिद, गुरूद्वारे देश के हर कोने में मिलेंगे लेकिन शिव की भक्ति व आस्था का प्रमाण इस बात से मिलता है कि देश के लगभग हर प्रान्त में एक विशाल मन्दिर, मूर्ति या शिवलिंग के दर्शन

हो जाते है इसमें कुछ इस प्रकार है–

1. कर्नाटक राज्य के भटकल तहसील में निर्मित ''गुरूवेश्वर'' की शिव प्रतिमा है जो कि अरबरसागर के किनारे पद्माशन मुद्रा में 123 फुट ऊँची प्रतिमा है।
2. तमिलानाडू राज्य के कोयम्बटूर में स्थित ''आदि योगी शिव'' की आपक्ष प्रतिमा है जो कि काले रंग की 112 फुट ऊँची प्रतिमा है।
3. गुजरात राज्य के बड़ोडरा की ''सर्खेश्वर महादेव'' की वरद मुद्रा में 111फीट की खड़ी प्रतिमा है जो कि सुरसागर झील में बनी है।
4. सिक्किम राज्य के नामचीं में बनी सिद्धेश्वर धाम की 108 फीट की आर्शिवाद की मुद्रा में बेठी प्रतिमा है।
5. उत्तराखण्ड के हरिद्वार की हरिहर शिव की102 फीट लम्बी खड़ी प्रतिमा है जो कि सुप्रसिद्ध गायक स्वर्गीय गुलशन कुमार जी के परिवार जन द्वारा निर्मित करवाई गई।
6. कर्नाटक राज्य के बीजापुर के विजयपुर में शिवगिरी के मन्दिर में बनी 85 फुट की पद्मासन की प्रतिमा है।
7. गुजरात राज्य के नार्गेश्वर में निर्मित 82 फीट की शिव प्रतिमा है।

जहाँ तक भारत देश की बात है यहाँ पर अनेक मतावलम्बी निवास करते है हिन्दू धर्म में तो बहुत सारी विविधताएं है कहते है कि हिन्दूओं के तो 33 करोड़ देवी देवता है कुछ वर्षों में मूर्तियों को आस्था के प्रतीक रूप में स्थापित करने की होड़ सी लगी है। उसकी भव्यता और विशालता को लेकर जनता ही नहीं वरन सरकार भी अपना योगदान दे रही है।

शक्ति के तीन स्वरूपों में भोले आशुतोष भगवान शंकर की प्रतिमा जो राजस्थान के श्री नाथद्वारा में बनाई गई है इस मूर्ति की भव्यता का आंकलन कुछ इस प्रकार से किया गया है–

श्री नाथद्वारा में भगवान शिव की 351 फुट ऊँची प्रतिमा जो ''स्टैच्यु ऑफ बिलीफ'' यानि विश्वास स्वरूपम् के रूप में स्थापित है यह दुनिया की सबसे ऊँची शिव प्रतिमा है। यह प्रतिमा जयपुर–उदयपुर राष्ट्रीय राजमार्ग पर उदयपुर से 50 कि.मी. दूर श्री नाथद्वारा के ''गणेश टेकरी'' पर बनी है। यह मूर्ति सीमेंट व ककरींट से बनी विश्व की चौथे नम्बर की तथा भारत की दूसरें नम्बर की सबसे ऊँची प्रतिमा है।

वैसे तो राजस्थान भवन निर्माण, मन्दिरों व किले की स्थापत्य के लिए विश्व में प्रसिद्ध है जिसका जीता जागता उदाहरण अरावली की पहाड़ियों के बीच ''श्री नाथद्वारा'' में मेवाड़ के महाराणा राजसिंह द्वारा निर्मित 17वीं शताब्दी का ''श्रीनाथ जी'' का मन्दिर है।

भगवान शिव की इस विराट प्रतिमा का शिलान्यास राजस्थान के तात्कालीन मुख्यमंत्री श्री अशोक गहलोत जी द्वारा अगस्त 2012, में किया गया तथा इसका निर्माण कार्य मिराज ग्रुप के सौजन्य से ''शापुर जी पालन'' कम्पनी द्वारा 17 अप्रैल 2013 से प्रारम्भ किया गया। इस मूर्ति की भव्यता का अनुमान इस बात से लगाया जा सकता है कि इसके निर्माण कार्य में लगभग 900 मजदूरों और 90 अभियन्ताओं ने कार्य प्रतिदिन किया इस स्टैच्यु का निर्माण 2700 वर्ग मीटर के दायरे में किया गया जो लगभग 25.2 बीघा में फैला है। इस मूर्ति की नींव को मजबूती देने के लिए 110 फीट नीचे गहराई से आधार को लोहा सीमेंट एवं ककरींट से बनाया गया भव्यता की दृष्टि से ''स्टैच्यु ऑफ बिलीफ'' के कुछ रोचक तथ्य इस प्रकार है–

इस मूर्ति के पंजे की लम्बाई 65 फुट, पंजे से घुटने तक की लम्बाई 150 फुट है जबकि कन्धा 260 फीट और कमर बन्ध 175 फीट पर स्थित है मूर्ति के त्रिशुल की लम्बाई 315 फीट तथा भगवान शिव की जटा को 16 फीट में बनाया गया इस मूर्ति में पांच–पांच हजार क्यूबिक मीटर के दो वाट फॉल बनाये गये है जिसमें एक भगवान शिव के अभिषेक के लिए तथा दूसरा आपातकाल में आग पर काबु पाने के लिए बनाया गया है। पर्यटकों की सुविधा हेतु इसमें कुल चार लिफ्ट बनाई गई है। जिसमें दो लिफ्ट 110 फुट की ऊँचाई तक जाती है जिसमें एक बार में 29–29 लोग बैठ सकते है जो कि सिर्फ आमजन के लिये है–

बाकि की दो लिफ्ट 280 फीट की ऊँचाई तक

जाती है जिसमें केवल एक बार में 11–11 लोग जा सकते है यह लिफ्ट सिर्फ रखरखाव टीम एवं VIP लोगों के उपयोग हेतु है। इस मूर्ति के सामने सिढ़ियाँ मूर्ति के अन्दर का भाग पूर्णतः वातानुकूलित है भगवान शिव के गले में एक सुन्दर सर्प बनाया गया है तथा मूर्ति की बनावट पहाड़ीनुमा की गई है। दूर के दृश्य को देखने के लिए भगवान शिव के कन्धे पर दो बालकनी बनाई गई है जो कि बाये 280 फुट तथा दाये में 270 फुट की है। इस बालकनी से 20 कि.मी. दुर तक का दृश्य हम देख सकते है। इस मूर्ति को कॉपर रंग से रंगवाया गया है तथा मूर्ति को धूप व बारिस से बचाने के लिए मूर्ति पर जिंक की कांटिक की गई है। इस मूर्ति का ''विंउ टबल टेस्ट'' सिडनी में हुआ है जिसमें यह बताया गया है कि 250 किलोमीटर दबाव वाली हवा भी इस मूर्ति को कोई क्षति नहीं पहुँचा सकती है। इस मूर्ति को 20 कि.मी. दूर कांकरोली फलाईओवर से देखा जा सकता है क्योंकि रात की रोशनी के लिए जो लाईट्स लगाई गई जो कि अमेरिका से मंगवाई गई है मूर्ति की परिक्रमा के लिए की छोटी 300 फुट की तथा दूसरी 1.5 कि.मी. की परिक्रमा परिसर मूर्ति के चारों ओर तैयार किया गया है। पयर्टक की दृष्टि से यहाँ तीन उद्यान निर्मित किऐ गये है। जिनमें एक ''हर्बल गार्डन'' है जो कि 1 लाख वर्ग फीट में बना है दूसरा ''टेरिस गार्डन'' तथा तीसरा ''मेच गार्डन'' है इसके अलावा एक ऑपन थ्रेयटर भी बनाया गया है जिसमें लगभग 18000 लोगों की बैठने की व्यवस्था है इस मूर्ति के पास ही एक एडमीन बिल्डींग, रेस्टोरेन्ट तथा म्यूजीकल लेजर फाउनटेन भी बनाया गया है मूर्ति के ठीक सामने 25 फीट ऊँची तथा 37 फीट चौड़ी सफेद रंग में निर्मित नन्दी की प्रतिमा बनी है जो कि शिव की सवारी का प्रतीक है।

वृद्धजन एवं बीमार व्यक्तियों की सुविधा को ध्यान में रखते हुए भगवान शिव की एक ''हुबहू'' प्रतिमा नीचे मॉडल के रूप बनाई गई है तथा यह मॉडल स्वरूप मूर्ति का निर्माण मूर्तिकार नरेश कुमावत जी ने माणेशर गुडगांव में किया था इसी की तर्ज पर बड़ी प्रतिमा का कार्य मूर्तिकार नरेश कुमावत जी के निर्देशन में पूर्ण किया गया। यह मॉडल स्वरूप प्रतिमा 30 फुट की है। इस परिसर के प्रवेश द्वार के ठीक सामने एक बड़ा शिवलिंग बनाया गया है जिसमें निरन्तर पानी से अभिषेक होता रहता है।

इस सम्पूर्ण मूर्ति के ढ़ाँचे को तैयार करने में लगभग 2600 टन स्टील 2601 टन लोहा तथा 26618 क्यूविक मीटर सीमेंट ककरींट लगा है इस मूर्ति के सम्पूर्ण निर्माण कार्य में लगभग 300 करोड़ रूपये खर्च होने का अनुमान है।

प्राचीन काल के शैव मूर्तिशिल्पों के दर्शन राजस्थान में भी भगवान शिव के अनेक स्वरूपों में किए जा सकते है।

Swadeshi Research Foundation A Monthly Journal of Multidisciplinary Research
International Peer Reviewed, Refereed, Indexing & Impact Factor - 5.2, Ex- UGC S.N. 4990
ISSN : 2394-3580, Vol. – 9, No. – 3, Jan. – 2022, Conference Special Issues
2022

ब्रज क्षेत्र के श्रम परिहार के गीत

संजू रोहलानियां
(शोधार्थी), हिंदी, जय नारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर (राज.)

लोक गीतों की परम्परा प्राचीन समय से अविरल रूप में पीढ़ी दर पीढ़ी चली आ रही है। यह परम्परा अलिखित और अनाम रही है। लोक गीत एक वृक्ष के समान होते है, जिसकी जड़े धरातल में धंसी होती है और उसके लगातार नई–नई शाखाएँ पल्लवित एवं पुष्पित होती रहती है। इन लोक गीतों में लोक जीवन की व्यापक भावनुभूति का उद्वेलन और मानव की सभूहगत भावनाओं की अभिव्यक्ति मिलती है। लोकगीत उल्लास, आनंद और उत्साह की भावना से ओतप्रोत होते है जिनसे दुख कम हो जाता है और सुख दौगुना बढ़ जाता है साथ ही मेहनत की थकान भी महसूस नहीं होती।

ब्रज लोक गीतों में ब्रज क्षेत्र के लोक जीवन और संस्कृति का संजीव चित्रण हुआ है। ये गीत सुख–दुःख, ह्रस–परिह्रास हर्ष–विषाद, आशा–निराशा, उत्थान–पतन, इच्छा–अनिच्छा, संजोग–वियोग, राग–विराग और चिन्तन–मनन के ताने बाने से बुने हुए है। ब्रज में प्रत्येक अवसर पर गीत गाने की परम्परा चली आ रही है। श्रम लोक गीत भी इसी परम्परा का एक अंग है। घर में तथा बाहर काम करते समय शरीर में होने वाली थकान को दूर करने के लिए स्त्री–पुरूष समवेत या एकल रूप में इन श्रम गीतों का गायन कर अपने मन तथा शरीर को आराम प्रदान करते है। ब्रज क्षेत्र में दो प्रकार के श्रम प्रधान गीत प्रचलित है – गार्हस्थ्य परक तथा कृषि परक।

गार्हस्थ्य परक गीतों को स्त्रियाँ पानी भरते, झाड़ू–बुहारी करते समय, रसोई में खाना पकाते समय तथा चरखा चलाते समय गाती रहती है जबकि कृषि परक गीतों को फसल–बोते–काटते समय, सिला बिनते समय, कोल्हू चलाते, खेतों को सींचते समय मुख्यतः स्त्री–पुरुष समवेत स्वर में गाते रहते है। ब्रज लोक गीतों की विविधता और बहुलता का कोई ठिकाना नहीं है। लोक जीवन का ऐसा कोई पहलू नहीं है, जो ब्रज लोक गीतों की परिधि में नहीं आता हो। ब्रजवासी तो ऐसे अवसरों का इंतजार करते रहते है कि वे विभिन्न उत्सवों–पर्वों, और अनुष्ठानों पर लोक गीतों के माध्यम से अपने सहज संगीत का परिचय दे सके। सच पूछा जाये तो सरल, सरस, मधुर और सहज–स्वाभाविक लोक गीत ब्रजभाषा और ब्रजवासियों की अनमोल निधि हैं।

ब्रज के श्रम लोक गीतों की सबसे बड़ी विशेषता इनकी संवेदन शीलता है। सास–ननद के तानों से मन में उपजा अवसाद तथा पति की कार्य व्यस्तता को देखकर पत्नी का उपलाम्भ इन्हें मर्मस्पर्शी बना देता है। ये श्रम गीत ब्रज क्षेत्र के लोक जीवन और लोक विश्वास के सवांहक है क्योंकि इनमें ब्रज का रहन–सहन, खान–पान शकुन विचार आदि का सहज चित्रण मिलता है। श्री कृष्ण और राधा के प्रति ब्रजवासियों की अनन्य भक्ति का प्रभाव इन लोक गीतों में देखने को मिलता है जिसमें कृष्ण–राधा का सामान्य नायक–नायिका के रूप उल्लेख किया गया है। ब्रज संस्कृति में गोचरण का विशेष महत्व है। सुबह ग्वाले गायों को चराने के लिए घर से निकलते समय मंनोरजन के लिए लोक गीतों का गायन करते रहते है।

भोर के समय जल्दी उठकर घर में झाड़ू लगाने की प्रथा सामान्यतः सभी जगहों पर प्रचलित है। इस प्रथा का ब्रज लोक गीतों में मनोरम चित्रण मिलता है। सौभाग्यवती स्त्री से सुबह हो जाने पर बिछौना छोड़कर घर में झाड़ू लगाने का आह्वान किया गया है। बेटी तो ससुराल गई हुई है और बहु अपने मायके ऐसी स्थिति में घर में झाड़ू कौन लगाये? जवाब है, बेटी को यही रख लो और बहू को पीहर से ले आओं फिर वो दोनों मिलकर आंगन को साफ कर देगी।

"उठौ री सुहागिल नारि, बुहारी दै लउ अगंना

धीअ मेरी सासु कें, बहू मेरी बाप कें

कौन बुहारै मेरौ घर–अगंना

बहू ए बुलाइ लेउ, धीअ ए रहँन देउ

बुही बुहारै तिहारौ वासौ घर अंगना

दीए की लोइ फीकी, चाँदनी की चँदना

मुख कौ तमोल फीकौ, नैन में कौ सुरमां

गैअंन के गल–बंदन छूटे, पंछी चले चुगंना

उठौ री सुहागिल नारि, हम चले जमुना"1

प्रातः काल झाड़ू–चौका करने के बाद गृहिणी स्त्रियाँ स्नान करेगी ही। उसके बाद ही वह पानी भरोगी तथा अन्य कार्यों मे प्रवृत्त होगी। ब्रज में स्नान करने के लिए स्त्रियाँ यमुना में जाती है और वहीं से लौटते समय स्नान करके पानी भर लाती है।

"राधा निकसी है पनियां लेके गगरी।

राधा चली जमुना ले कैं गगरी–डोर

राह–घाट में मिलि गयों नटवर चंद किसोर

तेरे दरस की प्यासी हैं ब्रज की ये नारि

और दरसनदे जा सांवले नटवर नटवर नंदकुमार।

ये बड़े घरन की हैं रानियां।" 2

पनघट के गीतों में श्री कृष्ण और राधा की प्रेम भरी अटकेलियों का चित्रण हुआ है।

सुबह से शाम तक काम करने के बाद भी स्त्रियाँ की प्रशंसा होने के बदले पति से उनको डांट–फटकार सुनने को मिलती है। पति के साथ–साथ परिवार के अन्य सदस्यों से भी उनको जली–कुटी बातें सुनने को मिलती है। पारिवारिक मान–मर्यादा की रक्षा के भय से स्त्रियाँ अपने हृदय की वेदना किसी से बता नहीं पाती है। एसी स्थिति में ब्रज बालाएँ इन गीतों के माध्यम से अपने हृदय की पीड़ा को व्यक्त कर अपने मन को सान्तवना प्रदान करती हैं –

"मारै मति राजा बचन भरवाय लै

पानी भरवाय लै, चाहे चौका करवाय लै

भैंसन की धार मो वै ठाढे कढिवाय लै, मारैमति

मौटौ पिसवाय लै, चाहे नन्हों पिसवाय लै

घोड़ा को सौ दानों मोपै हाल दरवाय ले, मारै मति

पूरी करवाय लै, चाहे रोटी करवाय लै

चाकी कैसे वाएट मोपै हाल सिकवाय लै, मारै मति"3

इस गीत में ब्रज क्षेत्र में स्त्री की जो दारुण दशा थी, उसका चित्रण हुआ है। प्राचीन समय में पारिवारिक पड़ताड़ना झेलने के बाद भी स्त्रियाँ जटिल मानसिकता का शिकार नहीं होती थी, जो की आधुनिक नारी की प्रमुख समस्या है। क्योंकि इन गीतों के माध्यम से वे अपनी घुटन और कुंठाओं को व्यक्त कर देती थी। जिससे उनकों मानसिक शान्ति प्राप्त होती थी परन्तु वर्तमान में गीतों की परम्परा लुप्त प्राय होती जा रही है। जिससे स्त्रियाँ अपनी पीड़ा को व्यक्त नहीं कर पाती है और वह जटिल मानसिकता से ग्रस्ति हो जाती है। कार्तिक महिने में ब्रज में पुरूषों द्वारा 'हीरो' नामक गीत गाया जाता है जो इस प्रकार है –

"अरे पहलें रे कै कोंनु मनाइयें, और कौन कौ लीजै रे नाम

अरे पहलें रे कै रामु मनाइयें और गुरू कौ लीजै रे नाम

अरे कातिक रे कै पेलैली–रे–अष्ट में औरु राधा कुण्ड कौ रे न्हान

अरे न्हाय लै रे कन्हैया प्यारे सामरे औरु दै मौअन कौ रे दान

अरे अरसठि रे तीरथ कौ रे जलु भरयौ और न्हाइलेउ अपने रे आप

अरे बच्छारे असुर भारयौ सामरे, और कटि जाइ तेरौ रे पापु।" 4

अच्छी फसल होने पर अन्नदाता का मन कितना प्रफूल्लित हो जाता है। किसान खेत में हल चलाने से पूर्व खत्ती गाड़ कर मिट्टी के ढेला की हल्दी से पूजा कर अच्छी फसल की प्राप्ति के लिए आशीर्वाद देने और उसे स्वीकार करने के लिए पंच पीरों की स्वर्ग से उतरने की कल्पना इन गीतों में करता है। मिट्टी के ढेला को पूजते समय यह गीत गाया जाता है:

"जब तौ बनिया डेली न देतौ

अब कैसे भेली लुटावै लाल

देखौ लाल जा साहब की बानी

जा ठाकुर की बानी

जब तौ किसानु बालि नई देतौ

अब कैसे बोझ लुटावै

देखौ लाल जा साहिब की बानी

जा ठाकुर की बानी

जब तौ तेली तेलु न देतौ

अब कैसें कुप्पी लुटावै

देखौ लाल जा साहिब की बानी

पाँचों अनी अनी भाँति

तुम देखौ लाल जा ठाकुर की बानी

जा साहिब की बानी" 5

फसल अच्छी होने पर तेली और बनिया दोनो ही किसान पर तेल और गुड़ लुटाने के लिए तैयार है क्योंकि इस बार इसके फसल अच्छी है तो यह सारी उधार चुका देगा। महिलाएँ सिला बीन कर खेतों से घर की ओर प्रस्थान करती है तो उस अवसर पर 'बधाया' का गायन किया जाता है। इस बधाये में महिलाओं का मन आशीर्वाद से भरा होता है –

"रामचन्द्र के दस हर चलियों, लछिमन के बड़ सीर

सीता सिलअनु बीनिए, जौ घोंटून बड़ी बालि

बछायौ मेरे मन रहियौ" 6

सिला गीत में बहनों का मन उल्लासित है कि उनके भाइयों के खेतों में दस–दस हल चल रहे है। स्त्रियाँ सिला बीनते हुए मंनोरजन के लिए गीतों का गायन करती रहती है। साथ ही ब्रज की पारम्परिक रीति–रिवाजों का निर्वाहन करती हुई देवी–देवताओं से अपन परिवार की सुख–समृद्धि की कामना करती रहती है। खेतों से फसल कट जाने के बाद अनाज के जो कण बिखर जाते है तो उनको इक्ट्ठा करने को सिला बिनना कहते है। खेतों में फसल अच्छी होती है तो उससे उनके घर सुख–सम्पन्नता आती है जिसका वर्णन इन गीतों मे चिड़िया को लक्ष्य करके किया, जो इस प्रकार है –

"हरी ऐ चिरैया ओं कहै मैं उपजुड़ी लछिमन के खेत

हरी ऐ चिरैया ओं कहै मैं जैऊंगी स्वाकी धनिअ के थारु

हरी ऐ चिरैया ओं कहै मैं ओढ़ँगी स्वाकी धनिअ कौ चीर

हरी ऐ चिरैया ओं कहै मैं पौढ़ूगी स्वाकी धनिअ की सेज"7

कृषि कार्य समाप्त होने के पश्चात किसान स्वंय भी आराम करता है और बैलों को भी हल से अलग करके आराम के लिए छोड़ देता है।

"चरि पहर बत्तीस घरी, और जब मालिक ने महरि करी।

छोड़यों कूआ देखौ काम, गऊ के जाये करौ आराम।"8

किसान के खेत में जब फसल अच्छी होती है तो उससे सेठ, साहुकार और पक्षिगण सभी खुश हो जाते है क्योंकि किसान के अन्न से ही उनका जीवन चल रहा है। इन गीतों में चिड़िया खुश होकर कहती है कि मैं किसान के खेत में रहूंगी, उनकी पत्नी की थाली से भोजन करूंगी उसकी रंगीचुनरी ओढ़ूंगी और उसी की शय्या पर सोउंगी।

आज के समय में खाना बनाने की सामग्री आसानी से उपलब्ध हो जाती है परन्तु पहले रसोई बनाने के लिए महिलाओं को चक्की से अनाज पीसना पड़ता था। सुबह जल्दी उठकर स्त्रियाँ चक्की पर बैठ जाती थी। जिसका चित्रण इस गीत में हुआ है –

"अरे ढरा रे भरि कै करौ पीसनों

पीसत–पीसत हौं हारी"9

अनाज पीस कर स्त्रियाँ रसोई में पकवान तैयार करती है। पकवान तैयार करने में कितना श्रम लगता है उसका उल्लेख इस गीते में है –

"मीठी लागै मठा की रावड़ी रे

घोल–घोल चूल्हें पर रख दी, अरे हो लगा दी लकड़ी रे

रंध–रूंध चूल्हे पर रख दी अरे भुरस गई जावड़ी रे।"10

ब्रज के श्रमलोक गीतों में चरखा गीतों का विशेष स्थान है। चरखा से सूत कात कर शरीर को ढका जाता है और काते हुए सूत को बेच कर घर की अन्य आवश्यकताओं को पूरा किया जाता है। चरखा को चलाते समय स्त्रियाँ मंनोरजन करने के साथ–साथ मन के भावों को इन गीतों में व्यक्त करती रहती है –

"चरखा बिन ठुके नहिं चलता ओहो

तिहि चरखा मेरे ससुर ने लीन्हौ

सासुल लफि लफि डारे तार।

एक चरखा मेरे बालम ने लीन्यो

मैं तो कांतू नहनों तार।" 11

एक गीत में चरखे से होने वाली आय का उल्लेख किया है। जिसमें महिलाओ की आभूषण प्रियता

का वर्णन किय गया है। वे अपनी इच्छाओं को पूरा करने के लिए रात–दिन चरखा कातती है और जब उनके पास अच्छी आय इकट्ठी हो जाती है तो वह अपनी सहेलियों और पड़ोसनों से अपने आभूषणों का बखान करती है। जो इस प्रकार है –

"अरे मेरौ चरखा हल्लेदार, परौसिन सुनियो बैहनां

जा दिन ते मैंने करी कताई, नथु सोने की बनवाई

बनवायौ गरे को हार, परौसिन सुनियो बैहनां

लकड़ी दिसि पच्छिम ते आई, पाए नए–नए रंग चढ़ाई

ये तकुआ पै अजब बहार, परौसिन सुनियों बैहनां।"12

ब्रज संस्कृति पूर्ण रूप से कृष्ण और राधा के रंग में रंगी हुई है। ब्रजवासी लोक गीतों में कृष्ण और राधा को सामान्य नायक–नायिका के रूप में चित्रित किया गया है। ब्रज क्षेत्र के श्रम लोक गीतों में 'गोचरण के गीतों का स्थान सर्वोपरि है। प्रातःकाल ग्वाले गायों को चराने के लिए वन की ओर प्रस्थान करते है और संध्या के समय जब वे वापिस घर की ओर लौटते है तो अपनी थकान को दूर करने के लिए इन लोक गीतों को गाते हुए आते है –

"जसुदा मइया खोलि किवरियां लाला अयो गाइ चराइ

जसुदा मइया करत आरतो फूली नांहि समाय

हंसि–हंसि लेत बलैयां मइया बार–बार बलिजाटा।"13

ब्रज की गलियों में दूध–दही बेचने वाली ब्रज बालाएं राधा–और कृष्ण को माध्यम बनाकर 'गुंजरी' गीतों को गायन करती हुई अपने दूध–दही को बेचती रहती है 'गुंजरी' गीतों में ब्रज बालाओं अर्थात गुजरियों की व्यापार करने की चतुराई के दर्शन होते है।

"ले लो बिहारी नंदलाला दहिया मेरो लै लो।

कोरी–कोरी मटकी में दहिया जमायो, पानी न डालो एक बूंद

मोरे दही का मोल नहीं है दहिया बड़ा अनमोल

गलियन–गलियन बेचत डोंलू श्याम बड़ा चितचोर।"14

ब्रज में शकुन विचार की मान्यताएं है। किसी काम को प्रारम्भ करने से पूर्व ही छींक आ जाना अपशकुन माना जाता है। जब गुजरी दही बेचने के लिए घर से निकलती है तभी किसी को छींक आ जाती है तो उसको मना किया जाता है कि तु आज दहि बेचने मत जा

"गूजरि दहि बेंचन मत जाय, सामने छींक भई।"15

वर्तमान समय में भी ब्रज की गुजरियों के गीत विस्तृत क्षेत्र में गाये व सुने जाते है। इनकी चतुराई के किस्से गीतों के माध्यम से एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक स्थान्तरित होते रहे है।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि ब्रज के श्रम लोक गीतों में लोक जीवन का संजीव चित्रण हुआ है।

सन्दर्भ ग्रंथ :–

1. श्रम लोक गीत विशेषांक, 'लूर' पत्रिका, वर्ष 8 अंक–15–16 जनवरी, दिसम्बर, सं. डॉ. जयपाल सिंह राठौड़ चौपासनी, जोधपुर (राज.) पृ. – 92
2. वही पृ. – 92
3. वही पृ. – 93
4. ब्रज लोक साहित्य का अध्ययन, डा. सत्येन्द्र, साहित्य रत्न. भण्डार, आगरा पृ. – 342
5. वही पृ. – 341
6. वही पृ. – 342
7. वही पृ. – 342
8. वही पृ. – 341
9. श्रम लोक गीत विशेषांक, 'लूर' पत्रिका, वर्ष 8 अंक – 15–16 जनवरी, दिसम्बर, सं. डॉ. जयपाल सिंह राठौड़ चौपासनी, जोधपुर (राज.) पृ. – 95
10. वही पृ. – 95
11. वही पृ. – 94
12. वही पृ. – 94–95
13. वही पृ. – 93–94
14. वही पृ. – 94
15. वही पृ. – 94

Swadeshi Research Foundation A Monthly Journal of Multidisciplinary Research
International Peer Reviewed, Refereed, Indexing & Impact Factor - 5.2, Ex- UGC S.N. 4990
ISSN : 2394-3580, Vol. – 9, No. – 3, Jan. – 2022, Conference Special Issues
2022

जैन दर्शन में निहित शांति शिक्षा के तत्वों की माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों में तनाव को कम करने में उपयोगिता

दीपक जैन
असिस्टेंट प्रोफेसर, शिक्षक प्रशिक्षण विभाग, दिगंबर जैन कॉलेज, बड़ौत (बागपत)

शोध सारांश :– वर्तमान समय में माध्यमिक शिक्षा प्राप्त कर रहे विद्यार्थियों में तनाव एक बहुत बड़ी वैश्विक चिंता का कारण है। विद्यार्थी दिन प्रतिदिन गला काट प्रतिस्पर्धा के कारण तनाव का शिकार होते जा रहे हैं। और मानसिक तनाव से धीरे धीरे अवसाद की ओर बढ़ने लगते हैं। आज विद्यार्थियों में तनाव का स्तर (स्ट्रैस लेवेल) इतना बढ़ गया है कि उनके मानसिक और शारीरिक विकास में बाधा उत्पन्न होने लगी है। नंबरों की उच्च प्रतिशतता के दौर में ख्याति प्राप्त उच्च शिक्षा के संस्थानों में छात्रों के 95 प्रतिशत से अधिक अंक होने के बावजूद भी प्रवेश मिलना एक स्वप्न की तरह ही है। फलस्वरुप वह नशा, कुंठा और आत्महत्या जैसे रास्तों पर जा रहे हैं। एनसीआरबी के आंकड़े बताते हैं कि 2011 से 20 के बीच लगभग 70 हजार छात्रों ने खराब अंक एवं परीक्षा–परिणाम के डर से आत्महत्या की है। वस्तुतःअसंतोष ही तनाव का मुख्य कारण है। परीक्षाओ का दबाव, सहपाठियों द्वारा अपमान का भय, अध्यापकगण की लताड़ या व्यंग न बर्दाश्त करने की क्षमता उन्हे इस मार्ग की ओर धकेल रही है। भावनाओं व संवेदनाओं से शून्य होती अभिभावकों की उच्च महत्वाकांक्षा कलुषित समाज की रचना कर रही है। इस परिपेक्ष्य में जैन दर्शन में निहित पंच महाव्रत के माध्यम से इन विद्यार्थियों में तनाव कम करने में सहायता प्राप्त की जा सकती है। योग, शारीरिक व्यायाम, उच्च कोटी के साहित्य, आदर्श महापुरुषों के चरित्र के वाचन और जीवन के सास्वत सत्य स्वरूप को परिचित कराती शांति शिक्षा के नैतिक प्रयोग से माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों को सहनशील, धैर्यवान, निर्भीक, निर्मल, निश्चल बनाया जा सकता है। माध्यमिक स्तर पर शांति शिक्षा का लक्ष्य विद्यार्थियों का संतुलित व्यक्तित्व और उत्तम चरित्र है। शांत मन ही मनुष्य के व्यक्तित्व के सभी पहलुओं का पूर्ण और संतुलित विकास करता है। जैन दर्शन की परिसीमाओं में विद्यार्थियों में मानवीय मूल्यों अर्थात सत्य, अहिंसा, अचौर्य, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह और शांति का विकास होता है।

कीवर्ड – जैन दर्शन, शांति शिक्षा, तनाव

परस्परोपग्रहो जीवानाम् :– जैन ग्रंथ 'तत्वार्थ सूत्र' का यह वाक्य जैन धर्म का सूत्रवाक्य माना जाता है। इसका अर्थ है कि सभी जीवित प्राणी एक–दूसरे के सहयोग से जीवन में आगे बढ़ते हैं। इस तरह छात्र भी एक दूसरे के साथ मिलकर एक–दूसरे से सीखते हुए जिंदगी की राह पर आगे कदम बढ़ाते है। जैन दर्शन का सबसे अनूठा सिद्धांत''जिओ और जीने दो''विश्व में शांति स्थापित करने की सबसे प्रमुख कड़ी है। शांति शिक्षा का आधारभूत तत्व है भरपूर जीवन जीना और दूसरों को भी भरपूर जीवन जीने के लिए प्रेरित करना स्वयं के गरिमामय जीवन के साथ–साथ दूसरों के शांतिमय जीवन की संकल्पना ही शांति शिक्षा एवं जैन दर्शन दोनों का आधार है। जैन धर्म को मानने वाले लोग हर साल भादों के महीने में 'पर्यूषण' का पर्व मनाते हैं,जिसके तहत आत्मशुद्धि पर बल दिया जाता है। इसी दौरान एक दिन 'क्षमावाणी' के रूप में मनाया जाता है। इस दिन सभी लोग अपनी सालभर की गलतियों के लिए एक–दूसरे से क्षमा मांगते हैं। यहां तक कि मानव ही नहीं, प्रत्येक जीवित प्राणी के प्रति क्षमाभाव रखा जाता है। दूसरों के प्रति क्षमा भाव रखने से शांति का भाव उत्पन्न होता है। जैन धर्म अहिंसा और शाकाहार पर बहुत अधिक बल देता है। महावीर स्वामी का मत था कि हमारा आहार हमारी जीवन शैली और हमारे विचारों पर गहरा प्रभाव डालता है। चूंकि जैन धर्म हिंसा का विरोध करता है, इसलिए यहां पशुवध और मांस–अंडे का सेवन निषेध है। जैन लोग सदियों से रात को खाना नहीं खाने और पानी छानकर पीने के नियम का पालन करते आ रहे हैं। आज वैज्ञानिक युग में डॉक्टर और डायटीशियन बेहतर जीवन शैली के लिए ये दोनों सलाहें देते हैं। सम्यक दर्शन सम्यक ज्ञान और सम्यक चरित्र तीनों जैन धर्म के त्रिरत्न कहलाते हैं। जैन दर्शन सही सोच, सही ज्ञान और सही आचरण के इन तीन रत्नों को अपनाने पर बल देता हैं। जैन दर्शन एक नास्तिक संप्रदाय है यह ईश्वर को सृष्टि का निर्माता या संहारक नहीं मानता। जैन दर्शन में किसी व्यक्ति की पूजा करने के बजाय उसके गुणों की पूजा की जाती है। कोई भी सामान्य व्यक्ति अपने पुरुषार्थ के बल पर कदम–दर–कदम आगे बढ़ते हुए मोक्ष प्राप्त करके स्वयं भगवान बन सकता है। जैन धर्म के युग पुरुषों 24 तीर्थंकरों ने भी इसी तरह तप और आत्मशुद्धि के माध्यम से मुक्ति प्राप्त की और

पूज्य बने।अपनी गलतियां को स्वीकार करके'सामायिक' ध्यान और आत्मचिंतन की जैन पद्धति है। इसमें ध्यान और स्वाध्याय से आत्मस्वरूप का चिंतन किया जाता है। इसमें अपने अपराधों और कमियों की आलोचना यानी प्रतिक्रमण भी शामिल है।और इसके लिए पापों और कषायों से दूर रहना पड़ता है। जैन दर्शन ने 5 प्रकार के पाप और 4 प्रकार की कषाय बताई हैं, जिनसे दूर रहना प्रत्येक व्यक्ति का कर्तव्य है। ये पांच पाप हैं– हिंसा, झूठ, चोरी, कुशील और परिग्रह। और चार कषाय हैं क्रोध, मान, माया, लोभ। माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों के लिये जैन दर्शन के सिद्धान्त बहुत उपयोगी मार्गदर्शक व सम्बल प्रदान करने वाले हैं। छात्रों के लिये अध्ययन में उच्च स्तरीय सफलता बहुत ही महत्वपूर्ण होती है वहीं दूसरी ओर असफलता का भय उन्हें घोर आशंकाओं से ग्रस्त कर देता है। उनकी दूसरी बड़ी समस्या महत्वपूर्ण विषयों में अरूचि या निम्नस्तरीय सफलता होती है। अध्ययन में अरूचि एक बड़ी समस्या है जो छात्रों व उनके आभिभावकों के समक्ष संकट खड़ा कर देती है। जैन दर्शन के अनुसार इस विश्व में जीव ही एक मात्र ज्ञान दर्शन चेतना सम्पन्न द्रव्य है। जैन दर्शन के मूर्धन्य विद्वानों ने कहा है कि आत्मा ज्ञान ही है, ज्ञान का ही बना हुआ है अतः वह ज्ञान के अतिरिक्त और क्या करे? हम अगर गम्भीरता से विचार करें तो जीव वास्तव में ज्ञान ही करता है, ज्ञान के अतिरिक्त अन्य समस्त कार्य तो जगत के पदार्थो में अनकी अपनी परिणमन योग्यता व गुणों के अनुसार स्वतः ही होते रहते हैं, जीवों में ज्ञान भी उनके क्षयोपशम के अनुसार न्यूनाधिक पाया जाता है तथा यह भी आवश्यक नहीं है कि सभी का क्षयोपशम एक सा ही हो। अतः छात्रों को प्रथमतः यह समझना चाहिये कि ज्ञानार्जन आत्मा की स्वाभाविक प्रवृति है, अतः उन्हें इच्छित विषयों के अध्ययन में मनोयोग से जुटना चाहिये। दूसरी बात, एक विषय में असफलता का अर्थ जीवन की संभावनाओं का अन्त नहीं है। क्योंकि कई बार व्यक्ति किसी एक विषय में असफल होने पर भी किसी अन्य विषय में बहुत अच्छी उपलब्धि अर्जित करते हैं। अन्ततोगत्वा भवितव्य ही व्यक्ति के जीवन की दिशा व दशा तय करता है।

जैनदर्शन में तनाव और तनावमुक्ति :– जैन दर्शन का एक सामान्य सिद्धान्त रहा है कि प्राणी कर्मों से बंधन को प्राप्त होता है और ज्ञान से मुक्ति को प्राप्त होता है, किन्तु ज्ञान और कर्म–दोनों की जन्मभूमि मानव मन है और इसलिए यह कहा गया है कि 'मन ही मनुष्य के बन्धन और मुक्ति का हेतु है जैन–कर्मसिद्धान्त यह मानता है कि मन से युक्त व्यक्ति ही घनीभूत कर्मों का बंध कर सकता है और मन से युक्त व्यक्ति ही मुक्ति को प्राप्त हो सकता है। इस प्रकार, मन ही मनुष्य के बंधन और मुक्ति. का मूलभूत हेतु है। मन के विषय ही दुःख (तनाव) के हेतु होते हैं। दूसरे शब्दों में कहें, तो तनाव उत्पन्न भी मन से ही होता है और तनाव से मुक्ति भी मन से ही सम्भव है। गीता में अर्जुन श्रीकृष्ण से कहता है– यह मन अत्यंत चंचल, विक्षोभ उत्पन्न करनेवाला और बड़ा बलवान है, इसका निरोध करना तो वायु को रोकने के समान अत्यन्त दुष्कर है। कृष्ण कहते हैं– निस्संदेह मन का निग्रह कठिनता से होता है, फिर भी अभ्यास और वैराग्य के द्वारा इसका निग्रह सम्भव है। अतः मन को साधने वाला तनाव को भी साध लेता है।

तनाव के लक्षण :– लंबे समय तक तनाव न केवल मानसिक स्वास्थ्य बल्कि शारीरिक स्वास्थ्य को भी प्रभावित कर सकता है। यह हमें सामाजिक रूप से भी प्रभावित करता है तनावों के कारण, शरीर स्वचालित रूप से रक्तचाप, हृदय गति, श्वसन, चयापचय और आपकी मांसपेशियों में रक्त के प्रवाह को बढ़ाता है। तनाव स्ट्रोक, दिल का दौरा, नर्वस सिस्टम में दर्द की अनुभूति, पेप्टिक अल्सर और अवसाद जैसी मानसिक बीमारियों का खतरा बढ़ा देता है।

आमतौर पर छात्रों में निम्न लक्षण तनाव के दौरान दिखाई देते हैं।

1. सामाजिक रूप से अलग–थलग महसूस करना

2. चिड़चिड़ापन और मूड खराब होना

3. खेल और कहीं आने जाने में रुचि न होना.

4. अत्यधिक चिंता और नकारात्मक विचार आत्महत्या जैसे विचार आना

5. परफॉरमेंस में कमी आना

6. नींद की समस्याएं और बेचौनी

7. सरदर्द और बदन दर्द

8. भूख में परिवर्तन.

9. पूरी तरह से खुद को खाली महसूस करना

10.दबाव में होने की प्रवृति

11. किसी भी कार्य को पूरा करने में असमर्थता महसूस करना.

12. जी मिचलाना और उल्टी जैसी फीलिंग होना

13. वैयसनो का शिकार हो जाना

14. नशे की प्रवृत्ति होना

15. झगड़ालू स्वभाव हो जाना

तनाव और अशांति :– जिन स्थितियों से तनाव उत्पन्न होता है उनसे अशांति मिलती है शोधों से ज्ञात होता है कि 90 प्रतिशत रोगों का कारण तनाव होता है। तनाव जीवन की अवांछित, नकारात्मक धारणाओं, दुर्घटनाओं से उत्पन्न होता है। तनाव से शांति के अभाव की स्थिति बन जाती है। अशांति से पीड़ा व कष्ट, कठिनाई का बोध होता है। शांति से सुख उत्पन्न होता है। परिहास, विनोद वृत्ति से तनाव को कम कर शांति पाई जा सकती है।जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में शांति आवश्यक है। टूटे हुए परिवार,वे परिवार जिनमें मुखिया का निधन हो गया हो, जो कर्ज में हो, वे परिवार जिनकी आर्थिक स्थिति दयनीय हो अशांति के शिकार होते हैं। पारिवारिक सदस्यों में परस्पर ईर्ष्या भाव, अशांति को जन्म देता है। सामाजिक शांति से तात्पर्य समाज में सुखद व्यवस्था तथा अपराधों से मुक्ति से है। लोग सहयोग से आनंदपूर्वक जीवन व्यतीत कर रहे हों और संघर्ष तनाव की कोई स्थिति न हो तो ऐसा समाज शांतिमय समाज कहा जाएगा। हृदयाघात, मस्तिष्काघात, अवसाद (डिप्रेशन), डाइबिटीज या मधुमेह आदि बीमारियाँ तनाव व अशांति का परिणाम हैं। तनाव से सिरदर्द, पेट दर्द, अनिद्रा, क्रोध, आक्रामकता, आत्महत्या अपराध आदि को भी बढ़ावा मिलता है। अतः स्वयं में शांति स्थापित करना अत्यंत आवश्यक है। इसी प्रकार किसी देश में कोई बाह्य आक्रमण न हो,आंतरिक विरोध के स्वर न हों, सांप्रदायिक धार्मिक सद्भावना हो, आतंकवाद, नक्सलवाद, भाषावाद, प्रांतवाद जैसी अवांछित स्थिति न हो। पर्याप्त रोजगार के अवसर हों सभी नागरिक खुशहाल जिंदगी व्यतीत करते हों तो ऐसी स्थितियाँ देश या राष्ट्र की शांति की ओर संकेत करती हैं।

जैन दर्शन पर आधारित जीवन शैली के उपयोग से माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों में तनाव से बचने के उपाय :– भावनात्मक अस्थिरता तनाव उत्पन्न होने के कारणों में से एक है। हरेक भावना के लिए हमारी श्वास में एक विशेष लय है। धीमी और लंबी श्वास संतोष व आनंद और उग्र श्वास तनाव का संकेत देती है। किशोरावस्था के विद्यार्थी में तनाव कम करने एवं अपने जीवन में शांति स्थापित करने के लिए प्रयोग निम्न उपाय कर सकते हैं।

(1) समय प्रबंधन – विद्यार्थियों में बेहतर टाइम मैनेजमेंट के अनेकों फायदे हैं। यह विद्यार्थियों को फोकस रखता है, लक्ष्य का स्पष्टीकरण एवं प्राथमिकताओं का बोध कराने के साथ–साथ यह तनाव को भी कम करता है। टाइम मैनेजमेंट को सुधारने का सबसे बेहतरीन तरीका यह है कि रूटीन बनाकर चलें, ताकि प्राथमिकता के हिसाब से सारा काम समय रहते पूरा कर सकें। प्रत्येक कार्य का अपना एक समय फिक्स करें और आलस्य से बचते हुए प्रत्येक कार्य को समय पर पूरा करने की कोशिश करें। यह विद्यार्थियों के जीवन में सकारात्मकता लेकर आता है।

(2) प्रकृति दर्शन – झरने, पहाड़, पेड़ पौधे, फूल, हरियाली, प्राकृतिक दृश्य, शांति प्रदान करते हैं। प्रदूषण से दूर शांत प्राकृतिक सौंदर्य विद्यार्थियों के मन में शांति उत्पन्न करता हैं। यथासंभव प्रकृति का संरक्षण करते हुए प्रकृति के सानिध्य में समय बिताने से मन शांत रहता है।

(3) स्वाध्याय – विद्यार्थियों में अच्छे साहित्य का पठन–पाठन ज्ञानवृद्धि व मनोरंजन के साथ आत्मा में शांति भर देता है। यह विद्यार्थियों को अनंत ऊर्जा देता है और उनकी रचनात्मक शक्ति का विकास करते हुए सर्वांगीण विकास करता है गांधी जी अपनी पुस्तक सत्य के साथ मेरे प्रयोग में कहते हैं''जब मुझे शंकाएं घेरती हैं, निराशाएं मेरा सामना करती हैं और मुझे ज्योति की किरण दृष्टिगोचर नहीं होती, उस समय मैं गीता की ओर ध्यान देता हूँ। जिसमें कोई न कोई श्लोक मुझे शांति की ओर ले जाता है अपनी पाठ्यवस्तु के साथ–साथ महापुरुषों का जीवन साहित्य भी विद्यार्थियों को अवश्य पढ़ना चाहिए।

(4) विजन में अस्पष्टता – जब कोई भी काम व्यक्ति बिना किसी उद्देश्य के करता हैं। तो यही कार्य आगे चलकर सबसे अधिक तनाव बढ़ाता है। अगर विद्यार्थियों को यह नहीं पता है कि उन्हें क्या चाहिए, तो वह हमेशा असमंजस की स्तिथि में रहेंगे और यह असमंजस सदैव अशांति और तनाव पैदा करेगी।

(5) सही दिनचर्या चुने – तनाव मुक्त रहने के लिए सही दिनचर्या अपनाना बहुत आवश्यक है। इसलिए अपनी दिनचर्या को सही बनाए और समय पर उठने से

लेकर व्यायाम योगा और संतुलित भोजन अपनी दिनचर्या में शामिल करें।

(6) संगीत – मधुर संगीत ऊर्जा, रचनात्मकता, एकाग्रता और सृजनात्मकता बढ़ाने के साथ साथ मन को शांत करता है। अतः सुरुचिपूर्ण मधुर संगीत का भी विद्यार्थियों में समावेश होना चाहिए लयबद्ध प्रार्थनाएं और देशभक्ति के गीत विद्यार्थियों के तनाव को कम करने में सहायता प्रदान कर सकते हैं

(7) खुलकर हंसना – खुलकर हंसना तनाव मुक्त करता है, यह सेहत के लिए भी अच्छा है। खुलकर हंसने से दिमाग में एंडोमॉर्फिन कैमिकल रिलीज होता है।इससे तनाव दूर होता है।

(8) अभिरुचि – अपनी अभिरुचि के कार्य में व्यस्त रहना तनाव को कम करता है बागवानी, चित्रकारी, भजन गाना, नृत्य, कविता लिखना, घूमना, लोगों से मिलना, बातें करना, आदि विविध प्रकार के अभिरुचि के कार्य मन को शांति पहुंचाते हैं।

(9) मेडीटेशन – तनाव को दूर करने के लिए ध्यान सबसे अच्छे उपायों में से एक है। इसे करने के लिए हमेशा शांत जगह चुननी चाहिए और शांत बैठकर ओउम् का जाप करना चाहिए ध्यान विद्यार्थियों के जीवन में ज्ञान चेतना और शांति लाता है।

(10) गहरी सांस – तनाव के समय रोजमर्रा की सभी कामों मुक्त होकर सांस पर ध्यान देना चाहिए। सांसों का अभ्यास विद्यार्थियों के जीवन में गहन शांति लाता है।

(11) लोककल्याण – परोपकार, दूसरों की सहायता, और सामाजिक कार्य करने से तनाव से मुक्ति मिलती है इनसे आत्म संतोष व आत्म शांति प्राप्त होती है।

(12) दायित्व निर्वाह यदि विद्यार्थी अपने दायित्व को समुचित प्रकार से निर्वाह करते हैं तो निश्चित रूप से आत्म सुख व आत्म शांति की अनुभूति होती है।

(13) प्रार्थना – यह आवश्यक नहीं कि धार्मिक या ईश प्रार्थना ही हो, ऐसी प्रार्थना जो आत्म बल दे, भी शांतिदायक है जैसे ऐसी शक्ति हमें देना दाता, मन का विश्वास कमजोर होना! या हम होंगे कामयाब एक दिन

(14) सामुदायिकता – अकेलापन किसी को भी शांति नहीं सकता। आपसी समझ और सौहार्द के साथ ही शांति का आगमन होता है

(15) आदर्श जीवन – प्रत्येक व्यक्ति के जीवन में कुछ सार्वभौमिक आदर्श अवश्य होते हैं यह सार्वभौमिक आदर्श ही व्यक्ति के जीवन का निर्माण करते हैं अतः विद्यार्थियों में आदर्श व्यक्तित्व का निर्माण भी होना चाहिए एक आदर्श गरिमामय व्यक्तित्व ही आंतरिक और बाह्य शांति प्राप्त कर सकता है।

जैन दर्शन की शांति उत्पन्न करने एवं तनाव को कम करने में उपयोगिता :– जैन दर्शन के पंच महाव्रत में निहित सार्वभौमिक सत्य वर्तमान समाज के लिए बहुत उपयोगी हो गये है। जैन दर्शन की शिक्षाओं में युद्ध और आतंकवाद के कारण हिंसा, धार्मिक असहिष्णुता, आर्थिक शोषण, पर्यावरण और प्राकृतिक असंतुलन जैसी वैश्विक समस्याओं का समाधान है। वर्तमान में हमारा समाज अशांति और तनाव का सामना कर रहा है और हम सभी तनाव को कम करने का समाधान ढूंढ रहे हैं, जैन दर्शन (महावीर दर्शन) और जैन शिक्षाएं वर्तमान परिपेक्ष्य में बहुत महत्वपूर्ण हैं। जैन धर्म के तीन बुनियादी सिद्धांतों अहिंसा, अनेकांत, अपरिग्रह के माध्यम से मानव जाति की इन सभी समस्याओं का हल संभव है। यदि मानव जाति केवल तीनों सिद्धांतों का भी पालन करती है, तो निश्चित रूप से मानव जीवन में शांति और सद्भाव स्थापित हो सकता है। मन की अशांति के लिए जिम्मेदार कारकों की पहचान करके ही समाधान खोजा जा सकता है। शांति केवल स्वतंत्रता, समानता और न्याय की उपस्थिति में प्राप्त की जा सकती है। ध्यान, योग और आधुनिक विज्ञान के संयोजन से पाश्विक प्रवृत्ति को खत्म करके एक शांतिपूर्ण समाज के निर्माण के लिए व्यक्ति के मन में दिव्य विचार को जागृत किया जा सकता है। अतः जैन दर्शन में निहित शांति शिक्षा को वर्तमान शिक्षा प्रणाली से जोड़ा जाना चाहिए जैन दर्शन कहता है कि जिसकी संविभाग की चेतना में विश्वास नहीं है वो मोक्ष का अधिकारी भी नहीं है। आनंद और शांति सभी प्राणियों का स्वभाव है। हर प्राणी दर्द और दुख से छुटकारा चाहता है और हमेशा खुश रहना चाहता है। किसी समुदाय या राष्ट्र की व्यापक समृद्धि, पूर्ण विकास, सांस्कृतिक मूल्यों के संरक्षण–संवर्धन, पर्यावरण संरक्षण और सुशासन की स्थापना के आधार पर निर्भर करती है। ये किसी भी लोकतांत्रिक प्रणाली के लिए आवश्यक विशेषताएं हैं। विद्यार्थियों में तनाव वर्तमान जीवन शैली के कारण हैं अंतहीन प्रतिस्पर्धा और सामाजिक मान्यताओं पर आधारित हमारी महत्वकांक्षाएं हमारे विद्यार्थियों पर

अनावश्यक तनाव डालती हैं। प्रकृति के साथ हमारा तालमेल बिगड़ जाने से हमारे स्वास्थ्य का भी तालमेल बिगड़ चुका है। हम प्रकृति को निर्जीव वस्तु मान चुके हैं और उसका अंत हीन दोहन कर रहे हैं अंततोगत्वा यह तनाव का ही कारण बनता है जैन दर्शन कहता है कि केवल मनुष्य और पशु ही नहीं, बल्कि पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि और वनस्पति भी जीवित प्राणी हैं। 'षटजीवनिकाय' सिद्धांत कहता है कि प्रकृति के साथ अनावश्यक रूप से उपभोग और छेड़ छाड़ नहीं करनी चाहिए, जिससे पारिस्थितिक तंत्र की सुरक्षा होती है। जैन दर्शन को स्थापित करने वाले युगपुरुष भगवान महावीर ने कहा कि हमेशा सभी जीवों के प्रति दया, समभाव, क्षमा, और प्रेम रखना चाहिए। जैन धर्म के अनुसार हमें प्राकृतिक संसाधनों के उपभोग या अपने पर्यावरण के प्रयोग में भी अत्यधिक सावधानी रखनी चाहिए क्योंकि वायु, जल, अग्नि और पौधों के अनावश्यक इस्तेमाल से प्राणियों की मृत्यु हो जाती है। वास्तव में हमारे अस्तित्व के लिए हमें इनका सदुपयोग करने की आवश्यकता है और इसलिए महावीर ने कहा प्रकृति के उपभोग मे संयम बरतना चाहिए आत्मसंयम के दृष्टिकोण को अपनाकर इस तरह के संसाधनों के उपयोग को सीमित किया जा सकता है। जैन दर्शन मानता है कि मानव जीवन सर्वोच्च है और इसमें सकारात्मक दृष्टिकोण रखने की आवश्यकता है। इस तथ्य पर जोर देते हुए जैन दर्शन ने सत्य और अहिंसा का सार्वभौमिक सिद्धांत दिया और कहा कि सभी मनुष्य अपने रूप और आकार के बावजूद समान हैं और समान रूप से प्रेम करने के योग्य हैं। इन सिद्धांतों के अनुसार जीवन यापन करने से तनाव उत्पन्न होने का प्रश्न ही उत्पन्न नहीं होता। वस्तुतः तनाव एक मानसिक ऐठन के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं। यदि जीवन शैली और विचार संतुलित रहेंगे तो तनाव उत्पन्न होगा ही नहीं। अतःजैन दर्शन के पंच महाव्रत को अपनाकर संतुलित विकास के माध्यम से माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों के साथ साथ समाज के आनंद और शांति को भी सुनिश्चित किया जा सकता है

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. तत्वार्थसूत्र ६/२५, पृ. ४३४ : विवेचक पं. फूलचन्द्र सिद्धान्तशास्त्री
2. श्री आचारांगसूत्रम् १/६/३ पु. १०६: संपादक शोभाचन्द्र भारिल्ल श्री अमोल जैन ज्ञानालय, धुलिया, नवम्बर २६६०
3. स्थानांगसूत्रम् (चतुर्थोभाग) 'शिष्याध्यापनं वाचना'–धवला ६/४,१–५४, २६२/८
4. षट्खण्डागम १३/५, ५ सूत्र ४/१६८ – धवला १/१, १, १/८३/१
5. जैनेन्द्रसिद्धान्त कोश भाग २
6. विशेषावश्यकभाष्य
7. आप्तपरीक्षा, स्याद्वादमंजरी
8. अनगार धर्मामृत महापुराण, षोडश
9. विशेषावश्यकभाष्यम् ।। १४३७।। निर्युक्ति १४१,
10. आदिपुराण में प्रतिपादित भारत डॉ. नेमिचन्द्रशास्त्री, पृ. २५५
11. नियमसार
12. इष्टोपदेश
13. रत्नकरण्ड श्रावकाचार
14. गोम्मटसार
15. रयणसार
16. मैत्राण्युपनिषद, ब्रह्मबिन्दूपनिषद, उत्तराध्ययनसूत्र, उत्तराध्ययनसूत्र
17. UNESCO (1996) Learning : The Treasure Within, Report of the International Commission of Education for the Twenty First Century.
18. UNESCO (2001) Learning the way of Peace, ATeacher's Guide to Peace Education.
19. N.C.E.R.T. (2004) Peace Education.
20. National Curriculum Frameworks (2005) for School Education, New Delhi.
21. Internet Wikipedia.

Swadeshi Research Foundation A Monthly Journal of Multidisciplinary Research
International Peer Reviewed, Refereed, Indexing & Impact Factor - 5.2, Ex- UGC S.N. 4990
ISSN : 2394-3580, Vol. – 9, No. – 3, Jan. – 2022, Conference Special Issues
2022

पर्यावरण विषमता का मानवजाति पर प्रभाव

कमलेश कुमार जोशी
सहायक आचार्य, हिन्दी, एस.बी.डी. राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सरदारशहर, चूरू

[1]जगत में आजकल सर्वाधिक चर्चित विषय 'पर्यावरण' और उससे जुड़ी अनेक समस्याएँ हैं। इन समस्याओं को कैसे जन्म मिला, यह जानना इनके निराकरण हेतु मुख्य कदम सिद्ध होगा।

हम जिस पृथ्वी पर जीवन व्यतीत कर रहे है, एक लघु और महत्त्वपूर्ण ग्रह है। संसार अथवा सृष्टि में अनेक ग्रहों में से पृथ्वी ही उतनी महत्त्वपूर्ण है जहाँ मानव जन–जीवन की सुविधाएँ वर्तमान में है। जहाँ प्रकृति ने हमें नाना प्रकार की सम्पदाएँ जल, भूमि, वायु, प्रकाश, ऊर्जा, आकाश जैसी बहुमूल्य सम्पति प्रदान की है। परन्तु खेद का विषय है कि हम स्वयं ही इस सुख के क्षय के कारण बनते जा रहे हैं। और प्राकृतिक पर्यावरण के सन्तुलित योग को विश्रृंखलित कर रहे है। इससे पृथ्वी पर पर्यावरण का स्वास्थ्य निर्बल बनता जा रहा है। वस्तुतः पृथ्वी के सुखदायी वातावरण को दूषित बनाने का मुख्य कार्य स्वयं मानव के कन्धों ने ही किया है। पृथ्वी पर ऊर्जा व सम्पदाओं का इतनी तेजी से विभिन्न ढंगों से अपव्यय हो रहा है कि उनके कारण वातावरणीय ढाँचा विखंड़ित होकर समस्याग्रसित बन उठा है।[1]

[2]विकास कहीं विनाश न बन जाए। विज्ञान ने मानव को प्रगति के पथ पर आगे बढ़ने के लिए असीम अवसर प्रदान किये है। लेकिन मनुष्य ने बिना दुष्परिणामों के बारे में सोचे प्रकृति के साथ खिलवाड़ किये है। जिनके फलस्वरूप जलीय जीवों की मृत्यु, वन्यजीवों की विलुप्तता, पृथ्वी पर बढ़ते कचरे का अम्बार, जनसंख्या विस्फोट, पर्यावरण प्रदूषण से बदलते मौसम का मिजाज, ग्लोबल वार्मिंग, ओजोन परत में छिद्र, ग्रीन हाऊस प्रभाव जैसी पर्यावरणीय समस्याओं का प्रादुर्भाव हुआ है।[2]

पर्यावरण विषमता :– [1]विषमता एवं ऐसी अवांछित स्थिति है जिसमें भौतिक, रासायनिक और जैविक परिवर्तनों के द्वारा वायु, जल, और भूमि अपनी नैसर्गिक गुणवता खो बैठते हैं और जीवधारियों के लिए हानिकारक सिद्ध होने लगते है। इससे जीवन प्रक्रिया बाधित हो कर प्रगति रूक जाती है और सांस्कृतिक जीवन को क्षति पहुंचती है।[1]

पर्यावरण विषमता और मानव :– [1]विकास के अनेक कार्यों और देशों में औद्योगिक प्रगति ने भी मानव स्वास्थ्य को विपरित दिशा में प्रभावित किया है बड़े नगरों में इस दूषित पर्यावरण से मानव स्वास्थ्य संकटग्रस्त बना है पर्यावरण विषमता के कारण हवा की खराब गुणवत्ता मानव सहित कई जीवों को मार सकती है। इस विषमता के कारण गले में सूजन अस्थमा, ह्रदय संबन्धी रोग, श्वसन सम्बन्धी कई बीमारियाँ हो सकती है। इसके साथ–साथ मानव जाति को निम्न कारण प्रभावित करते है।[1]

(1) ओजोन परत में छिद्र :– [2]पृथ्वी के वायुमण्डल में ओजोन गैस की परत ओजोन मण्डल में पायी जाती है जो पृथ्वी के लिए सुरक्षा कवच का काम करती है। सूर्य से आने वाली पराबैंगनी किरणों को यह सोख लेती है, जिससे ये किरणे पृथ्वी पर नहीं पहुँच पाती है एवं जीवधारियों को हानिकारक किरणों से बचाती है।

इस ओजोन परत का ह्रास लगातार बढ़ रहा है। एक प्रतिशत ओजोन की मात्रा में कमी से दो प्रतिशत पराबैंगनी किरणों की मात्रा पृथ्वी पर बढ़ जायेगी, जिससे पृथ्वी पर दो हजार कैन्सर रोगियों की संख्या बढ़ जायेगी।[2]

[5]पराबैंगनी किरणों का जीव–जन्तुओं पर आनुवंशिक प्रभाव भी पड़ता है। इससे जीवों में आनुवंशिक विकृति होने लगती है। इसके प्रभाव से मनुष्य की त्वचा झुलस जाती और त्वचा कैन्सर की संख्या में तीव्र दर से वृद्धि होने लगती है। त्वचा की सबसे ऊपरी स्तर की कोशिकाएं टूटकर क्षतिग्रस्त हो जाती है। और हिस्टेमीन नामक, रसायन जो इन क्षतिग्रस्त कोशिकाओं से उत्पादित होते है इसके प्रभाव से निमोनिया, ब्रॉकाइटिस तथा अल्सर जैसे रोगों की संख्या में वृद्धि होने लगती है।[5]

(2) अम्लीय वर्षा :– [2]बढ़ते उद्योग धन्धों, मोटर वाहनों और बिजली घरों से लाखों टन CO_2, SO_2 NO_2 आदि गैसें निकलकर वायुमण्डल में इक्ट्ठी होती है। ये गैसें वर्षा के पानी व वायुमण्डलीय जल वाष्प से अभिक्रिया कर कार्बनिक अम्ल सल्फ्यूरिक अम्ल, नाइट्रीक अम्ल बनाकर वर्षा के निर्मल जल को अम्ल में बदल देती है। अम्लीय वर्षा का सभी पादप व प्राणियों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। मिट्टी की अम्लता बढ़ जाती है। जिससे उसकी उर्वरता कम हो जाती है। चूना–पत्थर व

संगमरमर से बनी इमारतों पर भी इसका बहुत प्रभाव पड़ता है।

मथुरा तेल शोधक कारखाने के प्रदूषण से होने वाली अम्लीय वर्षा के कारण ताजमहल को खतरा उत्पन्न हो गया।

अम्ल वर्षा आर्द्र और शुष्क दोनों प्रकार की होती है। जिस अम्ल वर्षा न कहकर 'अम्ल विक्षेपण' कहा जाना अधिक उपयुक्त प्रतीत होता है आर्द्र विक्षेपण पर्यावरण के लिए अधिक घातक होता है। अम्ल वर्षा लगभग 70 प्रतिशत सल्फर के आक्साइड और 30 प्रतिशत नाइट्रोजन के ऑक्साइड के फलस्वरूप होती है। अम्ल वर्षा का प्रभाव व्यापक क्षेत्र पर पड़ता है और इसके उद्‌गम स्रोत से हजारों किलोमिटर दूर के क्षेत्रों में भी इसका दुष्प्रभाव देखा जा सकता है। अम्ल वर्षा से जुड़ी एक गम्भीर समस्या 'अम्ल शाक' की है। ठण्डे स्थानों पर वर्षा से जब कभी भी किसी कारणवश प्रदूषणों के सम्पर्क से ढेर सारी अम्लीय बर्फ पिघलकर आ जाती है तो उसका ph मान अचानक ही बहुत नीचे गिर जाता है। इस घटना को 'अम्ल शाक' कहते हैं। अम्ल शाक से हजारों की संख्या में जलीय प्राणी विशेष रूप से मछलियाँ एक साथ ही मर जाती है।[2]

(3) हरित गृह प्रभाव :– [3]हरित गृह हमारे पृथ्वी के लिए उस अवरोधक का कार्य करता है जिसमें तापक्रम इतना सन्तुलित बना रहे ताकि जीवन के लिए अनुकूल हो। लेकिन अब यह विश्व पर्यावरण को खतरनाक संकेत देने लग गया है। धरती से यह पहला अवरोध 39 किमी. ऊपर जिसका निर्माण हरित गृह गैसों से हुआ है इसमें 3 प्रमुख गैसें CO_2, SO_2, No_2 प्रमुख है।

एशिया के चावल और गन्ने के खेत और दक्षिणी अमेरिका के पशु विश्व–तापक्रम में वृद्धि के कारण बने है। क्योंकि चावल के खेतों में जो जीवाणु रहते है वे मेथेन CH_4 गैस उत्पन्न करते हैं।

वर्तमान में CO_2 प्रमुख ग्रीन हाउस गैस है जिसकी बढ़ती मात्रा से विश्व–तापक्रम में वृद्धि हुई है। विश्व–तापक्रम में 4^0 से 6^0 तक वृद्धि हुई है और समुद्र का स्तर 12 से.मी. तक बढ़ गया है। तापक्रम के परिणाम स्वरूप ध्रुवों की बर्फ पिघलेगी और समुद्र जल स्तर और अधिक बढेगा।[3]

[5]नई दिल्ली में आयोजित 'अन्तर्राष्ट्रीय ऊर्जा सम्मेलन– 1990 में वैज्ञानिकों ने इस तथ्य को स्वीकार किया कि ग्रीन हाउस गैसों का स्तर जितना बढता जाएगा, उतना ही ज्यादा वह सूर्य की गर्मी को अवशोषित कर वातावरण का तापक्रम बढाती जाएगी फलतः जलवायु में जो भयंकर परिवर्तन होंगे उससे बाढ, सूखा, जैसा प्राकृतिक प्रकोप बढ़ेगा और ध्रुवक्षेत्रों की बर्फ के पिघलने से भारत के तटवर्ती क्षेत्र बांग्लादेश तथा मालद्वीप जैसे अनेक देशों के काफी भू–भाग जलमग्न हो जाएगे।

ग्रीन हाऊस प्रभाव का खतरा मात्र समुद्री जल में वृद्धि ही नहीं अपितु पृथ्वी के तापमान में अतिशय वृद्धि से मौसम में भी भारी बदलाव आएगा। कहीं सूखा पड़ेगा कहीं गर्म हवाएं चलेगी। कहीं तूफान एवं कहीं बाढ़ आएगी।

1987 में भारत में पड़े भयंकर सूखे का परिणाम अभी भी हमारी आँखों के सामने है कैरेबियन देशों में सैंकड़ों की जान लेने वाले समुद्री तूफान, मोजाम्बिक में पड़ा अकाल जिससे हजारों लोगों को भूख से तड़प–तड़पकर मर गये। आदि अनेक ऐसी आपदाएं घट चुकी है।[5]

(4)नाभिकीय दुर्घटनाएं :– [5]चेर्नोबिल परमाणु दुर्घटना 26 अप्रेल 1986 को घटित हुई। चैर्नोबिल भट्‌टी में आग लगने से रेडियों सक्रिय धूल 16 कि.मी. से अधिक क्षेत्र में फैल गई। इसका प्रभाव अन्य देश जैसे स्वीडन नार्वे, पोलेण्ड और रूमानिया पर पड़ा। इन देशों में कैन्सर से मरने वालों की संख्या में अप्रत्याशित वृद्धि हुई।[5]

(6) भोपाल गैस काण्ड :– [6]भारत के मध्यप्रदेश राज्य के भोपाल शहर में 03 दिसम्बर 1984 को एक भयानक औद्योगिक दुर्घटना हुई। इसे भोपाल गैस काण्ड या भोपाल गैस त्रासदी के नाम से जाना जाता है। भोपाल में स्थित यूनियन कार्बाइड नामक कंपनी के कारखाने से एक जहरीली गैस का रिसाव हुआ जिससे लगभग 15000 से अधिक लोगों की जान गई तथा बहुत सारे लोग अनेक तरह की शारीरिक अपंगता से लेकर अंधेपन के शिकार हुए।

भोपाल गैस काण्ड में मिथाइल आइसों साइनाइट नामक जहरीली गैस का रिसाव हुआ। जिसका उपयोग कीटनाशक बनाने के लिए किया जाता था। भोपाल गैस त्रासदी को मानवीय समुदाय और पर्यावरण को सबसे ज्यादा प्रभावित करने वाली औद्योगिक दुर्घटनाओं में गिना जाता है।[6]

पर्यावरण के प्रति जन चेतना जाग्रत करने की आवश्यकता :– [1]पर्यावरण की सुरक्षा व उसे जन कल्याणकारी बनाए रखने हेतु प्रत्येक व्यक्ति को चेताना आवश्यक है। इसके साथ–साथ समस्त समाज का दायित्व है कि वह पर्यावरण के प्रति जाग्रत बने। पर्यावरणीय शिक्षा का ज्ञान घर, परिवार, समाज,

समुदाय और क्षेत्र के सभी घटकों में प्रचारित करने हेतु व्यावहारिक कदम उठाए जाने आवश्यक है।[1]

[4]वर्तमान विश्व का पर्यावरण एक चिन्ता का विषय है क्योंकि इसका स्तर नीचे गिरता जा रहा है। पर्यावरण सुधार कार्यक्रम के लिये किये गये उपायों के सम्बन्ध में कहा जा सकता है कि 'मर्ज बढता गया ज्यों–ज्यों दवा की'। एक ओर पर्यावरण का अवकर्षण तथा दूसरी ओर इसके संकट से बेखबर स्वार्थी तत्व इसका बेरहमी से शोषण कर रहे हैं। पर्यावरण के संरक्षण हेतु समन्वित प्रयासों की आवश्यकता है। इसमें सरकार, समाजसेवी संस्थायें, वैज्ञानिक, शिक्षाविद् तथा प्रत्येक व्यक्ति का सहयोग होना चाहिए। पर्यावरण ही जीवन है और इसका संरक्षण हमारा पुनीत कर्तव्य है। हमें केवल अपना जीवन ही नहीं सुधारना है अपितु भविष्य को भी सुरक्षित करना है अतः पर्यावरण को संतुलित बनाना है। इसकी गुणवता में सुधार करना है। यह एक राष्ट्रीय कार्य है।[4]

सन्दर्भ ग्रंथ सूची :–

1. पर्यावरण अध्ययन पृ.सं. 03,37,247 लेखक डॉ.एल. एन. वर्मा, डॉ.एल.सी.खत्री
2. पर्यावरण अध्ययन के मूल तत्व पृ.27,28 लेखक एन.एस. राठौड़, एस.एस. चारण, आर.एस. पोटलिया
3. पर्यावरण प्रबंधन एवं विकास पृ.सं. 61,105 लेखक आर.के. गुर्जर
4. पर्यावरण एवं पारिस्थितिकी भूगोल पृ.268 लेखक डॉ. हरिमोहन सक्सेना
5. पर्यावरण अध्ययन आस्था प्रकाशन, अजमेर पृ.सं. 220, 238 लेखक डॉ. मनोज कुमार यादव, डॉ. अनुपमा यादव
6. https://hi.m.wikipedia.org

Swadeshi Research Foundation A Monthly Journal of Multidisciplinary Research
International Peer Reviewed, Refereed, Indexing & Impact Factor - 5.2, Ex- UGC S.N. 4990
ISSN : 2394-3580, Vol. – 9, No. – 3, Jan. – 2022, Conference Special Issues
2022

आदिवासी क्षेत्र में शिक्षा का विकास चुनौतियाँ एंव उपाय

डॉ. दीप्ति सिंह
सहायक प्राध्यापक, राजनीति शास्त्र विभाग, शासकीय नवीन महाविद्यालय केशवाही, जिला–शहडोल (म.प्र.)

वर्तमान में लगभग सभी देशों में अनिवार्य एवं निःशुल्क शिक्षा का प्रावधान लागू है। प्राथमिक शिक्षा को सर्वसुलभ बनाने अर्थात् जन शिक्षा में परिवर्तित करने के लिए ही यह प्रावधान रखा गया है। किसी भी राष्ट्र की प्रगति एक निश्चित शिक्षा नीति, निश्चित शिक्षा प्रणाली पर निर्भर होती है। प्राथमिक शिक्षा 6 वर्ष की आयु से लेकर 14 वर्ष तक के आयु वर्ग के बच्चों के लिये निर्धारित की गयी है, जो कक्षा एक से आठ तक संचालित की जाती है। भारतीय शिक्षा व्यवस्था में प्राथमिक शिक्षा प्रथम प्राथमिकता की वस्तु है। प्राथमिक शिक्षा, देश की भावी पीढ़ी को ज्ञान प्रदान करने तथा उनके चरित्र निर्माण करने में अत्यंत सहायक होती है।

भारत में एक वर्ग ऐसा भी है, जो आज के प्रगतिशील सामाजिक–आर्थिक, राजनैतिक और शैक्षिक क्षेत्र में दयनीय रूप से पिछड़ा हुआ है और वह वर्ग है 'अनुसूचित जनजाति'। 26 जनवरी 1950 को भारतीय संविधान के लागू होने के पश्चात् ही आदिवासियों तथा जनजाति समुदायों को "अनुसूचित जनजाति" की विशिष्ट संज्ञा देने की आवश्यकता महसूस हुई। अतः सर्वप्रथम "आदिम जनजातियों" को अनुसूचित करने का प्रयास 1931 की जनगणना के समय हुआ। सन् 1950 में राष्ट्रपति ने विशेष आज्ञा द्वारा ऐसे आदिवासियों की सूची प्रसारित की जिन्हें "अनुसूचित जनजाति" की संज्ञा प्रदान की गई। भारत में 1950 में जनजाति लगभग 212 थी, जो 1971 में लगभग 527 तक जा पहुंची। भारत में वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार अनुसूचित जातियों के रूप में अधिसूचित विशिष्ट समूहों की संख्या 705 है। समय–समय पर इस सूची में नाम जोड़ें जाते रहे हैं।

वे आदिम जनजातियाँ जिनका उल्लेख भारतीय संविधान की अनुसूची में किया गया है, अनुसूचित जनजाति कहलाती हैं। अनुच्छेद 342 के अन्तर्गत राष्ट्रपति किसी भी राज्य या केन्द शासित प्रदेश के संबंध में जनजातियों या जनजाति समुदायों या इन समुदायों के एक भाग को उसी राज्य या केन्द्र शासित प्रदेश से संबंधित अनुसूचित जनजाति घोषित कर सकता हैं।

भारतीय संविधान में "जनजाति" तथा "आदिवासी" शब्दों को ही समानार्थक रूप से स्वीकार किया गया है, जिसका अंग्रेजी पर्याय "ट्राईब" रोमन शब्द "ट्राईबुआ" से बना है, और जिसका अर्थ है–"एक राजनैतिक इकाई"। पहले इस शब्द का प्रयोग उन सामाजिक समूहों के लिए किया जाता था जो अपने भू–भाग से परिभाषित होते थे। "ट्राइब" शब्द का उद्भव लैटिन भाषा के "ट्राइब्स" से हुआ है जिसका अर्थ है – समाज के विभिन्न हिस्से या भाग। इसके पूर्व रोम में इस शब्द का प्रयोग समाज के विभिन्न भागों के लिए किया जाता था। बाद में, इसका प्रयोग समाज के निर्धन वर्ग के लिए हुआ। यूरोप और अफ्रीका में इस शब्द के स्थान पर ऐसे समुदायों के लिए देशज या देशी लोग (Indigenous) शब्दावली का प्रयोग किया जाता हैं। भारत में प्रचलित "जनजाति" शब्द का अर्थ जनसमुदाय की उस श्रेणी से है जो अनुसूचित जनजातियों की सूची में सम्मिलित हैं।

किसी समुदाय को 'अनुसूचित जनजाति' के रूप में चिन्हित करने के लिए उस समुदाय में निम्नलिखित विशेषतायें या लक्षण होने आवश्यक हैं–

- आदिम लक्षण,
- एक विशिष्ट संस्कृति,
- बाहरी जनों से सम्पर्क स्थापित करने में संकोच व कतराना,
- भौगोलिक अलगाव व
- सामाजिक तथा आर्थिक पिछड़ापन।

ये समुदाय, आज भी अनेक प्रकार की असुविधाओं, सामाजिक तिरस्कार और आर्थिक वंचनाओं से पीड़ित हैं। विकास की मुख्य धारा से कटा हुआ हैं। ये आदिवासी समूह, सुंदूर वनांचलों में निवास करने वाली, पृथक, विकास के पहुँच से दूर, अपने संस्कृति और समाज में रहने वाली अत्यंत पिछड़ी जनजातियाँ हैं। इनका यह अलगाव स्वरूप उनके राजनैतिक, सामाजिक, आर्थिक पिछड़ेपन के लिए काफी हद तक जिम्मेदार हैं, जिसका मुख्य कारण इनमें अज्ञानता हैं। ये केवल प्रकृतिवादी होते है, अतः इन्हें समाज के मुख्य धारा में लाने के लिए शिक्षित करना अनिवार्य हैं।

साधारण शब्दों में अनुसूचित जनजाति वह

समूह हैं जो पूर्व सभ्यताकाल के जीवन प्रतिमानों से संबंधित हैं। जनजाति समुदाय के सदस्य अशिक्षित तथा सभ्यता से दूर प्राचीन आर्थिक और सामाजिक जीवन के प्रतिनिधि कहे जा सकते हैं। अपने विशिष्ट सामाजिक संगठन और सांस्कृतिक जीवन के साथ–साथ जंगलों, पर्वतों, पठारों आदि निर्जन क्षेत्रों में निवास करने के कारण, जनजातियों में अन्य सभ्य समाजों की तुलना में अनेकों विभिन्नताएँ पायी जाती है।

अतः अनुसूचित जनजाति से आशय उस सामाजिक समूह से हैं, जिसमें एकता की भावना हो, रक्षा की आवश्यकता हो, धर्म एवं राजनीतिक संगठन हो, गोत्रों का अलग अस्तित्व हो, एक सामान्य धर्म हो और इसीलिए जनजातियों को अनेक नामों से जाना जाता है इन्हें आदिवासी आदिम, पर्वतीय जनजातियों एवं देश के मूलनिवासी आदि नामों से संबंधित किया है, किन्तु वर्तमान भारत में "ट्राइब" शब्द के स्थान पर "शिडयूल्ड ट्राइब" मानक शब्द है, जो संविधान में वर्णित है तथा जिसका हिन्दी रुपान्तरण "अनुसूचित जनजाति" हैं।

भारत में शिक्षा के अवसरों की समानता नहीं है। एक सामान्य वर्ग के व्यक्ति के बच्चे पब्लिक स्कूल में पढ़ते हैं तो जनजाति समुदाय के बच्चें साधारण विद्यालय में भी नही जा पाते हैं ऐसे स्थानों पर प्राथमिक, माध्यमिक व उच्च शैक्षिक संस्थाएँ तक नहीं है। जनजाति समुदाय के बच्चों को वैसी शिक्षा का अवसर नहीं मिल पाता जैसा सामान्य वर्ग के बच्चों को मिलता है। भारत सरकार द्वारा शिक्षा के महत्व को समझते हुए आर्थिक पैमाने में विशेष रुप से पिछड़ें समूहों में सभी के लिए शिक्षा हासिल करने के प्रयास की शुरुआत कब की हो चुकी हैं।

जनजाति समुदाय अब शिक्षा के महत्व को समझने लगे हैं और वे शिक्षा के अवसरों की मांग भी कर रहे है। सरकार द्वारा उनके लिए छात्रावृत्तियों या आरक्षित प्रवेश या छात्रावास सुविधाओं की नीतियों को अपनाया भी जा रहा है। परंतु आधुनिक स्कूलों की शिक्षा प्रणाली वहां सफल नहीं हो पा रही है। एक तो नितान्त गरीबी उन्हें आगे बढ़ने नहीं देती और वे बीच में ही पढ़ाई छोड़ देते हैं, दूसरे अक्षर ज्ञान पर आधारित पाठ्यक्रम जनजातियों के बच्चों को आकर्षित नहीं कर पाते।

अनुसूचित जनजातियों की शैक्षिक समस्याएं अनेक आयाम वाली है। ये मोटे तौर पर दो स्त्रोतों से प्रभावित कहें जा सकते है– एक, शिक्षा में उनका नमांकन के लिए पर्याप्त प्रेरको और परिस्थितियों का न होना और दूसरा, पराम्परागत दृष्टि से उनकी सामाजिक स्थिति का बहुत निम्न होना। जब तक इन दोनों स्त्रोतो को काटने के प्रयास नहीं किये जाएंगे, तब तक अनुसूचित जनजातियों में शिक्षा की समस्याएं बनी ही रहेंगी। स्पष्ट है कि शिक्षा के पाठ्यक्रम व शिक्षण विधि में भी परिवर्तन करना होगा। समाज में जनजाति समुदाय की हालत सुधारने व उन्हें शिक्षा देने की व्यवस्था करनी होगी ताकि जनजाति समुदाय को अवसर की अधिकाधिक समानता प्राप्त हो सकें।

भारत का आदिवासी मूलतः किसान हैं और जल–जंगल–जमीन से उसका नाभि–नाल का रिश्ता हैं। वह जंगल के उत्पाद पर गुजर–बसर करता हैं और प्रकृति के साथ सहयोगी की भूमिका निभाते हुए, उसकी रक्षा भी करता हैं। वह उसका उपभोक्ता भी हैं और पोषक भी। विडम्बना यह हैं कि भारत के इस आदिवासी समूह या वर्ग से भारत की शेष आबादी आज भी पूरी तरह परिचित नहीं हैं और तो और, जो लोग भारत में उन पर राज कर रहे हैं, वे भी उनकी संस्कृति, भाषा, जीवन शैली, मूल्यों, आचार संहिताओं तथा उनकी सर्व सहमति व लोकतांत्रिक प्रशासनिक व्यवस्था से अनभिज्ञ हैं।

आदिवासी क्षेत्रों में आज भी शिक्षा के प्रति रुचि पैदा करना नितान्त आवश्यक हैं। आदिवासी माता–पिता जागरूकता की कमी के कारण प्रायः अपने बच्चों को स्कूल नहीं भेजते। फलतः सरकारी प्रयास के बावजूद लक्ष्य की पूर्ति नहीं होती। शिक्षा के प्रति रुचि पैदा करने हेतु इन बातों पर ध्यान केन्द्रित करना आवश्यक हैं–

- स्थानीय समाजसेवी एवं बुद्धिजीवियों का सहयोग।
- शिक्षकों को दायित्वों से परिचय कराना।
- शिक्षक–अभिभावकों की बैठक की सुनिश्चितता।
- शिक्षण पद्धति में परिवर्तन हेतु सुझाव।
- मातृभाषा के साथ–साथ हिन्दी एवं अंग्रेजी भाषा की प्रारम्भिक जानकारी।
- शिक्षा के प्रति रुचि पैदा करना।

आदिवासी समुदायों में सबसे बड़ी समस्या उनके विकास को लेकर हैं। सरकार ने इनके उत्थान एवं विकास के लिये छात्रावास तो बहुत बनवाये, लेकिन वहॉ या तो खाना ही नहीं मिलता या मिलता हैं तो इतना कम कि पेट ही नहीं भरता या बीमार कर देता हैं। तब ऐसे छात्रावासों में रहेगा कौन ? छात्रावास

खाली तो स्कूल भी खाली। सरकार वजीफा देती हैं आदिवासी छात्रों को लेकिन आधा पैसा वितरण करने वाले रख लेते हैं और जो मिलता हैं वह इतनी देर से कि उसका उपयोग पढ़ाई की बजाय दूसरी जगह हो जाता हैं।

भारत में शिक्षा व्यवस्था में सुधार एक चुनौती से कम नहीं हैं। भारत हो या देश का कोई भी राज्य सभी जगह सरकारी योजनाओं का लाभ सुनिश्चित वर्ग की पहुंच से परे हैं। जहाँ तक मेरे विचार से इसके पीछे योजनाओं का जमीनी स्तर पर किया गया अध्ययन बहुत कमजोर होना हैं। बच्चे स्कूल छोड़कर क्यों भागते हैं? इस समस्या के संदर्भ में कभी शिक्षकों पर दोष मढ़ा जाता हैं तो कभी उनकी आर्थिक स्थिति पर लेकिन एक बड़ा कारण शिक्षण का वह भाषा माध्यम भी हैं जिसे न बच्चे समझते हैं और न जिसका सामग्री से जुड़ाव अनुभव करते हैं। आदिवासी क्षेत्र और आदिवासी जनजातियों के विकास की योजनाओं को बनाने और लागू करने में राज्य सरकारें आदिवासी विकास परिषदों को भागीदार नहीं बना रही हैं। इसका परिणाम हैं कि संविधान द्वारा परिषदों को सौंपे गये कार्यों की उपलब्धि वांछित स्तर तक नहीं हुई हैं। आजादी के बाद भारत में आदिवासियों के पिछड़ेपन का प्रमुख कारण, सरकार की घोषित नीतियों और वर्चस्व रखने वाली जनसंख्या के हितों में निहित टकराव हैं।

भारत में, आदिवासी शिक्षा और आदिवासी विकास, नीतिपरख है। फिर भी आदिवासी शिक्षा को बढ़ावा देने के लिए एक नई सोच और नई दिशा में नए सिरे से प्रयास की जरूरत है, जिसमें नई नीति और प्रशासनिक पहलूओं को आदिवासी शिक्षा की गुणवत्ता के सुधार पर केंद्रित करना चाहिए। जैसा कि सामान्य विकास प्रक्रिया द्वारा आदिवासी समुदायों को संविधान के प्रावधान के द्वारा अधिसूचित किया गया है व सरकार इनके उत्थान के लिए विशेष कार्यक्रम व योजनाएँ क्रियान्वित कर रही हैं। विभिन्न शासकीय योजनाकारों द्वारा आदिवासियों की समस्याओं से निपटने व अन्य सुविधाएँ देने हेतु शिक्षा को अनिवार्य कर दिया गया है, फिर भी आदिवासी समुदायों में शिक्षा का विकास कुछ हद तक दृष्टिगोचर है, चूँकि शिक्षा ही जनजातियों में समृद्धि, सफलता और सुरक्षा का निर्धारण करेगा, अतः शिक्षा जनजातियों में एकीकृत विकास का आधार हो सकता है।

यह हमारा दुर्भाग्य रहा है कि आज तक शिक्षा सबके लिए समान स्तर पर उपलब्ध नहीं रही। इसका व्यापक जन हित में उपयोग नहीं हो पाया। विशेषाधिकार के तौर पर दुरुपयोग ज्यादा किया गया। ऐसे में शिक्षा का यह बुनियादी अधिकार जनजाति समुदायों की विकास यात्रा में एक मील का पत्थर साबित हो सकता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ–सूची :–

1. अग्नीहोत्री, रबीन्द्र (2010), 'आधुनिक भारतीय शिक्षाः समस्याएँ और समाधान', जयपुरः राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी.
2. अग्रवाल, जे० सी० (2007), 'भारत में शिक्षा व्यवस्था का विकास', दिल्लीः शिप्रा पब्लिकेशन.
3. अटल, योगेश एवं सिसोदिया, यतीन्द्र सिंह (2011), 'आदिवासी भारत', जयपुरः रावत पब्लिकेशन्स.
4. उपाध्याय, प्रतिभा (2007), 'भारतीय जनजाति शिक्षा में उदीयमान प्रवृत्तियाँ', इलाहाबादः शारदा पुस्तक भवन.
5. कपूर, उर्मिला (2010), 'भारतीय शिक्षा इतिहास और समस्याएँ', आगराः साहित्य प्रकाशन.
6. जोशी, रामशरण, (1996), 'आदिवासी समाज और शिक्षा', नई दिल्लीः ग्रंथ शिल्पी.
7. जैन, प्रकाशचन्द्र एवं त्रिवेदी, मधुसुदन (1996), 'आदिवासी विकास योजना दशा एवं दिशा', उदयपुरः शिवा पब्लिकेशन डिस्ट्रीब्यूटर्स.
8. त्यागी, गुरसरन दास, (2002), 'भारत में शिक्षा का विकास', आगराः विनोद पुस्तक मंदिर.
9. पाठक, पी.डी. (2004), 'भारतीय शिक्षा और उसकी समस्याएँ', आगराः विनोद पुस्तक मन्दिर.
10. मिश्रा, राजेन्द्र कुमार (2008), 'जनजातिय विकास के नवीन आयाम', नई दिल्लीः ए. पी. एच. पब्लिशिग कॉरपोरेशन.

Swadeshi Research Foundation A Monthly Journal of Multidisciplinary Research
International Peer Reviewed, Refereed, Indexing & Impact Factor - 5.2, Ex- UGC S.N. 4990
ISSN : 2394-3580, Vol. – 9, No. – 3, Jan. – 2022, Conference Special Issues
2022

गोपालदास नीरज के काव्य में सामाजिक एवं सांस्कृतिक चेतना

देवीलाल रोझ
शोधार्थी एवं सहायक आचार्य, हिन्दी राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सरदारशहर, चूरू

साहित्य जीवन और जगत के रागात्मक संबंधों की शब्दात्मक अभिव्यक्ति है। साहित्य में सामाजिक चेतना का उभार मनुष्य की वास्तविक समस्याओं की पहचान कराता है और समाज को उचित दिशा प्रदान करता है। चेतना साहित्य के आलोकमय नेत्र है। साहित्यकार समाज में रहकर जिस यथार्थ को भोगता है, जिस जीवन को जीता है, उसे ही साहित्य के माध्यम से अभिव्यक्त करता है। ''मैं साहित्य को मनुष्य की दृष्टि से देखने का पक्षपाती हूँ। जो वाग्जाल मनुष्य को दुर्गति, हीनता और पुरमुखापेक्षिता से बचा न सके, जो उसकी आत्मा को तेजोद्दीप्त न बना सके, जो उसके हृदय को परदुःखकातर और संवेदनशील न कर सके, उसे साहित्य कहने में मुझे संकोच होता है।''[1] और सच्चे साहित्य की कसौटी भी यही है कि वह मनुष्य में चेतना जाग्रत करें।

गीत ऋषि गोपालदास नीरज आधुनिक युग के मूर्धन्य कवि और गीतकार है। उनका काव्य मानव प्रेम, श्रृंगार और दर्शन–अध्यात्म की त्रिवेणी है। जहाँ एक ओर रामधारी सिंह दिनकर ने उन्हें 'हिन्दी काव्य की वीणा' कहकर उनके गीत सम्राट होने का परिचय दिया है तो दूसरी ओर उन्हें भदंत आनन्द कौसल्यायन ने 'हिन्दी का अश्वघोष' की उपाधि से सम्मानित किया है। ''नीरज हिन्दी की तरूण पीढ़ी के एक ऐसे तेजस्वी और सशक्त कलाकार है, जिसपर हिन्दी ही क्या, किसी भी भाषा के साहित्य को गर्व हो सकता है। उसकी रचनाओं में जहाँ मानव के संवेदनशील हृदय की सरस सरल अनुभूति के दर्शन होते हैं वहाँ संसार की क्षण–भंगुरता के प्रति भी स्पष्ट किन्तु सबल संकेत मिलता है। उसकी विद्रोहमयी वाणी में युग–युग से तड़पती, कसकती मानवता की जो करूण–सजल पुकार देखने सुनने को मिलती है, वह हमारे राष्ट्र की नवीन पीढ़ी के लिए अनुकरणीय मननीय है।''[2]

सामाजिक चेतना में किसी भी प्रकार की नकारात्मकता नहीं होती है। उसमें रूढ़ि, निष्प्राण परम्पराओं, अशिक्षा, अज्ञान, अंधविश्वास, अभाव, अन्याय, शोषण आदि के दुष्परिणामों से मुक्ति मिलती है। एक स्वस्थ सामाजिक व्यक्तित्व का निर्माण होता है। सामाजिक चेतना की उत्पत्ति के मूल में व्यक्ति, परिवार, नारी, शिक्षा संघर्ष, शोषण, आर्थिक विषमताएं, ऊँच–नीच की भावना, छुआछूत, अमीर–गरीब, वैवाहिक, समस्याएँ आदि सामाजिक विषमताएँ सामाहित रहती है। समाज में आज वसुधैव कुटुंम्बकम् और विश्व मानवता के कल्याण की भावना लुप्त हो गयी है। हमने अपने आपको एक स्वनिर्मित कृत्रिम समाज में आबद्ध कर लिया है जैसे हिन्दू समाज, पारसी समाज, मुस्लिम समाज आदि। ईश्वर ने सभी मनुष्यों को समान बनाया है तो नीरज कहते हैं कि फिर समाज में ये ऊँच–नीच कैसी?

''फिर भी जाने क्यों हममें से
कुछ आगे है, कुछ पीछे है,
कुछ अथ पर ही खड़े और कुछ
वहाँ जहाँ यात्रा की इति है।''[3]

नीरज की सामाजिक चेतना कभी उनको मार्क्सवाद के निकट लाती है, तो कभी विश्व प्रेम और विश्व बंधुत्व का आदर्श उन्हें इससे पृथक् कर देता है। कभी वो पूँजीवाद की भर्त्सना करते दिखाई पड़ते हैं तो कभी शोषित–दलित मजदूरों के साथ खड़े उनके आँसू पोंछते हुए मानव प्रेम के गीत गाते है। नीरज की कविता में सामाजिक चेतना की विवेचना करते हुए डॉ. सुधा सक्सेना ने लिखा है– ''नीरज की यह सामाजिक सजगता इस बात का प्रमाण देती है कि यह जीवन और समाज से कटे हुए एक व्यक्तिवादी कवि नहीं है जिसकी बरसाती के ऊपर से समाज की हर धूप, हर गर्मी, हर बारिश फिसल जाती है उनका हृदय धरती–सा संवेदनशील है जो हर धूप, गर्मी और बारीश को अपने में समा लेता है और प्रतिक्रिया में कहीं गुलाबों की फसल तैयार करता है तो कहीं कैक्टसों का जंगल। कभी वह मनुष्य की एवरेस्ट विजय के गीत गाता है तो कभी साँसों में आंधी तूफानों को भरकर गाता है।''[4]

''मैं विद्रोही हूँ जग में विद्रोह कराने आया हूँ
क्रान्ति–क्रान्ति का सरल सुनहरा राग सुनाने आया हूँ''[5]

नीरज की यह सामाजिक चेतना इतनी सजग है कि अपने व्यक्तित्व के नितांत निजी क्षणों में भी वे समाज को भूल नहीं पाते हैं। ''सामाजिक चेतना केवल समझ ही नहीं देती अपितु वह सामाजिक उपदेशों को पूर्ण करने के लिए आगे बढने की प्रेरणा भी देती है

और सामाजिक आयामों के विस्तार के साथ–साथ विकसित भी होती है। परम्परा से चली रही मान्यताओं, रूढ़ियों और संस्कारों के कारण कुंठाग्रस्त जनता के जीवन में आशा प्रेरणा, आस्था एवं स्फूर्ति जाग्रत कर इन्हें एक सूत्र में पिरोना सामाजिक चेतना का कार्य है। विभिन्न समाजों और एक ही समाज में विभिन्नताओं के कारण सामाजिक चेतना भी भिन्न रूप हो सकती है। किन्तु मूलतः इसमें समाज सुधार, सामाजिक प्रगति अथवा समाजोत्थान का ही प्राधान्य रहता है यही इसके मुख्य स्रोत हैं''।[6] इसी प्रेरणा के वशीभूत होकर नीरज विश्वकल्याण की कामना करते हुए कहते हैं कि यदि मैं सावन का घन होता तो खेत–खलिहानों में सोना और बसंत बनकर बरसता।

''खेतों खलिहानों में जाकर सोना मैं बरसाता,
मधुबन में बनकर बसंत मैं पातों में छिप जाता,
ढहा बहाकर मन्दिर, मस्जिद गिरजे और शिवाले
ऊँचे–नीची विषम धरा को समतल सहज बनाता।''[7]

समाज में निर्धनता, मजदूरी, बेकारी, शोषण, अन्याय–अत्याचार, आर्थिक असमानता, वर्गगत विषमता, भ्रष्टाचार ये सब नीरज को भीतर ही भीतर व्यथित करते रहते हैं। वह ईश्वर जिससे, दलित, शोषित, पीडित मानवता इस त्रास से मुक्ति पाने के लिए पुकार लगाते हैं और जब वह उनकी पुकार नहीं सुनता तो नीरज की विद्रोहमयी वाणी उस ईश्वर को भी बदल डालने की चुनौती देती है।

''इन्सान है क्या मैं दुनियां का भगवान बदलकर छोडूँगा
मैं देख रहा हूँ भूख उग रही है गलियों–बाजारों में
मैं देख रहा हूँ ढूँढ रही बेकारी कफन मजारों में,
मैं देख रहा हूँ कला बन गई है तिजोरियों की चाबी
मैं देख रहा इतिहास कैद है चांदी की दीवारों में
मैं देख रहा हूँ दूध उगलने वाली धरती प्यासी है
मैं देख रहा हूँ हर दरवाजे पर छाई मौत उदासी है,
मैं देख रहा हूँ मुट्ठी भर दाने पर बिकता सिन्दूर खड़ा
मैं देख रहा हर सुबह सूर्य के ही घर में संन्यासी है।''[8]

आज की युवा पीढ़ी राजनेताओं के, सांप्रदायिक और असामाजिक तत्त्वों के बहकावें में आकर हड़ताल, घेराव, तोड़–फोड़, लूट–मार, आगजनी कर रही है। वह अपने आदर्श और नैतिक मूल्यों से पथभ्रष्ट हो रही है। इसी युवा पीढ़ी को नीरज ने संदेश दिया है कि अपनी रचनात्मक ऊर्जाशक्ति देश के नव–निर्माण में लगाओ, समाज के उत्थान में लगाओ। तुम अमर्त्य वीर पुत्र हो इसलिए इस देश को पुनः विश्व गुरू की पद्वी पर आसीन करो।

''करना है घिराव ही तो दुखों का घिराव करो,
बंद ही जो होना है तो भ्रष्टाचार बंद हो,
तोड़–फोड़ करनी है तो तोड़ो जाति–पाँति जिससे
आदमी पै आदमी का अत्याचार बंद हो
आने वाले कल को बिछौना मिले फूलों से
काँटे के वनों को गुलजारों में बदल दो
साथियों! शहीदों के लहू की है कसम तुम्हें
इन अँधियारों को उजालों में बदल दो।''[9]

नीरज अभावों के कवि है। जीवन में हर ओर उन्हें अभाव, अधूरे सपने, अधूरी अपूर्ण इच्छाएँ ही दिखाई देती है। इसी कारण देश के करोड़ों पढ़े लिखे बेरोजगार नौजवानों को जब रोजगार के लिए सड़क पर चम्पल चटकाते हुए देखते हैं, ऑफिस और दफ्तरों के चक्कर लगाते देखते हैं, उनके टूटते सपने और मिटती आशाओं को देखते हैं, जवानी में भी वृद्ध हो जाने, पढ़े लिखे होने पर भी सभ्य की जगह अपराधी बनते देखते हैं तो उनका मन करूणा से भर जाता है। उनको ये नौजवान आजाद भारत की विडम्बना की प्रतिमूर्ति लगते हैं। आज इस स्वतंत्र लोकतांत्रिक देश में शिक्षा और रोजगार नेताओं के रहमोकरम पर रह गया है। इसलिए नौजवानां से नीरज करते हैं–

''है आज की योग्यता सिफारिश तुम अपनी ये डिगरियां जला दो
इन कालिजों पर अंगारे फेंकों, इन सर्टिफिकेटों को जा बहा दो
न पढ़ने लिखने की है कुछ जरूरत, कम्पटीशन के कुछ मानी है।
तुम्हें मिलेगी हरेक सर्विस किसी मिनिस्टर से खत लिखा दो।''[10]

स्वतंत्रता के बाद लोगों को उम्मीद बँधी कि हम आजाद हो गये है। अब सब कुछ जल्दी ही बदल जाएगा, सब ठीक हो जाएगा। इसके विपरीत निर्धनता, बेकारी आर्थिक विषमता की खाई चौड़ी होती चली गई। देश के नेता लोग जब इन चुनौतियों को दूर करने में असफल हो गये तो जनता का मोहभंग हो गया। जो राजनीति देश सेवा का पर्याय मानी जाती थी वह अब व्यक्ति सेवा और स्वार्थ सेवा का पर्याय बन गई। शासन की शक्तियाँ जब राजनेताओं की मुट्ठी में केन्द्रित होने लगी जब नीरज ने ताज तख्त वालों को आगाह करते हुए कहा कि भूखी धरती अब भूख मिटाने आती है।

''मासूम लहू की गंगा में आ रही बाढ़

नादिरशाही सिंहासन डूबा जाता है,
गल रही बर्फ सी डालर की काली कोठी
एटम को भूखा पेट चबाये जाता है,
निकला है नभ पर नये सवेरे का सूरज
हर किरन नई दुल्हिन सी सेज सजाती है।
हो सावधान! सँभालो ओ ताज–तख्त वालों
भूखी धरती अब भूख मिटाने आती है।''[11]

आज की पूँजीवादी आर्थिक व्यवस्था अत्यंत निर्बल है वह इस समाज के भार को संभालने में असमर्थ है। पूँजीवाद ने शोषण के साथ–साथ व्यक्ति को भीतरी दृष्टि से भी जर्जर कर दिया है। इस व्यवस्था में महत्त्व श्रमिक के श्रम का नहीं पूँजीपति के पैसे का है। एक ओर तो अपना पेट काटकर अधभूखा रहकर दूसरों के लिए षड्रस व्यंजन पैदा करने वाला किसान–मजदूर है तो दूसरी ओर वही पूँजीपति महाजन जो नरम मखमली बिस्तर पर सोते हुए गरीबों के कफन तक नीलाम कर देता है।

''राज बढ़ा पैसे का ऐसा बिके कफन तक लाशों का
हो नीलाम आँख का पानी जैसी टिकट तमाशों का
कुत्ते जैसे मरें आदमी मरे गटर के खानों में,
जुल्मों का यूँ जोर सचाई बंद हो गई थानों में।''[12]

''सामाजिक चेतना से संपन कोई भी लेखक अपने समकालीन समाज में उन जड़ मान्यताओं और स्थूल आचारों का विरोध करेगा जो समाज की प्रगति, समृद्धि और स्वस्थ विकास में बाधक है।''[13] नीरज ने समाज में फैले गौरे और काले के भेद और असमानता पर व्यंग्य किया है उन्होंने कहा कि चमड़े का यह भेद मानवता के मुँह पर तमाचा है।

''चमड़े का रंग मनुष्य मनुजता को बाँटे,
यह है अक्षमय अपमान प्रकृति का मानवका
धरती पर घृणा जिये मर जाये प्रीति प्यार
यह धर्म मनुज का नहीं, धर्म है दानव का।।[14]

नीरज की भाषा प्रेम की भाषा है। प्रेम में दो हृदयों को जोड़ने की शक्ति है। वे विश्व की समस्त समस्याओं का सामाधान प्रेम के माध्यम से करना चाहते हैं। प्रेम की भाषा मनुष्य ही नहीं, पशु–पक्षी और प्राणी भी समझते हैं परन्तु विडम्बना यह है कि हम अपने स्वार्थ की जंजीरों में बंध गये है। नीरज कहते हैं कि मैं तो मानव मात्रा की सेवा करना चाहता हूँ मेरे लिए तो वही आराध्य और देवालय है।

''मैं न बंधा हूँ देश–काल की जंग लगी जंजीर में
मैं ने खड़ा हूँ जाति–पाँति की ऊँची–नीची भीड़ में
मेरा धर्म न कुछ स्याही–शब्दों का एक गुलाम है
मैं बस कहता हूँ कि प्यार है तो घट–घट में राम है,
मुझसे तुम कहो मन्दिर–मस्जिद पर मैं सर टेक दूँ,
मेरा तो आराध्य आदमी, देवालय हर द्वार है।
कोई नहीं पराया, मेरा घर सारा संसार है।''[15]

सांस्कृतिक चेतना :– संस्कृति की अभिव्यक्ति आत्मिक होती है। संस्कृति समाज सापेक्ष होती है और यह सुदीर्घ परम्पराओं का परिणाम होती है। यह किसी व्यक्ति विशेष की सम्पत्ति नहीं होती है। संस्कृति ''किसी व्यक्ति, जाति, राष्ट्र आदि की वे सब बातें जो उसके मन, रूचि, आचार–विचार, कला–कौशल और सभ्यता के क्षेत्रों में बौद्धिक विकास की सूचना होती है।''[16] संस्कृति में हमारे आचार–विचार, खान–पान, भाषा–बोली, पहनावा कला, लोकजीवन, लोकरंग, परम्पराएं और रीति–रिवाज सब आते है। भारतीय संस्कृति का निर्माण किया है नैतिक मानदण्डों ने– ''इन मानदण्डों में सत्य, असत्य, अहिंसा, सदाचरण, परदुःखकातरता, त्याग, मन की पवित्रता और विशालता, दूसरों के प्रति सहानुभूति, सहनशीलता, सहिष्णुता, ममता जैसे तत्त्व थे जिन्होंने भारतीय संस्कृति को इतना महान और जीवन्त बनाया।''[17]

साहित्य ने संस्कृति को संरक्षण प्रदान किया है। उसे अपना अस्तित्व बनाए रखने में संजीवनी बूटी का काम किया है। साहित्य संस्कृति का द्योतक ही नहीं अपितु पोषक और संवाहक भी है परन्तु यही भारतीय संस्कृति पाश्चात्य संस्कृति के रीति–रिवाज, मान्यताओं, धारणाओं व विश्वासों के फेर में पड़कर अपनी पहचान खोती जा रही है। हमारे यहां पर संस्कृति धर्म से जुड़ी हुई है और नीरज का विश्वास है कि हमारे धर्मस्थल और धर्मग्रंथ प्राचीन सांस्कृतिक परम्पराओं को जीवित रखे हुए है।

वे मन्दिर–मस्जिद, गिरजेघर, वे देवालय,
जो युग–युग की विश्वास–भावना के प्रतीक
इन्जील, कुरान, बाइबिल, गीता–रामायण
जो लिये जा रहे संस्कृति का रथ लीक–लीक।''[18]

आधुनिक भौतिकवादी युग में पाश्चात्य संस्कृति के कारण लोकजीवन और लोकरंग के रस फीके होते जा रहे हैं। ग्रामीण समाज की कुछ पुरानी परम्पराएँ और संस्थाएँ विलुप्त होती जा रही है। उनमें से एक है – चौपाल। चौपाल जो सामाजिक जीवन को जोड़ने का माध्यम थी, लोगों के सुख–दुख कहने का साधन थी, वह अब किसी गाँव में दिखाई नहीं पड़ती

है।

"वे चौपालें, चौपालों के जलते अलाव
अब तक कहानियाँ जहाँ पड़ी 'बत्तीसी' की
चुटकले बीरबल के, खुसरों की पहेलियाँ
है अब तक जिसकी हँसी जहाँ पर हँसती सी।"[19]

हमने अपने जीवन में खान–पान रहन–सहन में, जीवन के तौर–तरीकों में तो पाश्चात्य ढंग अपनाया ही है पर नीरज का कहना है कि हमने साहित्य और धर्म को भी नहीं छोड़ा।

"भारतीय कविता में,
लंदन की जूठी उपमाएं दिया करते है,
पूरब के प्याले में पश्चिम का शेम्पेन भरते हैं,
टेम्स में नहाते है, गंगा से डरते हैं,
राधा पर नहीं, यानी जूलियट पर मरते हैं।"[20]

आधुनिक युग मैं सुख–सुविधा की चाह में ग्रामीण जीवन शहरों की ओर पलायन कर रहा है। महानगरीय जीवन की संत्रास, कुंठा में घुटता जा रहा है। न वह पूरी तरह शहरी हो पाता है और न वापस ग्रामीण जीवन को अपना पाता है। नीरज ने इसी यांत्रिक सभ्यता का चित्रण करते हुए लिखा है –

"साँसों में जहरीली गैसें, स्वर में माइक्रोफोन
आँखों पर कैमरा, कान पर पहने टेलीफोन
दुबली–पतली गर्दन में गोली–गोलों का हार
पंख लगे बाँहों में चटपट उड़ने को तैयार।"

x x x x x x

चितवन में बिजली, चलने में टैंकों का रव–घोष
बातचीत में उबला पड़ता युद्धों का आक्रोश
अधरों पर है रक्त–लिपस्टिक की लोहित मुस्कान
छिपा सर्जरी का कलाइयों में सारा विज्ञान।।"[21]

हमारे आस–पास एक कृत्रिम संस्कृति का आवरण छाया हुआ है जो प्रेम के बजाय घृणा बाँट रही है। नीरज ने इस मशीनी युग को नई सभ्यता की देवी कहा है।

"छिपा लौह–वस्त्रों में डालर–सा कागजी शरीर
आस–पास चल रही मशीनों, अखबारों की भीड़
घृणा और बारूद बाँटती हँसती–मुस्कराती है
करो वैलकम नई सभ्यता की देवी आती है।"[22]

युवा पीढ़ी जो इस संस्कृति में सबसे अधिक प्रभावित हुई है। नयेपन और आधुनिकता के चक्कर में उसने पुराने मूल्यों और नैतिक मानदण्डों को ध्वस्त कर दिया है और इस कार्य में सर्वाधिक सहयोग दिया है टीवी, मीडिया और बाजार ने।

"नष्ट हुए है मूल्य सब, शर्म हुई बेशर्म
टीवी सिखलाता हमें, ऐसे रोज कुकर्म।"

x x x x x x

टीवी ने हम पर किया, यूं छुप–छुपकर वार
संस्कृति सब घायल हुई, बिना तीर–तलवार।"

x x x x x x

देख केबरे डांस कल, हमको आयी शर्म
हाय नग्नता बन गया, क्या नारी का धर्म।"[23]

नीरज को यह महानगरीय आधुनिक भौतिकवादी सभ्यता रास नहीं आती है। वे फिर से गाँव के किसी आँगन में लौटना चाहते हैं।

"चलो फिर गाँव का आँगन तलाशें
नगर तहजीब का गंदा बहुत है।"[24]

निष्कर्ष :– समाज की सर्वमुखी उन्नति, विकास और प्रगति के लिये प्रत्येक मनुष्य में सामाजिक व सांस्कृतिक चेतना की उपस्थिति अनिवार्य है। नीरज ने अपने काव्य के माध्यम से समाज में सामाजिक व सांस्कृतिक चेतना फैलाने का स्तुत्य कार्य किया है। "साहित्य तथा समाज का कोई भी ऐसा अंग नहीं बचा, जिसे उसने अपनी प्रतिभा के परस से जीवनदान न दिया। उसकी प्यार की पुकार मैं यदि सारे भारत की तरूणाई की प्रतिच्छाया है, तो विद्रोह की हुंकार में कसमसामे हुए यौवन की सुखद और सरस अभिव्यक्ति भी।"[25] नीरज ने एक ओर प्रेम के गीत गाएँ है तो दूसरी ओर पीड़ित मानवता की सेवा भी की है, अन्याय और अत्याचार के विरूद्ध उनकी वाणी विद्रोहमयी भी हुई है। डॉ. सुधा सक्सेना ने लिखा है– "नीरज का समस्त काव्य उनकी सामाजिक चेतना की सजगता का जीवित उदाहरण है। जीवन जहाँ भी पीड़ित हुआ है, दलित हुआ है, या विजयी हुआ है– सदैव कवि ने उसे देखा–परखा है और काव्य में अंकित भी किया है। समाज की हर गंदगी, रूढ़ि, गर्हित परम्परा, हठ धर्मिता के वे विरोधी है और व्यक्ति और मानव की विजय के उद्घोषक है।"[26]

सामाजिक चेतना के साथ–साथ नीरज ने अपने काव्य के माध्यम से भारतीय संस्कृति को संरक्षित करने का सराहनीय प्रयास किया है। पाश्चात्य प्रभाव के कारण भारतीय संस्कृति के पतन होने पर क्षोभ भी व्यक्त किया है। "पश्चिम की धारणा रही कि आर्थिक

दृष्टि से सम्पन्न समाज की संस्कृति ही उन्नत होती है जबकि भारत में मनीषियों की यह सोच रही है कि सांस्कृतिक सम्पन्नता आर्थिक सभ्यता पर कतई निर्भर नहीं है। आर्थिक रूप से विपन्न समाज की समस्याओं का निदान तो भौतिक संसाधनों की वृद्धि से सरलता से हो सकता है किन्तु सांस्कृतिक विपन्नता से निजात पाना किसी समाज के लिए एक दुष्कर कार्य है।''[27] इसलिए नीरज प्राचीन सांस्कृतिक मूल्यों की ओर लौटने को कहते हैं परन्तु वर्तमान युग की भीड़–भाड़ में उन्हें ये मूल्य दिखाई नहीं पड़ते हैं।

''सच्चाई, सद्भावना, स्नेह, शराफत, प्यार
कहीं न ये चीजें मिली, देखा हर बाजार।।''

सन्दर्भ :–

1. कालिदास की लालित्य योजना, हजारी प्रसाद द्विवेदी, पृ.सं.–74
2. नीरज रचनावली, खण्ड–1, पृ.सं. – 7–8
3. वही, पृ.सं. –357
4. नीरज व्यक्तित्व और कृतित्व, डॉ. सुधा सक्सेना, पृ. सं.–103–104
5. नीरज रचनावली, खण्ड–1, पृ.सं. 167
6. प्रेमचंद के निबंध साहित्य में सामाजिक चेतना, अर्चना जैन, पृ.सं.18
7. नीरज रचनावली, खण्ड–1 पृ.सं. 263
8. नीरज रचनावली, खण्ड–2 पृ.सं. 106
9. नीरज रचनावली, खण्ड–3 पृ.सं. 317
10. नीरज रचनावली, खण्ड–2 पृ.सं. 128
11. नीरज रचनावली, खण्ड–1 पृ.सं. 349
12. नीरज रचनावली, खण्ड–3 पृ.सं. 155
13. अमृतलाल नागर के उपन्यासों में सामाजिक चेतना, डॉ. शोभा पालीवाल, (भूमिका मे से)
14. नीरज रचनावली, खण्ड–2 पृ.सं. 287
15. नीरज रचनावली, खण्ड–1 पृ.सं. 292
16. प्रामाणिक हिन्दी कोश, पृ.सं. 1081
17. संस्कृति और साहित्य, डॉ. हेतु भारद्वाज, पृ.सं.38
18. नीरज रचनावली, खण्ड–2 पृ.सं. 35
19. वही, पृ.सं. 34
20. वही, पृ.सं. 123
21. नीरज रचनावली, खण्ड–3 पृ.सं. 85
22. वही, पृ.सं. 85
23. नीरज दोहावली, गोपालदास नीरज पृ.सं. 74
24. नीरज रचनावली, खण्ड–3 पृ.सं. 201
25. नीरज रचनावली, खण्ड–1 पृ.सं. 8
26. नीरज व्यक्तित्व और कृतित्व, डॉ. सुधा सक्सेना, पृ. सं. 15
27. संस्कृति और साहित्य, डॉ. भारद्वाज, भूमिका से उद्धृत।

Swadeshi Research Foundation A Monthly Journal of Multidisciplinary Research
International Peer Reviewed, Refereed, Indexing & Impact Factor - 5.2, Ex- UGC S.N. 4990
ISSN : 2394-3580, Vol. – 9, No. – 3, Jan. – 2022, Conference Special Issues
2022

1857 ई. की क्रांति में उत्तर प्रदेश की महिलाओं की भूमिका

योगेन्द्र कुमार
शोधार्थी, स्कूल ऑफ सोशल साईस, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर
डॉ. बलराम बघेल
शोध निर्देशक, शहीद भीमा नायक शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.)

सारांश :– भारतीय स्वतंत्रता संग्राम की लड़ाई केवल पुरुषों की हिस्सेदारी से फतह नहीं की गई, बल्कि इस महायज्ञ में महिलाओं की भूमिका भी उल्लेखनीय है। भारत के स्वतंत्रता आंदोलन में महिलाओं का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। अंग्रेजों के विरूद्ध पुरूषों के कंधे से कंधा मिलाकर देश की बेटियों ने अपना कर्तव्य निभाया। उन्होने अंग्रेजों के विरूद्ध कदम उठाए, वीरता और साहस तथा नेतृत्व की क्षमता का अभूतपूर्व परिचय दिया। साल 1857 की क्रांति के बगावत के समय राजघराने की महिलाएं आजाद भारत का सपना पूरा करने के लिए पुरूषों के साथ एकजुट हुईं।

इतिहास गवाह है कि भारत के स्वतंत्रता संग्राम में जहां पुरुषों ने बढ़–चढ़कर हिस्सा लिया, तो महिलाएं भी पीछे नहीं रहीं। महिलाओं ने समय–समय पर अपनी बहादुरी और साहस का प्रयोग कर पुरुषों के साथ कंधे से कंधा मिला कर चली। रानी लक्ष्मी बाई और रानी चेनम्मा जैसी वीरांगनाओं ने अंग्रेजों से लड़ते हुए अपनी जान दे दी, तो सरोजिनी नायडू और लक्ष्मी सहगल जैसी वीरांगनाओं ने देश की आजादी के बाद भी सेवा की।

शब्द कुंजी – 1857 ई. की क्रांति में उत्तर प्रदेश की महिलाओं का योगदान

प्रस्तावना :– अंग्रेजों द्वारा शोषण व अत्याचार के विरूद्ध भारतीयों में उनके प्रति घृणा तथा प्रतिरोध की भावना अपनी चरम सीमा पर थी। अवध में परम्परागत रूप से समाज का नेतृत्व तालुकेदारों जमींदारों के हाथों में था। जन–साधारण उनका अनुसरण करने का अभ्यस्त हो चुका था। 1856 ई0 के बन्दोबस्त में सरकार और किसानों के बीच तालुकेदारों और ठेकेदारों की मध्यस्थता की पूर्णतया अपेक्षा की गई। अंग्रेजी सरकार द्वारा किए गये सामाजिक तथा आर्थिक सुधारों एवं अवध के नवाबों के प्रति कठोर व्यवहार से अत्यधिक अशांति तथा असंतोष उत्पन्न हुआ। यह असंतोष केवल सैनिक तक सीमित नहीं रहा, जिन्होंने अंग्रेजों के विरूद्ध संघर्ष किया बल्कि समाज का प्रत्येक वर्ग असंतुष्ट तथा क्षुब्ध था। जिसके कारण इस क्रांति में पुरूष वर्ग के साथ–साथ महिलाओं ने भी कंधे से कंधा मिलाकर इस क्रांति में भाग लिया।

'किसी ने इसे मुसलमानों का विद्रोह लिखा, किसी ने इसे हिन्दुओं की संकीर्णता का फल बताया और किसी ने इसे केवल सिपाहियों का विद्रोह लिखा। किसी का विचार था कि हिन्दु दुष्ट थे, किसी का ख्याल था कि मुसलमान पिशाच थे, किसी का विचार था कि दोनों ही पागल हो गये थे। परन्तु इस बात की ओर ध्यान नहीं दिया गया कि वह कौन सी शक्ति थी जिसने भारत वर्ष के प्रत्येक नर–नारी, हिन्दु व मुसलमान को एक सूत्र में बांधकर अंग्रेजी राज्य के विरूद्ध खड़ा कर दिय था। यह शक्ति थी भारतवर्ष की स्वतंत्रता की अभिलाषा।

तब 30 मई को लखनऊ में क्रांतिकारियों ने स्वतंत्रता संग्राम का शंखवाद कर दिया, जब अंग्रेज सिपाही काफी भयभीत हो उठे। लखनऊ में सेना की कमी के कारण कानपुर से सेना भेजी गयी। इससे कानपुर में अंग्रेजों की स्थिति काफी नाजुक हो गयी। नाना साहब ने सोचा कि इससे अच्छा मौंका तो अब मिल ही नहीं सकता है। अतः नाना साहब ने भी 04 जून की रात को कानपुर में विद्रोह करने का ऐलान कर विद्रोह की शुरूआत कर दी। जिसमें पुरूषों के साथ–साथ महिलाओं को भी इस क्रांति में शामिल होने का आहवान किया।

24 जून को जनरल हबीलर ने अपना अंतिम संदेश लखनऊ भेजा यह एक दर्द भरे दिल की हताश चीख थी। उसने लिखा सिर्फ ब्रिटिश आत्मा ही बची है लेकिन यह बहुत दिन नही रह सकती। निश्चित रूप से हम पिंजरों के चूहों की तरह नहीं मरेंगे। रक्षकों को इतने कष्ट और सुविधाएं झेलनी पड़ी कि उनका बयान नहीं किया जा सकता। गोलों और गोलियों से बैरकें इतनी बुरी तरह बिंधी हुई थी कि छुपने के लिए बहुत ही कम जगह बची। 21 से 24 तक बैरकें पर लगातार गोले बरसाए गए। अंत नजदीक था। समर्पण करना ही अब औरतों और बच्चों को बचाने का एक मात्र तरीका था।

इस स्वतंत्रता की नीवं बनाने में लक्ष्मी बाई, झलकारी बाई, अवन्ती बाई, तेज बाई, उदादेवी, रानी चैनाम्मा, लखनऊ की तबाईफ बाई हेदरीबाई, कानपुर

की तबाईफ अजीजनबाई, रहीमी, आशादेवी, भगवतीदेवी त्यागी, सौभनादेवी तथा जैतपुर की रानी जैसी वीरांगनाओं ने अपने प्राणों की बाजी लगाकर भारत वर्ष के सम्मुख जो अटूट आर्दश रखा, उसी आदर्श को लेकर नींव पर स्वतंत्रता का महल खड़ा करने में कितने ने अपना बलिदान कर दिया, न जाने कितने फाँसी के तख्तें पर झूल गये, किंतु भारत माता की गोद में समा गये, कितनी माताओं, बहिनों के माथे के सिन्दूर पुछ गये, न जाने कितनों की गोंद खाली हो गई न जाने कितने बे घर हो गई। एक एक इंच भूमि खून के एक कतरे की एक एक बूंद से सिंच गई, तब जाकर स्वतंत्रता के स्वप्न पुरे हुये। जब जाकर आजादी का महल तैयार हो गया। आज हम जिस स्वतंत्रता के महल में सांस ले रहे है, उसकी जड़ 1857 की असंख्य नर नारियों ने अपने लहू से सींच सींच कर इतनी मजबूत कर दी कि उसका हिलना असंभव है, इसकी उमा विश्व इतिहास में मिलना दुर्लभ है।

शोध के उद्देश्य :– प्रस्तुत शोध पत्र का उद्देश्य 1857 ई. की क्रांति में उत्तर प्रदेश की महिलाओं के द्वारा किये गये आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक एवं बलिदानिक योगदान को याद किया जा रहा है। अगर ध्यान से सोचा जाय तो उत्तर प्रदेश की हर महिलाओं के द्वारा इस क्रांति के समय हिस्सा लिया है, क्योंकि जिन महिलाओं ने बलिदान दिया है वे तो आज याद की जा रही है, लेकिन जिन महिलाओं ने अपने पति को खोया, अपने भाई को खोया, अपने पिता को खोया उन महिलाओं को भी आज याद करना मेरे इस लघु शोध अध्ययन का मुख्य उद्देश्य होगा, जो अति आवश्यक है क्योंकि इन महिलाओं का योगदान भी 1857 ई0 की क्रांति में महत्वपूर्ण योगदान रहा है। ‘

अध्ययन क्षेत्र :– शोध पत्र के अध्ययन के लिए उत्तर प्रदेश में स्थित महिलाओं के द्वारा दिये गये योगदान को अध्ययन पत्र के लिए शामिल किया गया है।

आंकड़ो का संकलन और विधि :– 1857 ई. में उत्तर प्रदेश में स्थित महिलाओं के अध्ययन के लिए आँकड़ो को दो माध्यम से संकलित किया गया है। व्यक्तिगत सर्वेक्षण के माध्यम से अवलोकन किया गया है। द्वितियक स्त्रोत के अंतर्गत प्रकाशित स्त्रोत का अध्ययन किया गया है तथा संबंधित महिलाओं के नाम से विख्यात महाविद्यालय एवं स्कूल के द्वारा प्रकाशित संबंधित पत्र–पत्रिकाओं एवं इंटरनेट आदि के माध्यम से आँकड़ों को प्राप्त किया गया है और इनको वर्णनात्मक विधि के आधार पर प्रस्तुत किया गया है।

निष्कर्ष :– उपरोक्त तथ्यों का अवलोकन करने पर ज्ञात होता हैं कि 1857 ई0 की क्रांति में जितना योगदान पुरूष वर्ग का रहा है, उससे कहीं ज्यादा महत्वपूर्ण योगदान महिलाओं ने भी किया है, चाहे वे शहरी क्षेत्र में हो या ग्रामीण क्षेत्रों में सभी महिलाओं ने इस क्रांति में बढ़चड़ कर हिस्सा लिया। अगर ध्यान से सोचा जाय तो उत्तर प्रदेश की हर महिलाओं के द्वारा इस क्रांति के समय हिस्सा लिया है, क्योंकि जिन महिलाओं ने बलिदान दिया है वे तो आज याद की जा रही है, लेकिन जिन महिलाओं ने अपने पति को खोया, अपने भाई को खोया, अपने पिता को खोया उन महिलाओं के दुःख दर्द को भी आज याद करना अति आवश्यक है। इन महिलाओं का बलिदान व्यर्थ न जाये, इसके लिए उत्तर प्रदेश के विभिन्न स्थानों पर इन महिलाओं के नाम से किसी शहर का नाम रखा गया है, या फिर उनके नाम से महल का निर्माण किया गया है, या फिर उनके नाम से किसी पर्यटन स्थल या फिर स्कूल एवं महाविद्यालय का नाम रखा गया है, जो कि 1857 ई. की क्रांति में इनके बलिदान को याद किया जाता है, तथा हर वर्ष स्वतंत्रता दिवस एवं गणतंत्रता दिवस पर इनको याद करके इनको श्रद्धाजंली अर्पित की जाती है, इनके द्वारा दिये गये बलिदान को भारत में आने वाली पीढ़ी कभी नहीं भुलेगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. भवानी शंकर विशारद, आलोक प्रेस झाँसी ‘‘झलकारी बाई’’ पृ. सं. 02
2. डॉ. वृन्दावन लाल वर्मा, ‘‘झाँसी की रानी’’ पृ. सं. 102
3. श्याम नारायण सिन्हा, ‘‘ 1857 का बुन्देलखण्ड में विद्रोह’’ पृ. 82
4. एस.एन. सिन्हा, ‘‘ 1857 का बुन्देलखण्ड में विद्रोह’’ पृ. सं. 42
5. पी.जे. व्हाइट फाइनल सेटेलमेंट रिपोर्ट आफ परगना कालपी पृ. 40
6. विपिन चन्द्र, भारत का स्वतंत्रता संघर्ष, पृ. सं 2
7. विश्व प्रकाश गुप्ता, मोहिनी गुप्त, स्वतंत्रता संग्राम और महिलाऐं पृ. सं. 91
8. डॉ. एस.एल. नागोरी, कान्ता नागोरी, भारतीय वीरांगनाएँ पृ. सं. 20
9. एल.पी. माथुर, भारत की महिला स्वतंत्रता सेनानी पृ. 20
10. आशारानी व्होरा, महिलाएं और स्वराज्य पृ. सं. 15

Swadeshi Research Foundation A Monthly Journal of Multidisciplinary Research
International Peer Reviewed, Refereed, Indexing & Impact Factor - 5.2, Ex- UGC S.N. 4990
ISSN : 2394-3580, Vol. – 9, No. – 3, Jan. – 2022, Conference Special Issues
2022

मालवा में बौद्ध प्रतिमाएँ

हरि ओम सिंह
शोधार्थी, स्कूल ऑफ सोशल साइंस, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर

सारांश :– मूर्तिशिल्प कला का विकास भारतीय उपमहाद्वीप में देखें, तो अति प्राचीन है, जो हमें सैन्धव सभ्यता से स्फुटित होते हुए दिखाई पड़ती है। इसका उत्कृष्ट रूप इसमें धार्मिक प्रतीकों के समावेश के पश्चात उभरा, मूर्तिकला मानव चेतना के अन्तर्मन और बाह्य, दोनों रूपों को प्रदर्शित करती है। मूर्तिशिल्प परम्परा में बौद्ध धर्म ही पहला संस्थागत धर्म था, जिसने दैवीय आदर्शों को लोगों की आस्था और विश्वास को मानव–कल्याण से जोड़ा, जिसका प्रमाण भारतीय मूर्तिशिल्पों के रूप में देख सकते हैं। जिसके कुछ अंश मालवा क्षेत्र में भी प्राप्त हुए हैं। मूर्तिशिल्प कला, भारत के वर्तमान और भावी पीढ़ियों के लिए अमूल्य सांस्कृतिक धरोहर है, जिसे आाज अनेक शैलियों के रूप में पहचान मिली है। जिसमें मथुरा कला शैली, गंधार कला शैली प्रमुख स्थान हैं। भारतीय मूर्तिशिल्प कला का एक कालखण्ड मालवा की मूर्तिशिल्प शैली भी है।

प्रस्तावना :– बौद्ध धर्म के इतिहास में बौद्ध प्रतिमाओं का निर्माण और उसका विकास बौद्ध धर्म के प्रतिमाकला रूपी नवबीज के अंकुरण के समान शुरू हुआ, जो निरन्तर विकसित, पल्लवित, पुष्पित एवं फलित होते हुए अपने चरम पर जा पहुँचा और धीरे–धीरे सम्पूर्ण भारत और भारत से बाहर भी फैल गया।

बुद्ध के निर्वाण प्राप्ति के बाद बुद्ध का आभास, मुख्यतः प्रतीकों के माध्यम से हीनयानियों के द्वारा कराया जाता था। जबकि, महायानी बुद्ध को लोकोत्तरवादी स्वीकार करते थे, इसलिए बुद्ध की उपासना के लिए बौद्ध प्रतिमा निर्माण के मार्ग को इनके द्वारा प्रशस्त किया गया। चूँकि, मालवा हीनयानियों का केन्द्र था, इसलिए यहाँ प्रतिमा निर्माण का कार्य मुख्यतः प्रथम सदी ई. कुषाण काल से प्रारम्भ हुआ, जबकि कुछ छिटपुट प्रतिमाओं का निर्माण तीन सौ शताब्दी ई.पू.–दो सौ शताब्दी ई.पू. काल से भी प्राप्त होते हैं।

साँची स्थापत्य कला में बुद्ध की कपिलवस्तु यात्रा को उनके चरण चिन्हों द्वारा प्रकट किया गया है। मालवा क्षेत्र में बुद्ध प्रतिमाओं को स्थानक, आसनस्थ एवं शयन इत्यादि मुद्राओं में उकेरा गया है। मालवा क्षेत्र से प्राप्त सिक्कों पर बोधिवृक्ष का अंकन एवं साँची में बोधिवृक्ष की पूजा करते हुए मनुष्यों और पशुओं को दिखाया गया है। बोधिसत्वों जैसे – बोधिसत्व अवलोकितेश्वर, मंजूश्री, मैत्रेय एवं बौद्ध देवियों जैसे हरिती, तारा इत्यादि की प्रतिमाओं का निर्माण मालवा क्षेत्र में हुआ। मालवा क्षेत्र में गुप्तकालीन बौद्ध मृणमूर्तियाँ भी प्राप्त हुई हैं।

शब्दकुंजी :– स्थानक मूर्तियाँ, आसनस्थ बौद्ध प्रतिमाएँ, बुद्ध की शयन प्रतिमाएँ, मृणमूर्तियाँ, मूर्तिशिल्प कला।

अध्ययन का उद्देश्य :– प्रस्तुत शोध का उद्देश्य मालवा क्षेत्र के बौद्ध प्रतिमाओं के सौंदर्यात्मक तथा धार्मिक पक्षों का विश्लेषण करते हुए उनकी शैलीगत विशेषताओं को स्पष्ट करना और मालवा क्षेत्र पर पड़े बौद्धशिल्प के प्रभाव को सम्मुख रखना, जिससे लोगों का उनसे साक्षात्कार हो सके। और मालवा क्षेत्र के समृद्ध बौद्ध मूर्तिकला के बारे में उनकी पहुँच हो सके।

अध्ययन का क्षेत्र :– प्रस्तुत शोधपत्र में अध्ययन का क्षेत्र मालवा से प्राप्त बौद्ध प्रतिमाओं को केंद्र में रखकर किया गया है। मालवा क्षेत्र अपने आप में बौद्ध मूर्तिशिल्प कला के अनेक पक्षों को समेटे हुए है। मालवा क्षेत्र से अनेक बौद्ध प्रतिमाएँ प्राप्त हुई हैं जो संग्रहालयों में सुरक्षित हैं। उनका भी प्रयोग अध्ययन क्षेत्र में किया गया है।

आँकड़ों का संकलन व शोध विधि :– मालवा क्षेत्र की बौद्ध मूर्तिकला पर अध्ययन के लिए आँकड़ों का संकलन दो माध्यमों से किया गया है। पहला – व्यक्तिग सर्वेक्षण के माध्यम से, जैसे साँची और इन्दौर संग्रहालय का अवलोकन किया गया। दुसरा – द्वितीयक स्रोतों के अंतर्गत प्रकाशित पुस्तकों का अध्ययन किया गया और बौद्ध मूर्तिशिल्प कला से संबंधित पत्र–पत्रिकाओं, इंटरनेट आदि के माध्यम से आँकड़ों को प्राप्त किया गया। इनको वर्णनात्मक विधि से प्रस्तुत किया गया है।

मालवा क्षेत्र में अनेक बोधिसत्वों की प्रतिमाएँ प्राप्त हुई हैं, जिनमें से कुछ इस प्रकार हैं –

बोधिसत्व अवलोकितेश्वर की प्रतिमा :– मालवा क्षेत्र में अवलोकितेश्वर बोधिसत्व की प्रतिमाएँ प्राप्त हुई हैं। बोधिसत्व की कल्पना महायान का आदर्श है।

अवलोकितेश्वर बोधिसत्व का स्वरूप प्रथम शताब्दी कुषाण काल तक स्थिर हो चुका था। मालवा में भी इनका उत्कीर्णन प्रथम सदी ईस्वी में हो चला था। बाघ की गुफा संख्या दो में बोधिसत्व की प्रतिमा प्राप्त हुई, जो गुप्तकालीन है, जो गुफा के प्रवेश द्वार के बाईं ओर कमल पुष्प पर स्थानक है। यह प्रतिमा आठ फीट तीन इंच की है। बोधिसत्व के शरीर को सुंदर आभूषणों से सुसज्जित किया गया है। गुफा संख्या दो में ही अन्य प्रतिमाएँ हैं, जिनके बीच में बुद्ध निर्मित हैं। बाघ की गुफा के उपरी भित्ती पर भी प्रतिमाओं के समूहों को उकेरा गया है। **वासुदेव शरण अग्रवाल** का मानना है, कि अवलोकितेश्वर मूर्तियों में ग़रूड़ की उपस्थिति वैष्णव धर्म के प्रभाव का द्योतक है। प्राचीन काल में शंख, पर्ण अवलोकितेश्वर की पूजा विष्णु रूप में होती थी। बुद्ध के अवलोकितेश्वर स्वरूप की एक प्रतिमा साँची संग्रहालय में संरक्षित है, जो मथुरा कला के पाषाण लाल बलुए पत्थर से निर्मित है। अवलोकितेश्वर की प्रतिमाएँ मालवा क्षेत्र के मंदसौर, कोलावी, धमनार इत्यादि स्थानों से भी प्राप्त हुई हैं।

बोधिसत्व पद्मपाणि :– साँची (काकनादबोट) में बोधिसत्व की पद्मपाणि रूपी प्रतिमा प्राप्त हुई है, जो लाल बलुए पत्थर से निर्मित है, जो मथुरा कला का प्रतिनिधित्व करती है। यह कुषाणकालीन है। स्थानक अवस्था में यह प्रतिमा प्राप्त हुई, जिसमें बाँए हाथ में कुण्डिका और दाँए हाथ में कमल है। साँची संग्रहालय में और भी पद्मपणि की प्रतिमाएँ विद्यमान हैं, जिसमें प्रतिमा संख्या अट्ठाईस और प्रतिमा संख्या सत्तावन महत्वपूर्ण हैं।

बोधिसत्व मंजूश्री :– मालवा क्षेत्र में मंजूश्री बोधिसत्व की कई प्रतिमाएँ प्राप्त हुई हैं, जो पूर्व मध्यकालीन हैं, जो साँची संग्रहालय में संरक्षित हैं। जो दाँए हाथ में चँवर लिए व बाँए हाथ में कमल लिए हुए है। यह प्रतिमा बौद्ध धर्म में प्रज्ञा से संबंधित है।

बोधिसत्व मैत्रेय :– मैत्रेय बोधिसत्व भावी मानुषीबुद्ध हैं। मालवा क्षेत्र में बोधिसत्व मैत्रेय की कई प्रतिमाएँ प्राप्त हुई हैं। इनकी पहचान मुकुट पर बने चैत्य से की जाती है। साँची संग्रहालय में बोधिसत्व मैत्रेय की प्रतिमा संग्रहित है। साँची की अभिलेख संख्या आठ सौ तीस से ज्ञात होता है, कि बुद्ध की बोधिसत्व मैत्रेय की प्रतिमा साँची में स्थापित की गई थी। धार जिले में स्थित बाघ की गुफाएँ, जो मालवांचल क्षेत्र में स्थित हैं, इसकी गुफा संख्या दो में मैत्रेय बोधिसत्व की प्रतिमा प्राप्त होती है, जो अभय मुद्रा में है।

स्थानक बुद्ध मूर्तियाँ :–

अभय मुद्रा – दाँए या बाँए हाथ की खुली हुई हथेली, जो वक्ष के सामने की ओर होती है, जो भक्त को अभय वचन देती है। मालवा के शिल्पकारों ने अभय प्रकार की बहुत सी प्रतिमाओं का निर्माण किया, जो आज साँची संग्रहालय में दर्शनीय हैं।

वरद मुद्रा – वरद मुद्रा में बुद्ध मूर्ति का निर्माण मालवांचल क्षेत्र में हुआ। इसे दान मुद्रा भी कहते हैं। इसमें बाँए हाथ में संघाटी है और दाँए हाथ की हथेली नीचे की तरफ खुली रखकर वरदान देते हुए दिखाया गया है।

गतिमान मुद्रा – बुद्ध की गतिमान मुद्रा की प्रतिमाएँ उनके द्वारा धम्म के प्रचार का प्रतिनिधित्व करती हैं, जो हमें यह बतलाती है, कि जीवन गतिमान है। इसलिए व्यक्ति और भिक्षु को एक ही स्थान पर नहीं रूकना चाहिए। व्यक्ति को अपने जीवन के लक्ष्यों की ओर और भिक्षु को अपने सत्कर्मों की ओर आगे बढ़ते रहना चाहिए। बुद्ध की गतिमान मुद्रा की प्रतिमा जीवन के सकारात्मक पक्ष को दर्शाती है। साँची के तोरणों पर इस प्रकार की मुद्रा प्राप्त होती है।

स्थानक बुद्ध :– अनेकों शैलोत्कीर्ण स्थानक प्रतिमाएँ धमनार के विहारों पर उत्कीर्ण हैं। यहाँ की गुफा संख्या तेरह के अंतःकक्ष के प्रवेश द्वार के दोनों तरफ विशाल स्थानक बुद्ध की प्रतिमा बनी हुई है, जिसमें बुद्ध को कमल पर बैठे हुए दिखाया गया है।

आसनस्थ बौद्ध प्रतिमाएँ :

पद्मानस्थ बौद्ध मूर्ति – सातवीं शताब्दी ईस्वी की पद्मानस्थ बैठी हुई बुद्धमूर्ति साँची संग्रहालय में रखी हुई है। इसी प्रकार की मुद्रा कोलवी के गुहा संख्या सात में भी उत्कीर्ण की गई है। इसी प्रकार हम देखते हैं, कि धमनार के गुहा संख्या तेरह के प्रांगण के दाहिने भित्त पर पद्मासन मुद्रा में बुद्ध का उत्कीर्णन किया गया है, जबकि मालवा क्षेत्र के मानपुर क्षेत्र में ध्यानी बुद्ध की प्रतिमाएँ शैलोत्कीर्ण की गई हैं। इसी प्रकार हम देखते हैं, कि ध्यानी बुद्ध की प्रतिमाएँ धमनार की गुफा संख्या तेरह, बाघ की गुफा संख्या सात में बनाई गई हैं। बुद्ध की शयन प्रतिमाएँ, जो बुद्ध के महापरनिर्वाण का प्रतीक हैं का भी निर्माण मालवा क्षेत्र में हुआ। इस प्रकार की प्रतिमाएँ जीर्ण–शीर्ण अवस्था में हैं।

मृणमूर्तियाँ :– अगर हम देखें, तो मालवा क्षेत्र में बुद्ध

की मिट्टी के मृणमूर्तियों का निर्माण गुप्त काल में हुआ और इनकी प्राप्ति कायथा के पास लक्ष्मीपुरा में उत्खनन के दौरान हुई। दंगवाड़ा गाँव से भी बुद्ध की मृणमूर्तियाँ प्राप्त हुई हैं।

बौद्ध देवी प्रतिमाएँ :– मालवा क्षेत्र में बुद्ध और बोधिसत्वों के साथ–साथ बौद्ध देवियों की प्रतिमाओं का निर्माण हुआ। बौद्ध धर्म में बाद के समय में बौद्ध देवियों का महत्व बढ़ गया और इनकी मूर्तियों का निर्माण किया जाने लगा, जिसमें रौद्र और सौम्य, दोनों ही स्वरूपों की प्रतिमाएँ प्राप्त होती हैं। मालवा क्षेत्र से तारादेवी की प्रतिमाएँ प्राप्त हुईं, जो पूर्व मध्यकालीन हैं, जिसमें प्रमुख रूप से साँची, उज्जैन, बाघ, मंदसौर के बौद्ध पुरास्थल हैं। इनमें से ज़्यादा से ज़्यादा प्रतिमाएँ साँची संग्रहालय में आज भी संरक्षित हैं।

निष्कर्ष :– मालवा क्षेत्र में बौद्ध मूर्तिकला वहाँ के समृद्ध बौद्ध परम्परा को उजागर करती है। मालवा क्षेत्र में बौद्ध मूर्तिकला का प्रारंभ प्रथम सदी ईस्वी से दिखाई देता है। इसके विकसित स्वरूप का दर्शन गुप्त काल में होता है, जो धीरे–धीरे विलोपित होता चला गया। लेकिन, आज भी इनको संग्रहालयों में पुरातत्व के संरक्षण के रूप में, विरासत के रूप में संरक्षित किया गया है। प्रथम शताब्दी ईस्वी में निर्मित गांधार मूर्तिकला और मथुरा मूर्तिकला में जो बौद्ध प्रतिमाओं का निर्माण हुआ, उनकी प्राप्ति, उनके लक्षण, और उनकी अनुकृति, हमें मालवा क्षेत्र में दिखाई पड़ती है। जिसमें बुद्ध की प्रतिमा, बोधिसत्वों की प्रतिमाएँ, बुद्ध प्रतीकों और बौद्ध देवियों की प्रतिमाएँ प्राप्त होती हैं। मालवा क्षेत्र में अनेक बौद्ध स्थापत्य विद्यमान हैं, जिसमें स्तूप, चैत्य, विहार इत्यादि हैं, जिनमें बौद्ध प्रतिमाओं की उपस्थिति देखी जा सकती है।

अतः यह स्पष्ट है, कि मालवा क्षेत्र की बौद्ध मूर्तिकला या प्रतिमाकला अपने अनूठे महत्व को दर्शाती है, जो तत्कालीन समाज के वस्त्र, आभूषण, रहन–सहन, मनोभावों का आज भी प्रतिनिधित्व करती है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :–

- अग्रवाल, व. श. (१९६३). विजन इन दी लोंग डार्क नेस पृष्ट संख्या ५८. वारणसी, उत्तर प्रदेशः पृथ्वी प्रकशन.
- अग्रवाल, व. श. (२००३). स्टडीज एंड इंडियन आर्ट पृष्ट संख्या–१४१,१४४. वाराणसीः विश्वा विश्वविध्यालय प्रकाशन वाराणसी.
- अहिवार, र. (२०२१). मालवा की बौद्ध संस्कृति पृष्ट संख्या –१६५. दिल्लीः शिवालिक प्रकाशन दिल्ली.
- खरे , म. द. (1971). बाघ की गुफा पृष्ट संख्या 52. भोपाल.
- तिवारी , म. न., – गिरी, क. (१९५७). मध्य कालीन भारतीय प्रतिमा लक्षण पृष्टसंख्या–२४०. वाराणसीः विश्वविद्यालय प्रकशन वाराणसी.
- द्विवेदी, च. (२००२). दशपुर पृष्ट संख्या – १२३,१२४. भोपालः मध्यप्रदेश हिंदी ग्रन्थ अकादमी.
- भट्टचार्य, व. (२००४). इंडियन बुधिष्ट इकानोग्रफी. आर्यन बुक्स इंटरनेशनल एडिसन.

Swadeshi Research Foundation A Monthly Journal of Multidisciplinary Research
International Peer Reviewed, Refereed, Indexing & Impact Factor - 5.2, Ex- UGC S.N. 4990
ISSN : 2394-3580, Vol. – 9, No. – 3, Jan. – 2022, Conference Special Issues
2022

भारतीय ऑटोमोबाइल उद्योग में रोजगार के अपार अवसर–एक अध्ययन

गोरधन जाटव
शोधार्थी–वाणिज्य अध्ययनशाला, विक्रम विश्वविद्यालय उज्जैन (म.प्र.)
डॉ. केशव मणि शर्मा
निर्देशक–प्राध्यापक, शासकीय माधव कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय उज्जैन (म.प्र.)

1. मुख्य शब्द :– विनिर्माण, विपणन, विक्रय, समस्या, बेरोजगार, अवसर, अनुसरण, सटीक, सर्वेक्षण, अध्ययन, व्यापक, रोजगार, वाणिज्यिक, कलपुर्जे, बस, ट्रक, कार, ट्रेक्टर, मोटर सायकल, स्कूटर, ऑटोपार्ट्स, संभावनाएं, अभियंताओं, फाइनेंस, मार्केटिंग, कम्पोनेंट्स, इंजीनियरिंग, पॉलिटेक्निक, मैकेनिकल, एडमिनिस्ट्रेशन आदि।

2. सारांश :– भारतीय ऑटोमोबाइल उद्योग एक अत्यंत व्यापक क्षेत्र में फैला हुआ उद्योग है इस उद्योग की देश में विद्यमान बड़ी–बड़ी विनिर्माण इकाइयों में लाखों लोगों को रोजगार प्राप्त होता है इसके अलावा इसकी विपणन एवं विक्रय की शाखाएं संपूर्ण भारत वर्ष में एक मजबूत नेटवर्क की तरह फैली हुई है जहां देशभर के लाखों लोगों को रोजगार प्राप्त होता है।

भारतीय ऑटोमोबाइल उद्योग में आरंभ से आज तक लगातार प्रगति होतीं आई है वर्तमान में यह उद्योग हमारे देश के लाखों लोंगो को रोजगार प्रदान करने के साथ देश की जीडीपी में 7 प्रतिशत से अधिक का योगदान देता है। इस उद्योग में वे सभी कंपनियां शामिल है जो बस, ट्रक, कार, ट्रेक्टर, मोटर सायकल, स्कूटर, रक्षा वाहन आदि का विनिर्माण, विक्रय, विपणन का कार्य करती है यह उद्योग भारत में तेजी से बढ़ता हुआ उद्योग है इस कारण इस क्षेत्र में रोजगार के अपार अवसर विद्यमान है प्रस्तुत शोध अध्ययन में भारतीय ऑटोमोबाइल उद्योग में रोजगार के अवसरों का विश्लेष्णात्मक अध्ययन किया गया है।

3. प्रस्तावना :– हमारे देश की जनसंख्या में लगातार इजाफा होता जा रहा है वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार भारत की कुल जनसंख्या 121 करोड़ थी जो कि अब लगभग 138 करोड़ हो चुकी है और किसी भी देश की सरकार के लिए बढ़ती हुई जनसंख्या के लिए रोजगार के अवसर उपलब्ध करना सबसे बड़ी चुनौती होती है जनसंख्या के दृष्टिकोण से विश्व का दूसरा सबसे बड़ा राष्ट्र होने के कारण हमारा देश में भी बेरोजगारी अत्यंत विकराल समस्या का रूप धारण करती जा रही है ऐसी स्थिति में हमारे देश के लिए नए रोजगारों का सृजन करना एवं पूर्व प्रचलित रोजगारों में वृद्धि करना अत्यंत आवश्यक हो गया है प्रस्तुत शोध अध्ययन में ऑटोमोबाइल उद्योग में रोजगार के अवसरों का अध्ययन एवं विश्लेषण किया गया है।

ऑटोमोबाइल उद्योग भारत में तेजी से बढ़ता हुआ क्षेत्र है यह उद्योग हमारे देश की जीडीपी में 7% का योगदान देता है तथा अन्य उद्योगों में सहायक की भूमिका में निभाता है ऑटोमोबाइल उद्योग में निर्मित ऑटो उत्पादों के द्वारा ही सड़क मार्ग से अन्य उद्योगों के लिए माल एवं मानव संसाधनों का परिवार संभव हो पाता है वृहत क्षेत्र में फैला हुआ व्यापक उद्योग होने के कारण इस क्षेत्र में रोजगार के अवसरों की अपार संभावना है।

4. समस्या :– हमारे देश में बढ़ती बेरोजगारी एवं घटते रोजगार के अवसरों के कारण लगातार जीडीपी में गिरावट तथा लोगों का जीवन स्तर निम्न होता जा रहा है ऐसी स्थिति में हमारे देश के सर्वांगीण विकास के लिए नए रोजगार के अवसरों का सर्जन करना एवं मौजूदा रोजगार के अवसर में वृद्धि करना अत्यंत आवश्यक है इस समस्या को ध्यान में रखते हुए शोधार्थी द्वारा शोध विषय के रूप में ऑटोमोबाइल उद्योग में रोजगार के अवसर शीर्षक का शोध विषय के रूप में चयन किया गया है।

सारणी – 4.1

विगत 11 वर्षो में भारत की जीडीपी में उतार–चढ़ाव का विवरण

स.क्र.	दिनांक–वर्ष	जीडीपी (प्रतिशत में)	वार्षिक परिवर्तन
1	31–12–2010	8.4976	0.64
2	31–12–2011	5.2413	–3.26
3	31–12–2012	5.4564	0.22
4	31–12–2013	6.3861	0.93
5	31–12–2014	7.4102	1.02

6	31–12–2015	7.9963	0.59
7	31–12–2016	8.2563	0.26
8	31–12–2017	6.7954	–1.46
9	31–12–2018	6.533	–0.26
10	31–12–2019	4.0416	–2.49
11	31–12–2020	–7.9646	–12.01

स्रोत–भारत के राष्ट्रीय पोर्टल के अनुसार

5. शोध विषय का चयन :– तेजी से बढ़ती जनसंख्या के अनुपात में रोजगार के अवसरों में वृद्धि न होने के कारण बेरोजगारी हमारे देश में एक भीषण समस्या के रूप में उभर कर सामने आई है इसके समाधान हेतु नए रोजगार के अवसर निर्मित करना तथा पहले से कार्यरत उद्योगों में रोजगार के अवसरों में वृद्धि करना अत्यंत आवश्यक है देश के बेरोजगार युवाओं को ऑटोमोबाइल उद्योग में रोजगार के अवसर तलाशने की प्रेरणा एवं मार्गदर्शन के उद्देश्य से शोधार्थी द्वारा प्रस्तुत शोध विषय का चयन किया गया है।

6. उद्देश्य – प्रस्तुत शोध अध्ययन निम्नलिखित उद्देश्य को ध्यान में रखकर किया गया है।

6.1. भारतीय ऑटोमोबाइल उद्योग में रोजगार के अवसरों का अध्ययन एवं विश्लेषण करना।

6.2. ऑटोमोबाइल उद्योग में रोजगार प्राप्त करने के लिए का आवश्यक शैक्षणिक एवं तकनीकी शिक्षा का अध्ययन एवं विश्लेषण करना।

6.3. भारतीय ऑटोमोबाइल का देश के विकास में योगदान का अध्ययन करना।

7. शोध प्रविधि, समंको का संकलन तथा शोध क्षेत्र :– किसी भी शोध कार्य को प्रभावी ढंग से पूर्ण करने के लिए निश्चित शोध प्रविधि की आवश्यकता होती है जिसका अनुसरण कर उत्तम शोध कार्य किया जा सके इसी प्रकार प्राथमिक एवं द्वितीयक समंकों की आवश्यकता होती है जिनके विश्लेषण के आधार पर ही किसी शोध कार्य को विश्वसनीयता बनाकर सटीक परिणाम प्राप्त किये जा सकते है।

प्रस्तुत शोध अध्ययन को पूर्ण करने के लिए विश्लेषणात्मक शोध अध्ययन विधि का प्रयोग कर शोध विषय से संबंधित विभिन्न वेबसाइटों, प्रकाशित शोध पत्र, अप्रकाशित शोधकार्य, सर्वेक्षण रिपोर्ट, समाचार पत्र, पत्रिकाएं, शासकीय एवं अशासकीय प्रकाशन आदि का अध्ययन एवं विश्लेषण कर प्राथमिक एवं द्वितीयक समंको का संकलन किया गया है प्रस्तुत शोध अध्ययन भारतीय ऑटोमोबाइल उद्योग में रोजगार के अपार अवसर– एक अध्ययन के रूप में किया गया है।

8. शोध परिकल्पना :– किसी भी शोध अध्ययन की सार्थकता परीक्षण के लिए कुछ पूर्व निर्धारित परिकल्पनाएं होना अत्यंत आवश्यक है परिकल्पनाओं के अभाव में शोध अध्ययन दिशा विहीन होता है इसलिए प्रस्तुत शोध अध्ययन की निम्नलिखित परिकल्पना है निर्धारित की गई हैं।

प्रथम परिकल्पना – भारतीय ऑटोमोबाइल उद्योग व्यापक क्षेत्र में फैला हुआ वृहत् क्षेत्र है।

द्वितीय परिकल्पना – भारतीय ऑटोमोबाइल उद्योग में रोजगार के अपार अवसर है।

तृतीय परिकल्पना – बढ़ती बेरोजगारी हमारे देश के लिए एक अति विकराल समस्या है।

9. परिचय – ऑटोमोबाइल उद्योग में व्यक्तिगत एवं वाणिज्यिक वाहनों का विनिर्माण, विपणन, विक्रय तथा विक्रय पश्चात की सेवाएं शामिल होती है जिसमें दो पहिया, चौपहिया, एवं अन्य सभी प्रकार के ऑटोमोबाइल मोटर वाहनों तथा कलपुर्जो का कारोबार शामिल किया जाता है।

भारतीय ऑटोमोबाइल उद्योग में प्रारम्भ से आज तक लगातार प्रगति होतीं आई है वर्तमान में यह उद्योग हमारे देश के लाखों लोंगो को रोजगार प्रदान करने के साथ देश की जीडीपी में 7 प्रतिशत से अधिक का योगदान देता हैप इस उद्योग में वे सभी कंपनियां शामिल है जो बस, ट्रक, कार, ट्रेक्टर, मोटर सायकल, स्कूटर, रक्षा वाहन आदि का विनिर्माण, विक्रय, विपणन का कार्य करती है इस क्षेत्र में कार्य करने वाली कंम्पनियों में मुख्य रूप से अशोक लीलेंड लिमिटेड चेन्नई, हिंदुस्तान मोटर्स लिमिटेड कलकत्ता, प्रीमियर ऑटोमोबाइल लिमिटेड मुंबई, टाटा इंजीनियरिंग एंड लोकोमोटिव कंपनी जमशेदपुर, महिंद्रा एंड महिंद्रा ऑटोमोटिव लिमिटेड. मुंबई महाराष्ट्र, बजाज ऑटो लिमिटेड, पुणे महाराष्ट्र, आयशर मोटर्स लिमिटेड, फोर्स मोटर्स पुणे महाराष्ट्र, हीरो मोटोक्रोप लिमिटेड नई दिल्ली, मारुती सुजुकी इंडिया, टाटा मोटर्स लिमिटेड लिमिटेड मुंबई महाराष्ट्र आदि शामिल है।

वर्तमान समय में भारत विश्व में चौथा सबसे बड़ा ऑटोमोबाइल उद्योग वाला देश बन चुका है।

वर्तमान भारत में कुल लगभग 48 ऑटोमोबाइल विद्यमान कंपनियां है। तथा लगभग कुल 12 टू व्हीलर कंपनियां और लगभग 748 ऑटो पार्ट्स बनाने वाली कम्पनियाँ कार्यरत हैं। एक अनुमान के अनुसार वर्ष 2026 तक भारत विश्व का तीसरा सबसे बड़ा ऑटोमोबाइल उद्योग वाला देश बन जाएगा ५ तेजी से विकसित एवं विस्तारित होने के करण इस क्षेत्र में तेजी से रोजगार के अवसरों में वृद्धि होने की अपार संभावनाएं है।

10. रोजगार के अवसर :– भारतीय ऑटोमोबाइल उद्योग एक अत्यंत व्यापक क्षेत्र है में फैला हुआ उद्योग है यह उद्योग जितना अधिक विस्तृत एवं व्यापक है उतना ही अधिक व्यवस्थित एवं विस्तृत नेटवर्क में फैला हुआ है भारतीय ऑटोमोबाइल उद्योग की बड़ी–बड़ी विनिर्माण इकाइयों के अलावा इसके सेल्स एवं सर्विस आउटलेट छोटे– छोटे कस्बे से लेकर बड़े– बड़े महानगरों तक सुनियोजित ढंग से फैले हुए हैं जो छोटे शहरों से लेकर बड़े–बड़े महानगर तक के लोगों को बड़ी संख्या में रोजगार प्रदान करते हैं।

आमतौर पर लोगो में यह भ्रम व्याप्त है कि ऑटोमोबाइल उद्योग में केवल ऑटोमोबाइल अभियंताओं के लिए ही रोजगार के अवसर संभव हो सकते हैं। किन्तु हकीकत यह है कि इनके अलावा भी इस उद्योग में कई प्रकार के पेशेवर प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से इस उद्योग से जुड़े हुए हैं। इसमें यदि अभियांत्रिकी की विभिन्न शाखाओं की बात करें तो इलेक्ट्रिकल, इलेक्ट्रोनिक्स, मेकैनिकल, मेटलर्जी आदि शाखाओं के पेशेवरों को बड़ी संख्या में रोजगार प्राप्त होता है। इसके अलावा एयर कंडिशनर मैकेनिक्स, प्लास्टिक मॉडलिंग एक्सपट्स, पेंटिंग टेक्नोलोजी आदि में दक्ष कर्मियों आदि के साथ फाइनेंस, मार्केटिंग, सेल्स आदि रोजगार की भी भरमार इस उद्योग में हैं। यही नहीं स्थानीय बाजार के मोटर रिपेयरिंग वर्क जिसमे लेथ मशीन वर्क, बेट्री, टायर शॉप आदि के कामकाज से जुड़े लाखो लोगो को भी रोजगार के अवसर प्राप्त होते हैं। इस उद्योग में स्वीपर से लेकर महा प्रबंधक तक की श्रेणी अर्थात अशिक्षित से उच्च शिक्षित तक सभी प्रकार की श्रेणी के रोजगार के अपार अवसर विद्यमान है।

ऑटोमोबाइल निर्माता कंपनियां सभी कम्पोनेंट्स/कलपुर्जे स्वयं नहीं बनाती यह कार्य छोटे–छोटे औद्योगिक इकाइयों की मदद से बड़े पैमाने पर किया जाता है। ऐसी लघु इकाइयों की संख्या देश में सैकड़ों में नहीं बल्कि हजारों में है जिनमे लाखों लोगो को रोजगार प्राप्त होता है।

वर्तमान में भारतीय ऑटोमोबाइल उद्योग प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से देश के लगभग 37 मिलियन लोगों को रोजगार प्रदान करता है इस प्रकार यह क्षेत्र देश में सबसे ज्यादा रोजगार प्रदान करने वाले उद्योगों में से एक है।

11. रोजगारोन्मुखी पाठ्यक्रम :– वैसे तो ऑटोमोबाइल उद्योग में सभी प्रकार के लोगों को रोजगार प्राप्त होता है किन्तु कुछ विशेष प्रकार की तकनीकी शिक्षा एवं पाठ्यक्रम एवं प्रशिक्षण प्राप्त करने से ऑटोमोबाइल उद्योग में जल्दी और अच्छा रोजगार प्राप्त करने की प्रबल संभावनाएं होती है।

ऑटोमोबाइल क्षेत्र में आसानी से रोजगार प्राप्त करने के लिए कुछ महत्वपूर्ण तकनीकी तथा गैर तकनीकी पाठ्यक्रमों का विवरण निम्नानुसार है।

11.1 तकनीकी पाठ्यक्रम – ऑटोमोबाइल क्षेत्र में आसानी से रोजगार प्राप्त करने के लिए कुछ महत्वपूर्ण तकनीकी पाठ्यक्रमों में मुख्य रूप से बैचलर ऑफ इंजीनियरिंग / बैचलर आफ टेक्नोलॉजी इन ऑटोमोबाइल, मैकेनिकल, इलेक्ट्रिकल, इलेक्ट्रॉनिक्स, एयर कंडीशनर, साइंस कंप्यूटर, आदि शाखाएं है वही इन्ही शाखाओं में मास्टर डिग्री भी की जा सकती है साथ ही जूनियर इंजीनियर या सुपरवाइजर लेवल पर रोजगार प्राप्त करने के लिए देश के विभिन्न पॉलिटेक्निक महाविद्यालयों उक्त शाखाओं में 3 वर्षीय पॉलिटेक्निक डिप्लोमा भी किए जा सकते हैं तथा हेल्पर या तकनीशियन लेवल पर रोजगार प्राप्त करने के किये देश के विभिन्न औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थानों से ऑटोमोबाइल, मैकेनिकल, फिटर, वेल्डर, कंप्यूटर डाटा इंट्री आदि ट्रेडों से 1 वर्षीय या 2 वर्षीय डिप्लोमा कोर्स भी किए जा सकते हैं।

11.2 गैर–तकनीकी पाठ्यक्रम – गैर तकनीकी शिक्षा पाठ्यक्रम के रूप में ऑटोमोबाइल उद्योग में रोजगार प्राप्त करने के लिए प्राथमिकध्माध्यमिक शिक्षा, हाई स्कूल, हायर सेकेंडरी या फिर किसी भी विषय में स्नातक या स्नातकोत्तर उत्तीर्ण लोग रोजगार प्राप्त कर सकते हैं फिर भी कुछ महत्वपूर्ण गैर तकनीकी पाठ्यक्रमों के अंतर्गत बैचलर आफ बिजनेस एडमिनिस्ट्रेशन, बैचलर ऑफ कॉमर्स, मास्टर आफ बिजनेस एडमिनिस्ट्रेशन बैचलर आफ टैली अकाउंटिंग, मानव संसाधन प्रबंधन में स्नातक, मॉडर्न ऑफिस मैनेजमेंट आदि पाठ्यक्रम प्रमुख है जिनकी सहायता से

ऑटोमोबाइल उद्योग में आसानी से रोजगार प्राप्त किया जा सकता है।

12. परिकल्पनाओं का परीक्षण – किसी भी शोध कार्य का सबसे महत्वपूर्ण कार्य परिकल्पनाओं का निर्धारण एवं इनका परीक्षण करना होता है जिसके आधार पर ही शोध कार्य की सार्थकता सिद्ध मानी जाती है इसी बात को दृष्टिगत रखते हुए निम्नानुसार प्रस्तुत शोध कार्य की परी कल्पनाओं का परीक्षण किया गया है।

प्रथम परिकल्पना – भारतीय ऑटोमोबाइल उद्योग व्यापक क्षेत्र में फैला हुआ वृहत् क्षेत्र है।

परिक्षण – प्रस्तुत शोध के गहन अध्ययन एवं विश्लेषण से प्राप्त जानकारी के अनुसार भारतीय ऑटोमोबाइल उद्योग संपूर्ण भारत वर्ष में फैला हुआ अति विस्तृत उद्योग है यह उद्योग विस्तृत नेटवर्क के रूप में पुरे देश में फैला हुआ है इस उद्योग के सेल्स एवं सर्विस आउटलेट छोटे–छोटे कस्बे से लेकर बड़े–बड़े महानगरों तक सुनियोजित ढंग से फैले हुए हैं जहाँ सेल्स, सर्विस एवं स्पेयर्स की सेवाएँ प्रदान की जाति है।

ऑटोमोबाइल निर्माता कंपनियां सभी कम्पोनेंट/कलपुर्जे स्वयं नहीं बनाती यह कार्य छोटे–छोटे औद्योगिक इकाइयों की मदद से बड़े पैमाने पर किया जाता है। ऐसी लघु इकाइयों की संख्या देश में सैकड़ों में नहीं बल्कि हजारों में है जो पुरे देश में फैले है इससे स्पष्ट प्रतीत होता है कि भारतीय ऑटोमोबाइल उद्योग व्यापक क्षेत्र में फैला हुआ वृहत् क्षेत्र है।

द्वितीय परिकल्पना – भारतीय ऑटोमोबाइल उद्योग में रोजगार के अपार अवसर है।

परिक्षण – भारतीय ऑटोमोबाइल उद्योग की बड़ी–बड़ी विनिर्माण इकाइयों में अनेकों लोगों को रोजगार प्राप्त होता है इसके अलावा इस उद्योग की सेल्स, सर्विस एवं स्पेयर्स की शाखाएं छोटे– छोटे कस्बे से लेकर बड़े–बड़े महानगरों तक सुनियोजित ढंग से फैली हुई हैं जो छोटे शहरों से लेकर बड़े–बड़े महानगर तक के लोगों को बड़ी संख्या में रोजगार प्रदान करती हैं।

इस उद्योग में अभियांत्रिकी की विभिन्न शाखाओं जैसे कि इलेक्ट्रिकल, इलेक्ट्रोनिक्स, मेकैनिकल, मेटलर्जी, एयर कंडिशनर मैकेनिक्स, प्लास्टिक मॉडलिंग एक्सपट्स, पेंटिंग टेक्नोलोजी आदि शाखाओं के पेशेवरों को बड़ी संख्या में रोजगार प्राप्त होता है। यही नहीं स्थानीय बाजार के मोटर रिपेयरिंग वर्क जिसमे लेथ मशीन वर्क, बेट्री, टायर शॉप आदि के कामकाज से जुड़े लाखो लोगो को भी रोजगार के अवसर प्राप्त होते हैं।

ऑटोमोबाइल निर्माता कंपनियां सभी कम्पोनेंट्सध्कलपुर्जे स्वयं नहीं बनाती यह कार्य छोटे–छोटे औद्योगिक इकाइयों की मदद से बड़े पैमाने पर किया जाता है। ऐसी लघु इकाइयों की संख्या देश में सैकड़ों में नहीं बल्कि हजारों में है जिनमे लाखों लोगो को रोजगार प्राप्त होता है।

वर्तमान में भारतीय ऑटोमोबाइल उद्योग प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से देश के लगभग 37 मिलियन लोगों को रोजगार प्रदान करता है इस प्रकार यह क्षेत्र देश में सबसे ज्यादा रोजगार प्रदान करने वाले उद्योगों में से एक है।

तृतीय परिकल्पना – बढ़ती बेरोजगारी हमारे देश के लिए एक अति विकराल समस्या है।

परिक्षण– शोध अध्ययन से प्राप्त जानकारी के अनुसार हमारे देश की जनसंख्या में लगातार इजाफा होता जा रहा है वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार हमारे देश की कुल जनसंख्या 100 करोड़ थी जो वर्ष 2020 तक लगभग 130 करोड़ हो चुकी है। तथा किसी भी देश की सरकार के लिए तेजी से बढ़ती हुई जनसंख्या के लिए रोजगार के अवसर उपलब्ध करना सबसे बड़ी चुनौती होती है जनसंख्या के दृष्टिकोण से विश्व का दूसरा सबसे बड़ा राष्ट्र होने के कारण हमारा देश में भी बेरोजगारी अत्यंत विकराल समस्या का रूप धारण करती जा रही है–

तेजी से बढ़ती जनसंख्या के अनुपात में रोजगार के अवसरों में वृद्धि न होने के कारण बेरोजगारी हमारे देश के लिए एक अति विकराल समस्या के रूप में उभर कर सामने आई है।

13. सुझाव – प्रस्तुत शोध अध्ययन के आधार पर निम्नलिखित सुझाव प्रस्तुत किए जाते हैं।

- भारतीय ऑटोमोबाइल उद्योग में रोजगार के अवसरों की अपार संभावना है इसके लिए सरकार को इस उद्योग के विकास एवं विस्तार के लिए और अधिक प्रयास करना चाहिये।
- बेरोजगार युवाओं को ऑटोमोबाइल क्षेत्र में रोजगार

प्राप्त करने के लिए विभिन्न माध्यमों से प्रचार–प्रसार कर अभिप्रेरित किया जाना चाहिए।

- बेरोजगार युवाओं को ऑटोमोबाइल उद्योग में रोजगार प्रदान करने के लिए सरकार द्वारा चलाये जा रहे रोजगारउन्मुखी प्रशिक्षण कार्यक्रमों का जमीनी स्तर पर बेहतर प्रबंधन एवं संचालन करने की आवश्यकता है।
- ऑटोमोबाइल उद्योग में रोजगार प्रदान करने के लिए नए तकनीकी पाठ्यक्रमों का सृजन किया जाना चाहिए।
- बेरोजगार युवाओं को स्वयं अपनी योग्यता अनुसार ऑटोमोबाइल उद्योग में रोजगार प्राप्त करने के प्रयास करना चाहिए।

14. निष्कर्ष :– भारतीय ऑटोमोबाइल उद्योग अत्यंत व्यापक क्षेत्र है में फैला हुआ उद्योग है यह उद्योग जितना अधिक विस्तृत एवं व्यापक है उतना ही अधिक व्यवस्थित एवं विस्तृत नेटवर्क में फैला हुआ है भारतीय ऑटोमोबाइल उद्योग की बड़ी–बड़ी विनिर्माण इकाइयों के अलावा इसके सेल्स एवं सर्विस आउटलेट छोटे–छोटे कस्बे से लेकर बड़े– बड़े महानगरों तक सुनियोजित ढंग से फैले हुए हैं जो छोटे शहरों से लेकर बड़े–बड़े महानगर तक के लोगों को बड़ी संख्या में रोजगार प्रदान करते हैं इस उद्योग में अभियांत्रिकी की विभिन्न शाखाओं जैसे कि इलेक्ट्रिकल, इलेक्ट्रोनिक्स, मेकैनिकल, मेटलर्जी, एयर कंडिशनर मैकेनिक्स, प्लास्टिक मॉडलिंग एक्सपट्स, पेंटिंग टेक्नोलोजी आदि शाखाओं के पेशेवरों को बड़ी संख्या में रोजगार प्राप्त होता है । यही नहीं स्थानीय बाजार के मोटर रिपेयरिंग वर्क जिसमे लेथ मशीन वर्क, बेट्री, टायर शॉप आदि के कामकाज से जुड़े लाखों लोगों को भी रोजगार के अवसर प्राप्त होते हैं।

वर्तमान में भारतीय ऑटोमोबाइल उद्योग प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से देश के लगभग 37 मिलियन लोगों को रोजगार प्रदान करता है इस प्रकार यह क्षेत्र देश में सबसे ज्यादा रोजगार प्रदान करने वाले उद्योगों में से एक है इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि भारतीय ऑटोमोबाइल उद्योग में रोजगार के अपार अवसर विद्यमान है।

15. संदर्भ ग्रंथ सूची :–

- भारत सरकार रोजगार एवं श्रम मंत्रालय की वार्षिक रिपोर्ट, वर्ष 2019–20,
- सोसायटी ऑफ इंडियन ऑटोमोबाइल मेन्युफेक्चरर्स, वार्षिक रिपोर्ट 2019–20,
- दैनिक पत्रिका समाचार पत्र, दिनांक–17ध05ध2018
- प्रेस इनफार्मेशन ब्यूरो (पीआईबी), दिल्ली, दिनांक–24.09.2021
- भारत सरकार का राष्ट्रीय पोर्टल – (www.india.gov.in)
- www.jansankhya-itshindi-com
- www.automobiletech11.in
- www.fundoodata.com
- www.macrotrends.net

Swadeshi Research Foundation A Monthly Journal of Multidisciplinary Research
International Peer Reviewed, Refereed, Indexing & Impact Factor - 5.2, Ex- UGC S.N. 4990
ISSN : 2394-3580, Vol. – 9, No. – 3, Jan. – 2022, Conference Special Issues
2022

आदिवासी जीवन केन्द्रित हिंदी उपन्यासों में नारी समस्याएँ

मालोजी अर्जुन जगताप
सहायक प्राध्यापक, हिंदी विभाग, सांगोला कॉलेज सांगोला, जिला सोलापुर, महाराष्ट्र

सारांश :– आदिवासी जीवन पर केंद्रित उपन्यास नारी को केंद्र में रखकर लिखे गए हैं। 'कगार की आग', सु–राज, नीलोफर, वनतरी, धार, सीता, मौसी, इदन्नमम् और अल्मा कबूतरी इन उपन्यासों की केंद्रिय विषयवस्तु आदिवासी नारी और उनका जीवन संघर्ष है। आदिवासी कबीलों में मातृसत्ता एवं पितृसत्ताक व्यवस्था विद्यमान है। आज भारत में सिर्फ गारो और खासी जनजातियों में मातृसत्ताक परिवार व्यवस्था बची है। देश की अन्य जनजातियों में पितृसत्ताक परिवार व्यवस्था हावी हो रही है। पितृसत्ताक परिवार व्यवस्था में भी पुरुषों को नगन्य स्थान है। परिवार के सभी कार्यों में स्त्रियों को अधिक महत्त्व है। परिवार का संचलन नारी ही करती है। वह जंगलों में गाद, चिरौंजी, जलावन, शहद, कत्था इकट्ठा कर गाँव में बेचकर परिवार चलाती है। इसके साथ साथ खेती, पशुओं की देखभाल, आवास की सफाई आदि कार्य भी उन्हें ही करना पड़ता है।

आदिवासी नारी पुरुष के कंधों से कंधा मिलाकर कार्य करती है या यह कह सकते हैं कि पुरुष से भी अधिक परिश्रम करती है। वह अपने जीवन और परिवार संबंधी निर्णय लेती है। खुद का जीवन साथी चुनने में उसे आजादी है। परिवार की धार्मिक विधियों में उन्हें अधिक महत्त्व दिया गया है। वह स्वतंत्र रूप से अपना जीवन बीताती है। ये नारियाँ अपने अस्तित्व एवं अधिकारों को लेकर अत्यंत सजग है। इनके मुक्त जीवन पर बाधा आने पर विद्रोही बनती है। यहाँ तक की अपने पति और पंचायत के निर्णयों को भी ठुकराती दृष्टिगोचर होती है। 'कगार की आग' की गोमती, 'वनतरी' की वनतरी, 'नीलोफर' की नथनी, 'शैलूष' की रूपा, 'धार' की मैना, 'सीता' की सीता, 'मौसी' की मौसी और 'अल्मा कबूतरी' की अल्मा स्वतंत्र एवं मुक्त जीवन जीनेवाली, परिवार का संचलन करनेवाली, सामाजिक दायित्व निभानेवाली तथा साहसी नारी के रूप में दृष्टिगोचर होती है। एक ओर तो वह परिवार का केंद्र है तो दूसरी ओर अनेक समस्याओं से पीड़ित है। भूख, बेरोजगारी, निरक्षरता और अंधविश्वास, शोषण, अशिक्षा और स्वास्थ की दुरावस्था आदि प्रमुख समस्याएँ हैं।

शब्दकुंजी – आदिवासी, आदिवासी और हिंदी उपन्यास, आदिवासी नारी, नारी समस्याएँ

भूमिका :– आदिवासी नारी भी अनेक समस्याओं से घिरी हुई है। अज्ञान, अशिक्षा, अंधविश्वास, बेरोजगारी, कुपोषण, शोषण, बलात्कार और स्वास्थ की दुरावस्था जैसी समस्याएँ उसके जीवन को ध्वस्त कर रही है। आदिवासी नारियों के संदर्भ में सचेंद्रकुमार के विचार है, ''आज की स्थिति में देखा जाए तो आदिवासी महिलाएँ हर संकटों से घिरी हुई है। सबसे ज्यादा संकट सामाजिक, आर्थिक व्यवस्था का है। इनके पास आजीविका का साधन नहीं है। एक स्थान पर रूखने के लिए घर नहीं है। अतः यह खानाबदोश और बंजारों की जिंदगी जीने के लिए मजबूर है।''1 यह आदिवासी नारियाँ समस्याओं में अपने जीवन को निखारती है। आदिवासी नारी का संघर्ष दोहरा संघर्ष है। एक ओर उसे पूरे परिवार की जिम्मेदारी को उठाना है और दूसरी ओर स्त्री होने के कारण अस्तित्व की रक्षा एवं शोषण से बचना है। आदिवासी नारी पारिवारिक समस्याएँ एवं बाहरी शोषण के बीच पीसती दिखाई देती है। बाह्य समाज के संपर्क में आने के कारण आज वह पुरुषों अहंभाव का भी शिकार होती दिखाई देती है। आदिवासी नारी की समस्याओं में औद्योगिककीकरण के कारण और इजाफा हुआ है।

1. नारी शाषण की समस्या :– सामान्य नारी से कई गुना अधिक बाह्य कारकों द्वारा आदिवासी नारी अधिक शोषित होती है। आदिवासी नारी का शारीरिक, मानसिक और आर्थिक शोषण–दोहन होता है। चारों तरफ से जमींदार, ठेकेदार, पुलिस, साहूकार, वन अधिकारी आदि उसे शोषित करते हैं। इस शोषण को हिंदी रचनाकारों ने केंद्रिय विषय बनाकर यथार्थ रूप में चित्रित किया है। नारी शोषण के संदर्भ में गोपालराय के विचार हैं– ''बलात्कार, पति द्वारा पत्नी का मानसिक, शारीरिक उत्पीड़न, परंपरागत नारी संहिता को स्वीकार करने की स्त्री की मजबूरी, स्त्री को आर्थिक, राजनीतिक अधिकारों से वंचित रखने की साजिश आदि नारी शोषण और दमन के प्रमुख रूप है।''2 आदिवासी नारी भी चारों ओर से शोषित है। आदिवासी नारी का परिवार में कम शोषण लेकिन बाहर उसे सिर्फ एक मनोरंजन एवं भोग की वस्तु माना जाता है। ठाकुर हो या साहूकार पुलिस हो या ठेकेदार सब उसे भोगना चाहते हैं। आदिवासी नारी शारीरिक शोषण सबसे अधिक होता है। वह इन दीकूओं के बलात्कार

का एवं हवस की शिकार बार–बार बनती है।

हिमांशु जोशी ने 'कगार की आग' उपन्यास में आदिवासी 'गाड़िया लोहारों' की कहानी गोमती को केंद्र में रखकर लिखा है। गोमती का अकथनीय शोषण पढ़कर लगता है शायद गोमती दुर्भाग्य को लेकर ही पैदा हुई हो। पहले पति, ससूर, ककिया, तेजुआ, तिरपन लाल और दरोगा गोमती का शोषण करते हैं। उस पर बलात्कार करते हैं। उसका मानसिक और शारीरिक शोषण इतना होता है कि उसे शब्दों में व्यक्त करना कठिन है। गोमती के शोषण के संदर्भ में डॉ. भगवतीशरण मिश्र के विचार है, ''स्वतंत्रता प्राप्ति और सरकारी योजनाओं के बावजूद गरीबी–ग्रस्त पहाड़ियों के जीवन में कोई परिवर्तन नहीं हुआ। गरीबों का शोषण यथावत है। सबसे अधिक त्रस्त है नारियाँ जिनकी इज्जत की कोई कीमत नहीं। आज एक तरफ गोमती के सदृश्य अबला, गरीब और बेबस नारी है तो दूसरी तरफ कलिया, तेजुआ, खुशाल और तिरपनलाल आदि दरिंदे हैं जिनके लिए एक औरत भोग्या से अधिक कुछ नहीं।''3 उपन्यासकार गोमती को अंततः कालभैरवी का रूप देकर यह संदेश देता है कि नारी यदि अपनी वास्तविक शक्ति के प्रदर्शन पर आ जाए तो वह किसी दुर्गा – चंडी की तरह ही दुष्टों का विनाश करने में सक्षम हो सकती है।

आदिवासी नारियों को पुलिस वाले किसी न किसी वजह से थाने बुलाकर उनका शारीरिक शोषण करते हैं। गोमती के साथ भी यही होता है। पेशकार पुलिस थाने में बुलाकर उसपर बलात्कार करता है, ''हाथ जोड़ती हुई वह रो पड़ी, वह सोचती थी, इस तरह से रोने से शायद वह छोड़ दे! पर तभी एक तमाचा गाल पर जमाता हुआ पेशकार बोला, 'उसे मारकर अब निरदोस बन रही है– ससूर की बच्ची! उतार कपड़े, दिखा निशान, कहाँ कहाँ पर हैं? उसी की तरह तुझे भी फाँसी पर न लटकाया तो मेरा नाम कुंवरसिंह पेशकार नहीं है।''4 जब तक पेशकार रहा तब तक उससे रोज पूछताछ के नाम पर भोगता रहा और बाद में पटवारी ने यह सिलसिला शुरू किया। आदिवासियों की बहू–बेटियों को औरतों को यह साहूकार, ठाकुर, जमींदार, पुलिस वाले सिर्फ अपनी संपत्ति मानते हैं। गोमती का कभी बलात शोषण होता है, तो कभी गोमती खुद शोषित होने के लिए मजबूर हो जाती है। 'सु–राज' (अंधेरा और) में शंखी, पिरथी उच्च वर्गीय लोगों का शिकार बनती है। शंखी को तो शहर में बेचा जाता है तथा पिरथी के साथ सोहन सिंह बलात्कार करता है। बाद में पिरथी की सड़ी लाश उसके पिता भीखू के हाथ में मिलती है। ऊपर से पुलिस वाले भीखू को ही पत्नी और बेटी की दोषी मानकर पुलिस थाने ले जाती है। भीखू की पत्नी एवं बेटी चंदरिया पर पुलिस अत्याचार करती है। लेखक ने इस घटना को इन शब्दों में व्यक्त किया है– ''भीखू की पत्नी अमिया अपने को मुंह दिखाने लायक नहीं समझ रही थी– लाज शर्म के मारे। चंदरिया की फूल से देह मुरझा आई थी। आँखों के नीचे काली–काली झाइयाँ। देह में दर्द के मारे चला तक नहीं जा रहा था।''5 आदिवासी नारियों को शोषण अपने परिवार एवं कबीलों में कम ही होता है लेकिन तथाकथित सभ्य कहा जाने वाला समाज उनके जीवन को ध्वस्त कर रहा है। उनके जीवन के साथ खिलवाड़ किया जा रहा है। जैसे की वह मानव न हो।

'नीलोफर' उपन्यास में धार्मिक दंगों का शिकार हुई आदिवासी कन्या नथनी की पीड़ा का यथार्थ अंकन कृष्णा अग्निहोत्री ने इन शब्दों में किया है– ''जब मन में आता, वे सब हथियार रखकर हमें नोचने लगते, दो–चार तो इस जुल्म से मर गई। साल भर में हमारे कपड़े फट गए और कुछ स्त्रियों ने तो कराह–कराहकर वहीं बच्चों को जन्म दिया लेकिन मैं मरी नहीं, जंगली लड़की थी, सब सह गई। हरामी संतान को जन्म देने के लिए अब तक जिंदा हूँ।''6 आदिवासी नारी का शोषण करना सभ्य समाज अपना अधिकार मानता है। उनका जन्म सिर्फ सेवा के लिए हुआ है, यह उनकी धारणा है। संजीव ने 'धार' उपन्यास में संथालों की दुर्दशा एवं विद्रोह का चित्रण मैना को केंद्र में रखकर किया है। मैना जो विद्रोही नारी है। उसका पुलिसवाले शोषण करते हैं। जेल में ही उनके साथ बलात्कार करते हैं। इससे एक बच्चा जन्म लेता है। ठेकेदार भी मैना से अधिक श्रम करवाकर मेहनताना नहीं देता। 'इदन्नमम्' में आदिवासी नारी का शोषण ठेकेदार, साहूकार मिलकर करते हैं। उपन्यास के नारी पात्रों के संदर्भ में विजबहादूर सिंह का कथन, ''उपन्यास उन तमाम भारतीय स्त्रियों को लेकर लिखा गया है जो सनातन पुरुष प्रधान व्यवस्था में सदियों में तरह–तरह से अधिकार वंचित और काम शोषित रहती आई है।''7 इदन्नमम् में उच्चवर्गीय एवं आदिवासी दोनों समाज की नारियाँ हमें शोषित दिखाई देती है। राउत नारी तुलसिन मंदा के सामने अपनी दुर्दशा व्यक्त करते हुए कहती है– ''अरे हमारी तो बेबसी है ठेकेदार, हमें पेट के लाने दिन में ही पथरा पड़त। रात में देह भी... हमें बिना रौंदे– चीते तुमारी बिरादरी के लोग पथरों से पथरों को हाथ नहीं लगा देत।''8 भूख तथा रोजी–रोटी के लिए इन राउतों को पथर–क्रेशर के ठेकेदार शहद

की छत्ते से जैसे शहद नीचोड़ते हैं, वैसे इनका शोषण करते हैं। बार–बार इनकी औरतों पर बलात्कार करते हैं। ये आदिवासी नारियाँ गुप्त रोग का घर बन जाती है।

'सीता' उपन्यास की सीता और 'मौसी' उपन्यास की मौसी इसी तरह खदानों के ठेकेदारों द्वारा और उच्च वर्ग के लोगों द्वारा शोषित होती है। मैत्रेयी पुष्पा का अल्मा कबूतरी उपन्यास कबूतरा नारी के शोषण की दासतां है। इस संदर्भ में डॉ संजय एल. मादार कहते हैं– ''स्त्री कोई जाति नहीं होती। सभी स्त्रियाँ एक है। लेकिन कबूतरा जनजाति की कबूतरी। उसे पुरुष अपनी हवस का शिकार बनाने में थोड़ा भी डरता नहीं। कबूतरी पर दोगुनी ताकत से आक्रमण किया जाता है। कबूतरा की कमजोरी का फायदा पुरुष समाज लेता है। उनकी कोई रक्षा नहीं कर सकता? रक्षा करने वाले पुरुष तो इन स्त्रियों को दौड़ाकर बलात्कार करते हैं।''9 मैत्रेयी पुष्पा नारियों के इस अत्याचार को देखकर अधिक चिंतित है। कदमबाई बलात्कार की शिकार है, उसी तरह भूरी और अल्मा भी शोषण का शिकार हो जाती है।

2. रखेल की समस्या :– किसी भी पुरुष की ओर से बिना विवाह के किसी लड़की या औरत को अपने घर में रखना रखेल कहा जाता है। इससे घर का सारा काम करवाया जाता है। साथ ही संबंधित पुरुष उसके साथ शारीरिक संबंध भी स्थापित करता है। कोई पुरुष अपनी पत्नी के होते हुए भी दूसरी औरत को शरीर सुख के लिए घर से बाहर भी रख लेता है, उसे भी रखेल कहा जाता हैं।

रमणिका गुप्ता ने 'सीता' उपन्यास में रखनी की परिभाषा की है– ''घरनी' याने पत्नी के बराबर का दर्जा। पर समाज के मर्जी के बिना विपरित बिना ब्याहे किए जा कर किसी मरद के यहाँ अपनी इच्छा से रहनेवाली या बैठ जानेवाली औरत अथवा जबरन अगवा करके लालच देकर लाई गई औरत भी 'रखनी' कहलाती है।''10 ज्यादातर रखेलों को पुरुष जब तक यौवन है, सौंदर्य है तब तक उसकी मर्जी संभालते हैं। उन्हें सम्मान देते हैं। बाद में उन्हें त्यागने का काम करते हैं। उसे हर समय पर अपमानित किया जाता है। समय आने पर पीटने भी पीछे नहीं हटते। इससे उनका जीवन नरक जैसा बन जाता है। 'इदन्नमम्' में लीला राउतिन स्वेइच्छा से अभिलाख सिंह की रखेल बन जाती है। वह अन्य आदिवासी नारियों पर होनेवाले अत्याचार में अभिलाख सिंह और जगसेर की मदद करती है। आदिवासी नारी होकर भी उसे इन भूखे, अभावग्रस्त एवं शोषण से पीड़ित आदिवासियों की पीड़ा समझ में नहीं आती है। नारी के इस स्वभाव के संदर्भ में राकेश कुमार सिंह लिखते हैं– ''नारी की एक बड़ी विड़ंबना यह है कि नारी ही नारी की प्रबल शत्रु है।''11 लीला को उसके कुकर्मो की सजा उसे मिलती है। राउत आदिवासी अभिलाख के साथ उसे भी पीटते हैं। रखेल समस्या का चित्रण 'सीता' उपन्यास में अत्यंत गहराई के साथ रेखांकित किया गया है, ''कोयला खदानों में प्रायः मुंशी, ठेकेदार कुछ एक कामिनो को रखेल के रूप में रख लेते हैं। जिसका अर्थ था उनका आर्थिक और यौन शोषण।''12 यासिन सीता को रखेल बनाता है प्रेम के कारण नहीं तो शारीरिक भूख एवं धन की लालच में। सीता परिश्रमी थी, उसकी की कमाई से ट्रक खरीदता है, जमीन खरीदता है लेकिन उसके बच्चों को अपना नाम नहीं देता। अंत में उसे घर से निकाल देता है। वह सीता की भावनाओं के साथ खिलवाड़ करता है। यासिन मियाँ प्रतीक है– धुर्त एवं चालाक पुरुषों का जो भोली–भाली आदिवासी कन्याओं को हवस का शिकार बनाता है।

आदिवासी समाज में स्त्री की देह वस्तु रूप में परिवर्तित करने की होड़ मची है। पुरुषों की हवस का आदिवासी नारियाँ शिकार होती दृष्टिगोचर होती है। आदिवासी स्त्रियाँ रखेल बनने को दो कारण है, एक विवश, मजबूर होकर और दूसरा ठाकुरों, साहूकारों द्वारा इन्हें जबरन रखेल बनाया जाता है। दोनों स्थितियों में ये नारियाँ पीड़ित एवं दुःखी हैं। इनकी जिंदगी नारकीय है।

3. वेश्या एक समस्या :– एक स्त्री अपने अर्थाजन या किसी कमजोरी के लिए जब अनेक पुरुषों के साथ यौन संबंध बनाए रखती है तो वह 'वेश्या' कहलाती है। आदिवासियों की कई जातियों में परंपरागत वेश्या व्यवसाय चलता आया है। इनमें नट, करनट, कबूतरा आदि जाति के नारियाँ शामिल हैं। इन जाति की नारियों का वेश्या व्यवसाय आमदनी का साधन भी है।

हिंदी उपन्यासकारों ने आदिवासी नारी की इन वेश्यावृत्तियों को रेखाकिंत किया है। वह परंपरा से ज्यादा गरीबी, अभाव एवं मजबूरी के कारण वेश्या बन जाती है। शरीर का इस्तेमाल पेट की आग बूझाने, पति को पुलिस के चंगुल से छुड़ाने के लिए यह महिलाएँ वेश्या व्यवसाय करती हैं। संजीव ने 'धार' में संथाल आदिवासी नारी लुहिया की पीड़ा को इन शब्दों में किया है– पेट का ये गड्ढा भरने का खातिर का नहीं किया

दीदी। हुई रोग हो गया। अब कोई पानी तक देनेवाला नहीं। का जाने अभी का–का दुरगति लिखा है।''13 तुरिया चकला घर तो पेट की आग बुझाने के लिए चली जाती है लेकिन वहाँ से रोग ले कर आती है। अनेक संथाल लड़किया अब वेश्या बनती जा रही है। कुछ धन के लिए तो कुछ भूख मिटाने के लिए लेकिन इनमें से अनेक लड़किया रोगग्रस्त होती दिखाई देती है। 'नीलोफर' में भी ट्रक डाइवरों के साथ लड़कियाँ शहर आती है वेश्या धंधे को स्वीकारती है। आज ज्यादातर महानगरों में पाई जानेवाली वेश्याएँ आदिवासी नारियाँ हैं। इसका मूल कारण उनकी अभावग्रस्त जिंदगी। एक ओर वे दीकूओं, साहूकारों, ठाकुरों से शोषित हें और शहरों में दलालों से बेची गई हैं। अपनी विवशता के कारण उन्हें यह गंदा काम करना पड़ रहा है। दूसरी ओर वे जंगलों के सभी स्त्रोत खतम हो गए है, गाँव का कोई भी कार्य जैसे नौकरी, घर की सफाई, खेती आदि इनको नहीं आता। परिणामस्वरूप विवशता से इनको अपना शरीर बेचना पड़ रहा है लेकिन एक नई गंभीर समस्या निर्माण हो गई है वह है गुप्त रोगों की। एड्स जैसी महाबीमारी आदिवासियों को खतरे में डाल रही है। इन जातियों में यौन संबंधों में कड़े नियम न होने के कारण यह बीमारी कबीलों के पुरुषों एवं अन्य नारियों में भी फैल रही है, जिससे पूरा का पूरा कबीला खत्म होने की कगार पर पहुंच गया है।

4. स्वास्थ्य की समस्या :– आदिवासी समाज की तरह ही आदिवासी नारी की भी भूख बहुत बड़ी समस्या है। आदिवासी नारियों को अच्छा खाना नहीं मिलता। वैसे भी समय का खाना न मिलने वाले लोगों को क्या अच्छा और क्या बूरा सब समान होता है। खाने के अभाव के कारण ज्यादातर आदिवासी नारियाँ कुपोषित दिखाई देती है। जिसका उनके स्वास्थ पर गंभीर परिणाम हुआ है। रोजी–रोटी की समस्या इतनी गंभीर है कि जब यह गर्भवती होती है तब प्रसव की दिनों में भी इन्हें कोयला खदानों में, जंगलों, पत्थर क्रेशरों, खेतों में खटना पड़ता है वरना पेट कहाँ से भरेगा? प्रसव के बाद भी यह दो–तीन दिनों के बाद वे काम पर चली जाती है। इस संदर्भ में रमणिका गुप्ता का सीता उपन्यास में नारी की दशा का चित्रण – ''सीता की माँ तो तीसरे दिन ही उसे पीट पर बांध कर सड़क पर खटने चली गई थी। कौन खिलाता अगर वह नहीं खटती? दिन में खटा रात में खाया। दिन में काम नहीं मिला तो रात में उपासे रहे। अगले दिन बिन खाए काम पर जाए।''14 आदिवासी नारी की सबसे बड़ी समस्या भूख एवं शोषण है। सु–राज की कंचनिया, नीलोफर की जुग्गी, इदन्नमम् की तुलसिन तथा अन्य राउतने भूख से बेहाल दिखाई देती है। यह आदिवासी नारियाँ कई दिनों तक पानी पीकर समय बीताती है। जंगल में जो कुछ मिलता उसे खा जाती है। फिर भी पेट नहीं भरता।

आदिवासी नारी की स्वास्थ संबंधी समस्या गंभीर है। आदिवासी इलाके में स्वास्थ्य की सुविधा न होने के कारण प्रसव के समय अनेक नारियों की मृत्यू हो जाती है। 'नीलोफर' उपन्यास में नथनी की माँ के प्रसव के बाद उसपर जटी–बुटियाँ का इलाज कराया जाता है। लेकिन उसकी मृत्यु हो जाती है। कृष्णा अग्निहोत्री के मत के अनुसार – ''बुढ़ा उठा और बच्चे को बगल के झोपड़े में दे दिया। बहू की अर्ध नग्न लाश को बुढ़ा कंधे पर लटकाए ढलाव के नीचे ढुलक गया...। जैसे तैसे गड्ढ़ा बनाकर लाश गाढ़ दी।15 उसी तरह जुग्गी के प्रसव के बाद उसे न खाने को मिलता है न पीने के लिए। प्रसव के समय उसे आसरा भी नसीब नहीं है। पति झिंगूर ही उसका प्रसव कराता है और बच्चे की नाल पत्थर से काटता है। वेश्यावृत्ति तथा बलात्कार के कारण आदिवासी नारियाँ अनेक बीमारियों का शिकार बनती जा रही है। 'धार' की तुरिया तथा अन्य औरतें तड़पकर मर जाती है। तो कभी कभी ठेकेदार जगसेर द्वारा बलात्कार होने पर तुलसिन की पंद्रह साल की बेटी अहिल्या गुप्त बीमारी का शिकार हो जाती है। तुलसिन बेटी की दवाइयों के लिए जगसेर से बिनती करती है, ''तुम पहाड़ियाँ बेच रहे हो ठेकेदार! अहिल्या बहुत बीमार है। डाकधर को दिखाई, भराई है, पैसा लगा रहे हैं, गुंजारिश भर।''16 अहिल्या इस बीमारी के कारण मर जाती है।

5. भूख और बेरोजगारी या रोजी–रोटी की समस्या :– मानव की सबसे पहले प्राथमिकता रहती हैं कि वह दो वक्त के खाने को प्राप्त कर सके। आदिवासियों तो यही भूख मिटाने के लिए कड़े प्रयास करने पड़ते हैं। वे फल, फूल, शिकार और कृषि से उत्पाद धान से अपनी भूख मिटाते हैं। वनों का विनाश, प्रकृतिक स्त्रोंत का नष्ट होना, प्रदूषण, शिकार पर रोक आदि अनेक कारणों से खाना प्राप्त करने के लिए भटकना पड़ता हैं। भूख के साथ–साथ बेरोजगारी भी आदिवासियों की महत्त्वपूर्ण समस्या हैं। रोजगार मिलता भी हैं तो उसके सही बेगार नहीं मिलती हैं। यह साहूकार, जमींदार, ठेकेदार, किसान, ईटभट्टी वाले उनसे काम तो कराते हैं लेकिन सही–सही दाम नहीं देते। बेगारी तो दूर हक मॉगने पर पीटते हैं। बेरोजगारी के संदर्भ में राम अहुजा का दृष्टिकोन हैं, ''एक बेरोजगार व्यक्ति वह हैं जिसमें कमाने की अन्तर्निहित क्षमता और

इच्छा दोनों हैं फिर भी उसे वैधानिक काम नहीं मिल पाता।''17 आदिवासियों में बेरोजगारी के कारण अलग–अलग हैं। हमने उनके प्राकृतिक स्त्रोतों को नष्ट कर दिया हैं। मजदूरी माँगने पर निकाल दिया जाता हैं। अकाल, बाढ़ आदि प्राकृतिक आपदाएँ समस्याओं को और बढ़ाती हैं।

सुरेशचंद्र श्रीवास्तव ने 'वनतरी' उपन्यास में तो 'परहियों के भूख' से बेहाल होते जीवन, एक जून रोटी के लिए तड़पते लोगों का वर्णन किया हैं। अकाल, बाढ़, आदमखोर जानवर इनके जीवन को हर समय आंतकित रखते हैं। यहाँ खाने के लिए अनाज नहीं हैं। लोग भूख से बेहाल होकर 'चकौड़' की पत्तियाँ उबालकर खाते हैं। लेखक ने उनकी दयनीय अवस्था का चित्रण इन शब्दों में किया हैं, ''एक तो निर्धनता का जीता–जागता उदाहरण वाला इलाका भूखमरी और रोगों से मरते लोग उपर से हर साल दैवी प्रकोप 'चकौड़' की पत्ती खा–खाकर लोग मरने लागे। ऐसी ही एक भयानक बरसाती रात में जब पूरा गाँव अपना पेट भरने के लिए सरई उबाल रहा था, सकुल डामरिया का शिकार हो गया।''18 चकौड की पत्ती उबाल के साग के साथ खाते हैं। परिणामस्वरूप बदहजमी से वनतरी के भाई सकुल की मौत हो जाती हैं। सकुल छटपटाहट दर्दनाक मौत का शिकार होता हैं।

6. बालविवाह और अनेमल विवाह की समस्या :– जनजातियों में सामान्य रुप से विवाह की उम्र तय नहीं हैं लेकिन जो जनजातियाँ हिंदू धर्म के निकट संपर्क में आई है उनमें विवाह की आयु कम हो गई है। आदिवासी गरीब होते हैं। अभावग्रस्त जीवन उन्हें दर दर की ठोकरें खाने के लिए मजबूर करता हैं। आदिवासियों में संतती नियमन का कोई उपाय नहीं है। अज्ञान या अशिक्षा और बढ़ते बालमृत्यु के प्रमाण के कारण इन्हे चार पाँच संतानें भी होती है। तो कुछ आदिवासी जनजातियों में मुक्त यौनाचार से अवैध मातृत्व के डर से बालविवाह की परंपरा दिखाई देती है।

'कगार की आग' उपन्यास में गोमती का विवाह 12–13 साल की आयु में ही किया था। जल्द ही पति की मृत्यु हो जाती है। वह बालविधवा बन जाती है। वह दूसरा विवाह करती है लेकिन उसके नसीब में सुख नहीं। बारह बरस की उम्र में वह पहली बार ससुराल गई थी। उसके दूध के दाँत भी टूटे नहीं थे। दिन दुनिया की कुछ भी खबर नहीं थी। विवाह क्या होता है कैसे और क्यों होता है उसे पता भी नहीं था। छोटी सी उम्र में ही उसके पति ने भावज के साथ मिलकर उस पर बलात्कार किया था। लेखक के शब्दों में, ''उसका हाथ पकड़कर वह अंधकार में ही उसे अपने बिछौने ले गया। पति–पत्नी के संबंध क्या होते है, उस अबोध को क्या पता? पति प्रेम की सीमा कुछ और बढ़ी नन्हीं गोमती घबराकर पसीने–पसीने हो गयी। पीड़ा असहय होते ही जोर से चीखी ज्यों–ज्यों पति पाश्विक बल का प्रदर्शन करता चला गया उसकी चीखे बढ़ती चली गयी।''19 बाल विवाह के कारण उस कम आयु का शरीर अभी भी शारीरिक संबंधों के लिए तैयार नहीं था फिर भी भावज उसका हाथ पैर पकड़ती है और पति बलात्कार करता है। असहय पीड़ा से उसका सारा शरीर सूखे पत्ते की तरह काँप रहा था। इस अनमेल विवाह के परिणामस्वरुप गोमती को अहसय पीड़ा सहनी पड़ती है। बाद में उसका अधेड़ उम्र पति मर जाता है परिणामस्वरुप विधवा गोमती का विवाह एक पागल व्यक्ति पिरमा के साथ किया जाता है।

निष्कर्ष :– आदिवासी नारी अनेक समस्याओं से पीड़ित दिखाई देती है। भूख, बेरोजगारी, निरक्षरता और अंधविश्वास उसके जीवन को खोखला बना रहे हैं तो दूसरी ओर पुलिस, ठाकुर, साहूकार, जमींदार, वन–अधिकारी आदि द्वारा होने वाला उसके जीवन को अंतहीन यातना देता है। सभ्य समाज सिर्फ एक भोग की वस्तु समझता है। बलात्कार, रखैल बनना स्वास्थ की दुरावस्था भी आदिवासी नारियों को शक्तिहीन बना रहा है। प्रस्तुत हिंदी उपन्यासों में आदिवासी नारी सड़क से संसद तक का रास्ता तय करते हुए दिखाई देती है। 'कगार की आग' में गोमती जो शोषित होकर दर–दर की ठोकरें खाती दिखाई देती है। तो दूसरी ओर 'अल्मा कबूतरी' की अल्मा सभी प्रकार की सीढ़ियों को पार कर विधायक का चुनाव जीतती है। यह फासला तय करते हुए उन्हें अनंत यातनाओं का सामना करना पड़ता है लेकिन आदिम जीवन का साहस, शौर्य एवं विद्रोह और संघर्ष की जीजिविषा उसे यहाँ तक पहुंचने में मदत करती है। यहाँ स्पष्ट है हिंदी रचनाकारों ने उत्तरशती के उपन्यासों में आदिम समाज व्यवस्था में नारी जीवन का यथार्थ चित्रण किया है।

संदर्भ :–

1. सचेंद्रकुमार, वर्तमान समय में आदिवासी महिलाओं का जनजीवन (लेख), संपा, गीता वर्मा, वर्तमान समय में आदिवासी समाज, (वाड़मय बुक्स, अलिगढ़, सं. 2012) पृ. 86
2. राय गोपाल, बीसवीं सदी के अंतिम दशक में हिंदी उपन्यास (लेख), अक्षरा, संपा. गोविंद मिश्र,

(राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, भोपाल, मार्च–अप्रैल, 2003) पृ. 21
3. मिश्र भगवतीशरण, हिंदी के चर्चित उपन्यास, (राजपाल एंड संस, दिल्ली, सं. 2010) पृ. 272
4. जोशी हिमांशु, कगार की आग, (भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, सातवां सं. 2006) पृ, 37
5. जोशी हिमांशु, सु–राज, (भारतीय प्रकाशन संस्थान, नई दिल्ली, सं, 2004) पृ, 37
6. अग्निहोत्री कृष्णा, नीलोफर, (नेशनल पब्लिशिंग हाऊस, नई दिल्ली, सं. 1988) पृ. 117
7. सिंह विजय बहादूर, उपन्यास समय और संवदेना, (वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, सं. 2007) पृ. 78
8. पुष्पा मैत्रेयी, इदन्नमम्, (किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली, सातवां सं. 2010) पृ. 241
9. मादार संजय एल., कथा साहित्य की सामाजिक भूमिका, (तक्षशिला प्रकाशन, नई दिल्ली, सं. 2016) पृ. 231
10. गुप्ता रमणिका, सीता, (ज्योतिलोक प्रकाशन, दिल्ली, सं. 2010) पृ. 41
11. सिंह राकेश कुमार, नारी चेतना की महागाथा (लेख), वागर्थ, संपा. प्रभाकर क्षेत्रिय, (भारतीय भाषा परिषद, कोलकाता, दिसं. 2000) पृ, 106
12. गुप्ता रमणिका, सीता, (ज्योतिलोक प्रकाशन, दिल्ली, सं. 2010) पृ. 40
13. संजीव, धार, (राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, सं. 1990) पृ. 143
14. गुप्ता रमणिका, सीता, (ज्योतिलोक प्रकाशन, दिल्ली, सं. 2010) पृ. 57
15. अग्निहोत्री कृष्णा, नीलोफर, (नेशनल पब्लिशिंग हाऊस, नई दिल्ली, सं. 1988) पृ. 54
16. पुष्पा मैत्रेयी, इदन्नमम्, (किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली, सातवां सं. 2010) पृ. 241
17. अहुजा राम, सामाजिक समस्याएँ, (रावत पब्लिकेशन, जयपुर, सं. 1998) पृ.70
18. श्रीवास्तव सुरेशचंद्र, वनतरी, (वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, सं. 1986) पृ. 72–73
19. जोशी हिमांशु, कगार की आग, (भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, साँतवा सं. 2006) पृ. 79

Swadeshi Research Foundation A Monthly Journal of Multidisciplinary Research
International Peer Reviewed, Refereed, Indexing & Impact Factor - 5.2, Ex- UGC S.N. 4990
ISSN : 2394-3580, Vol. – 9, No. – 3, Jan. – 2022, Conference Special Issues
2022

शिक्षक शिक्षा में आई.सी.टी. की भूमिका : राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के संदर्भ में

Ashok Kumar Sharma
Assistant Professor, MIET, Meerut
Mayank Verma
Assistant Professor, MIET, Meerut

सारांश :– आई.सी.टी. निरंतर उन्नत हो रही तकनीको का समुच्चय है, जिसके कारण सूचना–संचार और संवाद की प्रक्रिया में क्रांतिकारी परिवर्तन आया है। इस क्रांति से शिक्षा जगत भी अछूता नही है। इस नई तकनीकी ने जहॉ एक ओर शिक्षक के कक्षा संवाद को विस्तार दिया है, वही दूसरी ओर छात्रों को स्व–अध्ययन के अवसरो को बढ़ावा मिला है। एक बेहतर शिक्षक बनने में सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी शिक्षक को आनंदायी सुविधायें एवं सहयोग प्रदान करती है।

- राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में आई.सी.टी. आधारित डिजिटल शिक्षा के प्रावधान हेतु एक स्वायत निकाय के रूप में राष्ट्रीय शैक्षिक प्रौद्योगिकी मचं (एन.ई.टी.एफ.) का गठन किया जाएगा, जिसके द्वारा शिक्षण, मूल्यांकन, योजना एंव प्रशासन में अभिवृद्धि हेतु विचारो का आदान–प्रदान किया जा सकेगा।
- डिजिटल शिक्षा संसाधनो को विकसित करने के लिए अलग प्रौद्योगिकी इकाई का विकास किया जाएगा जो डिजिटल बुनियादी ढॉचें सामग्री ओर क्षमता निर्माण हेतू समन्यवन का कार्य करेगी। मेरे द्वारा प्रस्तुत इस शोध पत्र के माध्यम से राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 द्वारा शिक्षक, शिक्षा में आई.सी. टी. को लागू करने के प्रमुख प्रावधान, शिक्षक, शिक्षा में आई.सी.टी. के उपयोग, चुनौतियॉ और आई.सी.टी. के प्रयोग को बेहतर बनाने के लिए सुझाव प्रस्तुत किये गये है।

शब्दकुंजी :– आई.सी.टी., शिक्षक शिक्षा, राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020

प्रस्तावना :– वर्तमान परिदृश्य में मानव जीवन का शायद ही कोई पक्ष या क्षेत्र हो, जो आई. सी. टी. के हस्तक्षेप से वंचित हो, संसार में हो रही नित्य नवीन वैज्ञानिक खोजों तथा आविष्कारों ने मानव जीवन में तकनीकी का वह मानदंड स्थापित कर दिया है कि इसके अभाव की कल्पना मात्र से जीवन में पंगुता सी लगने लगती हैं, यदि हम अपने जीवन मे काम आने वाली तकनीकियो से अनभिज्ञ रहेगे, तो हम प्रगति के मापदंडो में पिछड जायेगें, पिछले कुछ दशको में हुए तकनीकी विकास ने हमारे जीवन को पूरी तरह से बदल दिया है। शिक्षा का क्षेत्र भी इसके प्रभाव से मुक्त नही रह सका है। शिक्षा के प्रत्येक स्तर व पक्ष को तकनीकी विकास ने प्रभावित किया है। शिक्षा के उद्देश्य, शिक्षण विधियॉ और प्रविधियो, शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया, मूल्यांकन प्रक्रिया, शोध प्रक्रिया आदि सभी क्षेत्रो एवं प्राथमिक शिक्षा से लेकर उच्च शिक्षा और अध्यापक शिक्षा का कोई भी ऐसा क्षेत्र नही है, जहॉ आई.सी.टी. के ज्ञान का होना आवश्यक न हो। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020, 21वीं शताब्दी की पहली नीति है जिसका लक्ष्य हमारे देश के विकास के लिए अनिवार्य आवश्यकताओ को पूरा करना है। यह नीति भारत की परम्परा और सांस्कृतिक मूल्यों के आधार को बरकरार रखते हुए, 21वीं सदी की शिक्षा के लिए आकांक्षात्मक लक्ष्यों, जिनमें एस डी जी 4 शामिल है, के संयोजन में शिक्षा व्यवस्था उसके नियमन और गवर्नेस सहित, सभी पक्षो के सुधार और पुर्नगठन का प्रस्ताव रखती है। यह नीति इस सिद्धान्त पर आधारित है कि शिक्षा से न केवल साक्षरता और संख्या ज्ञान जैसी बुनियादी क्षमताओं के साथ–साथ उच्चतर स्तर की तार्किक और समस्या–समाधान संबंधी क्षमताओं का विकास होना चाहिए बल्कि नैतिक, सामाजिक और भावनात्मक स्तर पर भी व्यक्ति का विकास होना चाहिए।

शिक्षा व्यवस्था में किये जा रहे बुनियादी बदलावों के केन्द्र में अवश्य ही शिक्षक होने चाहिए। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में शिक्षकों को समाज के सर्वाधिक सम्माननीय और अनिवार्य सदस्य के रूप स्थान देने के लिए आवश्यक प्रावधान किये गये है। शिक्षक ही हमारी अगली पीढ़ी को सही मायने में आकार देते हैं। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 द्वारा शिक्षको को सक्षम बनाने के लिए हर सम्भव कदम उठाये जाने की आवश्यकता पर बल दिया गया है। संक्रामक रोगो और वैश्विक महामारियों में हाल ही में वृद्धि को देखते हुए यह जरूरी हो गया है कि जब भी ओर जहॉ भी शिक्षा के पारंपरिक और विशेष साधन संभव न हो वहॉ आई.सी.टी. आधारित साधनो की आवश्यकता पर

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 बल देती है।

अध्ययन के उद्देश्य :–

1. सामान्य शिक्षा के क्षेत्र में राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में आई.सी.टी. की मुख्य भूमिका।
2. शिक्षक शिक्षा के क्षेत्र में राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में आई.सी.टी. की मुख्य भूमिका।

प्रविधि – अध्ययन में द्वितीय समंको का प्रयोग किया गया है। अध्ययन सामग्री विभिन्न शोध जर्नल, इंटरनेट, आई.सी.टी. पुस्तको पर आधारित, मानव संसाधन विकास मंत्रालय (शिक्षा मंत्रालय) द्वारा जारी राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 से एकत्रित की गयी है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में अध्यापक शिक्षण :– एन.सी.ई.आर.टी. के परामर्श से एन.सी.टी.ई. के द्वारा अध्यापक शिक्षण के लिए एक नया और व्यापक राष्ट्रीय पाठ्यक्रम ढांचा एन.सीएफ.टी.ई. 2021 तैयार किया जायेगा। वर्ष 2030 तक, शिक्षण कार्य करने के लिए कम से कम योग्यता 4 वर्षीय इंटीग्रेटेड बी,एड, डिग्री हो जाएगी। गुणवत्ता विहिन स्वचालित अध्यापक शिक्षण संस्थान टी ई ओ के खिलाफ सख्त कार्यवाही की जायेगी।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 द्वारा उच्च शिक्षा के शिक्षकों के लिए परामर्श मिशन :– एक राष्ट्रीय सलाह मिशन की स्थापना की जाएगी, जिसमें उत्कृष्टता वाले वरिष्ठ/सेवानिवृत्त संकाय का एक बड़ा पूल होगा– जिसमें भारतीय भाषाओं में पढ़ाने की क्षमता वाले शिक्षक शामिल होंगे– जो कि विश्व विद्यालय/कॉलेज के शिक्षको को लघु और दीर्घ कालिक परामर्श/व्यावसायिक सहायता प्रदान करने के लिए तैयार करेगे।

आई.सी.टी. आधारित ऑन लाईन शिक्षा और डिजिटल शिक्षा :– हाल ही मे महामारी और वैश्विक महामारी के वृद्धि होने के परिणाम स्वरूप ऑन लाइन शिक्षा को बढ़ावा देने के लिए राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में सिफारिशों के एक व्यापक सेट को कवर किया गया है, जिससे जब कभी और जहॉ भी पारपंरिक और व्यक्तिगत शिक्षा प्राप्त करने का साधन उपलब्ध होना संभव नही है, गुणवर्ता पूर्ण शिक्षा के वैकल्पिक साधनों की तैयारियों को सुनिश्चित करने के लिए, स्कूल और उच्च शिक्षा दोनो को ई–शिक्षा की जरूरतों को पूरा करने के लिए एम.एच.आर.डी. में डिजिटल अवसंरचना, डिजिटल कंटेंट और क्षमता निर्माण के उद्देश्य से एक समर्पित इकाई बनाई जाएगी, जिसका काफी लाभ शिक्षको को अपने शिक्षण में मिलेगा।

शिक्षा में प्रौद्योगिकी :– सीखाने, मूल्यांकन करने, योजना बनाने, प्रशासन को बढ़ावा देने के लिए, प्रौद्योगिकी का उपयोग करने पर विचारों का मुक्त आदान प्रदान करने हेतु एक मंच प्रदान करने के लिए एक स्वायत निकाय, राष्ट्रीय शैक्षिक प्रौद्योगिकी मंच (एन.ई.टी.एफ.) का निर्माण किया जायेगा। शिक्षा के सभी स्तरो में, प्रौद्योगिकी का सही रूप से एकीकरण करके, उसका उपयोग कक्षा प्रक्रियाओं में सुधार लाने, पेशेवर शिक्षको के विकास को समर्थन प्रदान करने, वंचित समूहों को लिए शैक्षिक पहुॅच बढ़ाने और शैक्षिक योजना, प्रशासन और प्रबन्धन को कारगर बनाने के लिए किया जायेगा।

शिक्षक शिक्षा में आई सी टी के लाभ :–

- शिक्षण मे, सीखाने में, मूल्यांकन में आई सी टी का उपयोग शिक्षक के लिए बहुत ही लाभप्रद होगा।
- शिक्षक को विभिन्न साफ्टवेयर व डिजिटल संसाधन से काम करने की आदत पड़ेगी।
- महामारी व वैश्विक महामारी तथा विषम परिस्थिति के समय शिक्षक के लिए बहुत ही लाभप्रद होगी।
- अधिगम को सहज बनाने में काफी हद तक मदद करेगी।
- शिक्षक शिक्षा संस्थानो से आई.सी.टी. के प्रयोग से अच्छे शिक्षक तैयार होगे।
- सूचनाओं की त्वरित प्राप्ति होगी। शिक्षक शिक्षा में आई.सी.टी. के लिए चुनौतियां
- कम्प्यूटर साक्षरता कम होना।
- शिक्षको को प्रयोग करना न आना।
- आई.सी.टी. का गॉवो तक न पहुॅच पाना।
- कमजोर नटे वर्क व इंटरनेट स्पीड।
- राज्य सरकारों व अन्य सम्बन्धी विभागो का उत्साही न होना।
- कक्षा शिक्षण में आई सी टी का अच्छी तरह उपयोग न करना।
- शिक्षक शिक्षा संस्थानो में समुचित संसाधनो का अभाव होना।
- वित्तपोषण की समस्या।

- आई. सी. टी. आधारित मॅहगी शिक्षा का होना।

शिक्षक शिक्षा में आई सी टी के लिए सुझाव

- शिक्षक शिक्षा संस्थानो में आई.सी.टी. के उपयोग को अनिवार्य किया जाये।
- शिक्षक प्रशिक्षण मे आई.सी.टी. आधारित पाठयक्रम को बढ़ाया जाये।
- राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में आई.सी.टी. आधारित किये गये प्रावधानो को अनिवार्य रूप से लागू किया जाये।
- आई.सी.टी. का प्रयोग केवल कागजो तक ही सीमित न रहे उसे हकीकत में भी धरातल पर उतारा जाये।
- आई.सी.टी. के विकास हेतु सरकारो द्वारा वित्त पोषण की समुचित व्यवस्था की जाये।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

- डॉ. जी.एस. वर्मा (2008) : शिक्षण तकनीकी पेज 330–331
- आई.सी.टी. की आलोचनात्मक समझ एवं उपयोगः शिक्षक शिक्षा विभाग उत्तराखंड मुक्त विश्व विद्यालय, हल्द्वानी (ISBN: 13.978.93.85740.79.4) पेज 95–97
- शैक्षिक तकनीकी (2017) : राज्य शैक्षिक अनुसंधान ओर प्रशिक्षण परिषद छत्तीसगढ, रायपुर पेज 48–51
- www.education. gov.in., राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020ः मानव संसाधन विकास मंत्रालय भारत सरकार
- www : drishtiias.com., नई शिक्षा नीति, 2020 की मुख्य बाते।

Swadeshi Research Foundation A Monthly Journal of Multidisciplinary Research
International Peer Reviewed, Refereed, Indexing & Impact Factor - 5.2, Ex- UGC S.N. 4990
ISSN : 2394-3580, Vol. – 9, No. – 3, Jan. – 2022, Conference Special Issues
2022

अमृतलाल वेगड़ का साहित्यिक योगदान (यात्रा वृत्तांत के सन्दर्भ में)

डॉ. रीता सोनी
(काव्य सिरोमणि एवं अंतर्राष्ट्रीय नारी सम्मान से सम्मानित)
इन्दौर इंस्टीट्यूट ऑफ साइंस एण्ड टैक्नोलॉजी, विजिटिंग प्रोफेसर, इन्दौर

सारांश :– नर्मदा नदी की चार हजार किलोमीटर पदयात्रा करने वाले अमृत लाल बेगड़ ने हमें नर्मदा के अंचल में फैली विविध प्राकृतिक सौन्दर्य से परिचित करवाया है। उनके लेखन व कला का विषय नर्मदा ही रही है इस हेतु नर्मदा संरक्षण में उल्लेखनीय भूमिका निभाई है। उन्होंने सन् 1977 में 47 वर्ष की अवस्था में नर्मदा परिक्रमा प्रारंभ की, जो 2009 तक निरन्तर जारी रही। 'नर्मदा' नदी के सन्दर्भ में उन्होंने तीन यात्रावृतांत लिखे हैं– **'सौंदर्य की नदी नर्मदा', 'अमृतस्य नर्मदा', 'तीरे–तीरे नर्मदा'** इन यात्रावृतांतों में उन्होंने नर्मदा के उजले जल प्रवाह एवं उसकी स्फूर्ति को दिखलाया है। **'मेरे सहयात्री'** यात्रावृतांत में एक स्थान पर उनका एक वक्तत्व है कि "नर्मदा सौन्दर्य के घेरे से मैं बाहर निकलना ही नहीं चाहता बार–बार वहीं जाना चाहता हूँ– जहाज की पंछी की तरह।" ऐसे शब्दों को पिरोकर उन्होंने नर्मदा के सौंदर्य को पाठक के समक्ष लाकर रख दिया है। उनके यात्रावृत्तांत इतने सजीव जान पड़ते हैं कि जैसे– यात्रा वे स्वयं ही नहीं बल्कि हम भी उनके साथ यात्रा में शामिल हैं। अमृत लाल वेगड़ ने अपने अंतिम श्वांस तक नर्मदा के हर सौन्दर्य को सहेजने व संवारने का प्रयास किया है।

प्रस्तावना :– अमृतलाल वेगड़ गुजराती एवं हिन्दी भाषा के प्रसिद्ध साहित्यकार के साथ–साथ जाने माने चित्रकार भी थे। उन्होंने पर्यावरण संरक्षण के लिए उल्लेखनीय योगदान दिया। वे ऐसी शख्यित थे जिसने नर्मदा यात्रा के अपने जुनून को नदी की निर्मल धारा की भाँति शब्दों में पिरोकर साहित्य पाठकों को नदी से प्रेम करना सिखा दिया। अमृत लाल वेगड़ ने अपनी अन्तिम श्वास तक अर्थात् 90 वर्ष की अवस्था तक नर्मदा के प्रत्येक कण को समझने, सहेजने और संवारने का प्रयास किया है। उन्होंने नर्मदा के हर भाव और अनुभव को अपने साहित्य और चित्रों में उभारा है।

"मेरे लेखन और कला का केवल एक ही विषय रहा है और वह है नर्मदा। यहाँ तक कि मेरा व्याख्यान भी नर्मदा विषय पर ही केन्द्रित रहता है।"[1] उन्होंने गुजराती में सात व हिन्दी में तीन किताबें लिखी है– 'सौन्दर्य की नदी नर्मदा', 'अमृतस्य नर्मदा', 'तीरे–तीरे नर्मदा' इन पुस्तकों के पांच भाषाओं में तीन–तीन संस्करण निकाले गए। कुछ का विदेशी भाषा में अनुवाद हो चुका है। 'सौन्दर्य की नदी नर्मदा' उनकी सबसे प्रसिद्ध पुस्तक है जिसके अब तक आठ संस्करण प्रकाशित हो चुके हैं। इसके अतिरिक्त उनकी चौथी पुस्तक 'नर्मदा तुम कितनी सुन्दर हो' पुस्तक भी प्रकाशित हुई है।

यात्रावृत्तांत– 'सौन्दर्य की नदी नर्मदा' :– प्रस्तुत यात्रावृत्तान्त में नर्मदा सौन्दर्य का विस्तृत विवेचन किया है महात्मा गांधी के समान आन्दोलन करने वाले अमृतलाल वेगड़ ने जीवनदायिनी नर्मदा के सुन्दर रूप का बखान किया है, अनगिनत स्केच बनाकर 'नर्मदा के सौन्दर्य' को वास्तविक रूप में पाठक के समक्ष लाकर रख दिया है। साथ ही आगाह भी किया है कि "याद रखो, पानी की हर बूंद एक चमत्कार है। हवा के बाद पानी ही मनुष्य की सबसे बड़ी आवश्यकता है किन्तु पानी दिन पर दिन दुर्लभ होता जा रहा है, नदियाँ सूख रही हैं, उपजाऊ जमीन ढूहों में बदल रही है, आए दिन अकाल पड़ रहे हैं। मुझे खेद है, यह सब मनुष्यों के अविवेकपूर्ण व्यवहार के कारण हो रहा है। अभी भी समय है, विनाश बन्द करो, बादलों को बरसने दो, नदियों को स्वच्छ रहने दो। केवल मेरे प्रति ही नहीं, समस्त प्रकृति के प्रति प्यार और निष्ठा की भावना रखो।"[2] वेगड़ जी इस बात से मनुष्य को वर्तमान के साथ–साथ भविष्य के खतरे से भी आगाह करते हैं।

नर्मदा नदी अमरकंटक से पश्चिम की तरफ जबकि सोन नदी पूर्व दिशा में बहती है जिसे देखकर मन मंत्रमुग्ध हो जाता है। प्रकृति की सुन्दरता की दृष्टि से अमरकंटक को खास वरदान प्राप्त है तथा नर्मदा नदी प्रत्येक ऋषि–मुनि व प्रत्येक कण में अमृत समान विद्यमान है "नर्मदा तट के छोटे से छोटे तृण और छोटे से छोटे कण न जाने कितने पर व्राजकों, ऋषिमुनियों और साधु संतो की पदधुलि से पावन हुए होंगे। यहाँ के वनों में अनगिनत ऋषियों के आलय रहे होंगे।"[3] यह सब नर्मदा नदी की पवित्रता के कारण ही हुआ है।

अमृतस्य नर्मदा :– 'अमृतस्य नर्मदा' यात्रा वृत्तांत में प्रकृति की नैसर्गिक सत्ता को बड़ी आत्मीयता और श्रद्धा से देखा था नर्मदा की परिक्रमा करते समय उन्होंने

अपने भीतर अटल पवित्रता का स्पर्श पा लिया था। इस यात्रा का प्रारम्भ उन्होंने 69 वर्ष की अवस्था में किया, बरमाघाट से लेकर भेड़ाघाट की यात्रा का वर्णन इस यात्रा वृत्तांत में है।

मनुष्य द्वारा जिस प्रकृति के सौन्दर्य को नष्ट किया जाता है, उसमें वही वृद्धि भी करता है सरदार सरोवर के कारण नर्मदा की सुन्दरता और भी अधिक बढ़ गई है। "बरसात का पानी एक जगह आबद्ध होकर न रह जाए, अबाध गति से बहता रहे इसके लिए नदियाँ जरूरी है और नदियों का प्रवाह रक्त के प्रवाह की तरह सदा एक–सा बहता रहे, इसके लिए बाँध जरूरी है। इतने वर्षों से नर्मदा अनिरूद्ध थी और सरदार सरोवर बाँध बन जाने से अब वह आसानी से अवरूद्ध होगी। अर्थात् बाँध नर्मदा कमाऊ पुत्र बन गए हैं।"[4]

'अमृतस्य नर्मदा' यात्रा वृत्तांत वेगड़ जी द्वारा प्रदत्त अमूल्य निधि है यह प्रपात के अनुपम सौन्दर्य का बखान तो है ही और स्वयं सौन्दर्य को उज्जवल दृष्टि भी प्रदान करती है। नर्मदा के कगारों, उत्तल तरंगो, बीहड़ मोड़ो और पहाड़ी परिवेश व एक समूची रासलीला का अमृत रस वेगड़ जी को बार–बार नर्मदा की ओर खींच ले जाती है। क्योंकि नदी ही विपन्नता को सम्पन्न बनाने में विशेष योगदान देती है।

तीरे–तीरे नर्मदा :– प्रस्तुत यात्रावृत्तांत अमृत लाल वेगड़ जी की सबसे रोमांचक यात्रा रही है क्योंकि यहाँ उनका सपना पूरा हो गया जो उन्होंने नर्मदा परिक्रमा के सन्दर्भ में देखा था, 75 वर्ष में नर्मदा की आलौकिक परिक्रमा का 13 अक्टूबर 2002 जब वे 75 वर्ष पूर्ण कर चुके थे तब फिर से नर्मदा यात्रा प्रारंभ की। कुटरई से लेकर हंडिया तक पैदल चलकर नर्मदा की परिक्रमा पूर्ण की। दोनों तटों को मिलाकर 2624 किमी यात्रा कर नर्मदा पदयात्री के रूप में उनका पुनर्जन्म हुआ। इस यात्रा के दौरान हुए अनुभवों व नर्मदा सौन्दर्य का चित्रण प्रस्तुत यात्रावृत्तांत में हुआ है "कितना रोमांचक होता है नदी के संग–संग चलना। हर स्थान नया, हर भोर नई। इन पदयात्राओं ने मेरे प्रकृति सौंदर्य के कितने बंद दरवाजों को खुलवाया। सोई हुई नदी को, जागते रहते तारों, मंडराते बादलों को निस्तब्ध वनों को, लहराते खेतों को, पशुओं के खुरों की छाप को, पत्तों पर पड़ती ओस कणों की थाप को, मछुआरों की नांव, नदी तट के गांवों को इन सभी को देखकर मैं विस्मय विमुग्ध होता रहता। इससे अधिक आनंदमय और क्या हो सकता है।"[5]

निष्कर्ष :– वस्तुतः माँ नर्मदा के मानस पुत्र नर्मदा परिक्रमावासी अमृतलाल वेगड़ चित्रकार व लेखक दोनों ही रहे हैं। नर्मदा के दौरान हुए अनुभवों को अपने यात्रावृत्तांत में बड़े सहज और भावपूर्ण भाषा शैली में प्रस्तुत किया है, नर्मदा के प्रति उनका प्रेम भाव इतना गहरा है कि उसे कभी विस्मृत नहीं किया जा सकता "नर्मदा मेरी रग–रग से प्रवाहित होती रहती है..... 'सुनिए, मैं नर्मदा तट से आ रहा हूँ। उसके सौन्दर्य का थोड़ा–सा प्रसाद लेकर आया हूँ.... सुन रहे हैं न आप लोग मैं नर्मदा तट का वासी बोल रहा हूँ।"[6] इस प्रकार वेगड़ जी प्रत्येक व्यक्ति के हृदय में प्रकृति प्रेम जगाना चाहते थे।

साथ ही नर्मदा को हमने क्या दिया है, इस तरह के सवाल उठाकर अमृतलाल वेगड़ ने बताया कि नर्मदा को हमारी आवश्यकता नहीं है बल्कि हमें नर्मदा की आवश्यकता है। इस तरह पर्यावरण संरक्षण करना उनके साहित्य का मुख्य उद्देश्य रहा है।

संन्दर्भ सूची :–

1. मेरे लेखन और कला का केवल विषय रहा है नर्मदा : अमृतलाल वेगड़ लेखक–डॉ. मनोज चतुर्वेदी, डॉ. प्रेरणा चतुर्वेदी
2. सौन्दर्य की नदी नर्मदाः अमृतलाल वेगड़, हिन्दी साहित्य ग्रंथ अकादमी भोपाल, पृष्ठ–135
3. सौन्दर्य की नदी नर्मदा (यात्रावृत्तांत) : अमृतलाल वेगड़, हिन्दी साहित्य ग्रंथ अकादमी भोपाल, पृष्ठ–197
4. अमृतस्य नर्मदा (यात्रावृत्तांत) : अमृतलाल वेगड़, हिन्दी साहित्य ग्रंथ अकादमी भोपाल, पृष्ठ संख्या–106
5. तीरे–तीरे नर्मदा : अमृतलाल वेगड़, हिन्दी साहित्य ग्रंथ अकादमी, भोपाल, पृष्ठ–135
6. अमृतलाल वेगड़ : जिसने नदी के लिए जीवन जिया–लेखक मयंक चतुर्वेदी, प्रवक्ता.कॉम अक्टूबर 11, 2021

Swadeshi Research Foundation A Monthly Journal of Multidisciplinary Research
International Peer Reviewed, Refereed, Indexing & Impact Factor - 5.2, Ex- UGC S.N. 4990
ISSN : 2394-3580, Vol. – 9, No. – 3, Jan. – 2022, Conference Special Issues
2022

प्रसाद का स्कन्दगुप्त में नाट्यकला : स्कन्दगुप्त का नाट्य–शिल्प या शैली

डॉ. जितेन्द्र कुमार सिंह
विश्वविद्यालय हिन्दी विभाग, रांची विश्वविद्यालय, रांची (झारखण्ड)
डॉ. नीकू कुमारी
सहायकप्रध्यापिका, आर.टी.सी. बी.एड. कॉलेज, रांची विश्वविद्यालय, रांची (झारखण्ड)

रचना शिल्प की दृष्टि से 'स्कन्दगुप्त' प्रसाद का सर्वोत्तम नाटक कहा जाता है। नाटककार ने अपने इस नाटक में पाश्चात्य और भारतीय नाट्यशास्त्र दोनों के सिद्धानतों का सम्यक् प्रयोग किया है। यदि एक ओर पश्चिम के नाटकों के समान इसमें सक्रियता का प्राधान्य और संघर्ष है तो दूसरी ओर भारतीय परम्परा के रस–सिद्धान्त की भी प्रतिष्ठा की गयी है।

भारतीय नाट्यशास्त्र के अनुसार नाटक में पाँच कार्यावस्थाएँ पायी जाती है और नाटक की कथावस्तु का विभाजन पाँच अंकों में इस प्रकार किया गया है कि वे स्पष्ट पता चल जाती हैं।

प्रथम अंक में सभी प्रमुख पात्रों का परिचय, उनकी मौलिक विशिष्टताओं का निदर्शन, कुलशील का स्पष्ट निर्देश, उनकी मनोवृत्तियों का परिचय मिलता है, उसमें मूल समस्या–गुप्त साम्राज्य की रक्षा और आर्याव्रत के सम्मान की रक्षा का भी उल्लेख है।

इसी अंक में सभी प्रमुख पात्रों का परिचय, उनकी मौलिक विशिष्टताओं का निदर्शन, कुलशील का स्पष्ट निर्देश उनकी मनोवृत्तियों का परिचय मिलता है, इसमें मूल समस्या–गुप्त साम्राज्य की रक्षा और आर्याव्रत के सम्मान की रक्षा का भी उल्लेख है। इसी अंक में नाटक के साह्य अथवा फल का भी परिचय स्पष्ट रूप में मिल जाता है कि इसका साध्य कौटुम्बिक कलह की शांति और राष्ट्र गौरव की रक्षा है। नाटक का नायक नाटक के अंत में इन्हीं दो फलों की प्राप्ति करता है। लेखक ने इस अंक में बड़ी सावधानी से साध्य विषय की विषमाओं एवं प्राप्ति के साधनों का भी आभास दिया है–गुप्त साम्राज्य की गम्भीर स्थिति गृह कलह, सम्राट की कामुकता, स्कन्दगुप्त की उदासीनता, वीरसेन की असामयिक मृत्यु तथाबर्बर हूणों के आक्रमण अनंत देवी–भटार्क का कुचक्र आदि साध्य प्राप्ति के मार्ग में बाधाएँ हैं, तो स्कन्दगुप्त पर इन सबका अनुकूल प्रभाव और इसका उत्साह से मालव ने रक्षा में सन्नद्ध होना साधन है।

अंक की समाप्ति भी बड़े उत्साहवर्धक स्थल पर हुई है, जहाँ उत्कर्ष का एक खंड पूरा हुआ प्रतीत होता है, चरित्र विकास की आंशिक पूर्णता का अभास मिलता है, वह स्थल साधन का सुन्दर पड़ाव प्रमाणित होता है–मालव दुर्ग टूटने को है; शुत्र दुर्ग में प्रवेश करता है तभी स्कन्द के अचानक प्रदेश से शंक और हूण स्तंभित रह जाते हैं और बंदी बनाए जाते हैं। आधिकारिक कथावस्तु की आरम्भावस्था की समाप्ति के साथ–साथ स्कन्दगुप्त के व्यक्तिगत जीवन से सम्बद्ध प्रेम की प्रासंगिक कथावस्तु का आरम्भी भी इसी स्थल से होता है–देवसेना के अतिरिक्त विजया को देख स्कन्दगुप्त उसकी ओर आकृष्ट होता है। आगे चलकर आधिकारिक कथा के विकास के साथ इस प्रासंगिक प्रयाय–कथा का भी उत्कर्षापकर्ष होता है।

प्रयत्न नायक दूसरी कार्यावस्था हमें दूसरे अंक में दिखायी देती है साध्य की प्राप्ति में दो विघ्न हैं–गृह कलह तथा बर्बर हूणों का आक्रमण। इस अंश में इन्हीं दो विघ्नों को दूर करने का प्रयत्न हुआ है।

भारतीय नाट्यशास्त्र के अनुसार तीसरी कार्यावस्था प्राप्त्याशा की स्थापना तृतीय अंग की समाप्ति के साथ होनी चाहिए थी, परन्तु इस नाटक के तीसरे अंक के अंत में प्राप्त्याशा का रूप उपस्थित नहीं होता। इसके विपरीत पाश्चात्य नाट्यशास्त्र के अनुरूप इस अंक के अंत में चरम सीमा का रूप स्फूट और स्पष्ट होता है। प्रधान पात्र स्कन्दगुप्त के लिए आशंका, विरोध और कष्ट अपनी चरम सीमा पर पहुँच जाते हैं।

चौथे अंक में भारतीय नाट्यशास्त्र के अनुसार नियताप्ति नामक चौथी कार्यावस्था होनी चाहिए थी परन्तु 'स्कन्दगुप्त' के चौथे अंक में फल की प्राप्ति नियत निश्चित नहीं दिखाई पड़ती। इसके विपरीत पाश्चात्य नाट्यशास्त्र के अनुरूप इस अंक में निगक्ति नामक कार्यावस्था दिखाई देती है। स्कन्दगुप्त का एकाकी और निःसहाय रूप में बचे रहना, देवकी की मृत्यु, धर्म–संघों का विरूद्ध हो जाना, सामरिक शक्ति का टूट जाना आदि स्थिति निगति का रूप प्रस्तुत करती है।

नाटक के पाँचवें अंक में समष्टि–प्रभाव अथवा प्रमावान्विति की स्थापना बड़ी महत्त्वपूर्ण है। अतः यह

अंक बड़ा सुन्दर और प्रभावशाली है।

कार्य की अवस्थाओं के साथ अर्थ–प्रकृतियों का विनियोग भी स्पष्ट रूप से होता गया है।

पताका अर्थ प्रकृति के दर्शन हमें बंधुवर्मा के प्रसंग में होते हैं क्योंकि इस प्रसंग का अपना कोई भिन्न लक्ष्य नहीं है वह तो फलाहारी के मुख्य कार्य व्यापार में ही सहायक देता है। यह प्रसंग बंधुवर्मा की मृत्यु के साथ गर्म–संधि के बीच में समाप्त होता है।

प्रकरी के रूप में कई छोटे–छोटे वृत्त आए हैं–शर्वनाग, धातुसेन, मातृगुप्त आदि के प्रसंग।

नाट्य–संधियों की योजना भी स्कंदगुप्त नाटक में शास्त्रानुकूल है। मुख्य संधि का आरम्भ इस स्थल से मानना चाहिए जहाँ वर्णदत्त स्कन्द के मुख से मालब–रक्षा का दृढ़ संकल्प सुन सकता है, ''यह वृद्ध हृदय से प्रसन्न हुआ। कोई चिंता नहीं; गुप्त साम्राज्य की लक्ष्मी प्रसन्न होगी।''

मगध में अनन्त देवी, पुरगुप्त, विजया, मटार्क के सम्मिलन से गर्म–संधि का आरम्भ होता है क्योंकि यहीं से कभी आशा बंधती है तो कभी निराशा होती है। यह द्विधा की स्थिति चौथे अंक के दूसरे दृश्य तक चलती है, अतः वहाँ हम गर्म संधि की समाप्ति मान सकते हैं।

चरित्रांकन की दृष्टि से 'स्कन्तगुप्त' नाटक भी प्रसाद के अन्य नाटकों के समान है, उसमें कोई नवीनता नहीं दिखाई पड़तीं इस नाटक में तीन प्रकार के पात्र हैं–शुद्ध मानव, असत् मूर्ति और आदर्श।

भटार्क, अनन्त देवी, प्रपंचबुद्धि और विजया भय, प्रेम, आत्मशोधन उपदेश इतयादि के प्रभाव से अंत में सद्मार्ग पर अग्रसर होते हैं, यथार्थ मानव के रूप में इस नटक के शर्वनाग और जयमाला को लिया जा सकता है जिनमें सद् और असद् का संघर्ष चलता है। वे प्रकृत मानव है अतः विशेष अनुरंजनकारी भी है। देवता पात्रों के उदाहरण हैं–देवसेना, स्कन्दगुप्त, पर्णदत्त और बंधु वर्मा। वे आदर्श होते हुए भी हम से बहुत दूर नहीं है, निकट ही हैं। उनका देवत्व आमस्मिक नहीं, नैमित्तिक है, अतः स्वाभाविक प्रतीत होता है। वे अलौकिक प्राणी नहीं जिन पर हमें विश्वास न हो। उनके अन्तस में चलने वाला द्वन्द्व उन्हें विश्वसनीय बना देता है।

अन्य नाटकों के समान प्रस्तुत नाटक में भी प्रसाद का स्वगत–कथन के प्रति मोह कम नहीं है।

इस नाटक के गीत भी काफी लम्बे और काव्यत्व से पूर्ण है। पाठ्यनाटक के लिए उपयुक्त होते हुए भी दृश्य नाटक की दृष्टि से वे त्रुटिपूर्ण है। कतिपय अन्य दोष भी इस नाटक के शिल्प में देखे जा सकते हैं। सम्पूर्ण कथानक अनेक भिन्न–भिन्न धाराओं में बँटा है।

चमत्कार के प्रति मोह भी इस नटक का एक दोष है। इन कतिपय त्रुटियों के बावजूद 'स्कन्दगुपत' का वस्तु विन्यास पर्याप्त सुगठित और सुसम्बद्ध है।

आधिकारिक और प्रासंगिक कथा सूत्रों को इस प्रकार समन्वित किया है कि न तो वे बिखर सकें और किसी पर हावी हो पाया है। शेक्सपियर के कुछ नाटकों में वैयक्तिक क्रिया–व्यापार व्यापक सामाजिक महत्त्व के कार्यों की सृष्टि करते हैं। इन्हें Envcloping action कहा गया है। इस नाटक में इसी प्रकार का क्रिया–व्यापार मिलता है।

राष्ट्रीय कार्यों के साथ वैयक्तिक जीवन के विभिन्न पक्षों को भी अच्छी तरह उभार दिया गया है। ऐतिहासिक तथ्यों और मानवीय संवेदनाओं के नीर–क्षीर मिश्रण से सामाजिकों को संवेगात्मक अनुकूलन (emotional response) सहज ही में प्राप्त हो जाता है।

रस विवेचन – स्कन्दगुप्त में दो रस – वीर तथा शांत प्रधान है। वीर के दो भेद–युद्ध वीर तथा त्याग वीर इसमें मिलते हैं। वर नाटक का प्रारमभ तथा पर्यवसान शांत रस में होता है।

प्रस्तुत नाटक का प्रधान रस शांत न होकर वीर ही है क्योंकि आद्यन्त स्कन्दगुप्त की कर्मवीरता दिखाई गयी है, उसके जीवन का अधिकांश भाग और पुरूषार्थ गुप्तकाल की श्री लक्ष्मी और आर्याव्रत की गौरव रक्षा में व्यतीत होता है। भारतीय काव्य शास्त्र के रस–निष्पति सिद्धान्त को ले तो भी प्रस्तुत नाटक में उसके चारों अवयवों की पूरी–पूरी संयोजना दिखायी देती है। इस नाटक में प्रसाद ने भारतीय पाश्चात्य पद्धतियों का समन्वय किया है। पाश्चात्य नाट्य–शास्त्र की दो विशिष्टताएँ कार्य और द्वन्द्व इस नाटक में मिलते ही हैं।

भारतीय नाट्य–शास्त्र में नाटक के तीन मुख्य उपादान माने गए हैं–वस्तु, नेता और रस। नाटक का वृत्त ख्यात होना चाहिए और नायक उदात्त का।

'स्कन्दगुप्त' इन सब कसौटियों पर भी खरा उतरता है। उसका वृत्त इतिहास प्रसिद्ध है और नायक धीरोदत्त। रस की निष्पति की चर्या हम ऊपर कर चुके हैं। इस प्रकार 'स्कन्दगुप्त' नाटक में भारतीय नाट्य–शास्त्र तथा पाश्चात्य नाट्य–शास्त्र के सिद्धान्तों का सुन्दर समन्वय हुआ है।

Swadeshi Research Foundation A Monthly Journal of Multidisciplinary Research
International Peer Reviewed, Refereed, Indexing & Impact Factor - 5.2, Ex- UGC S.N. 4990
ISSN : 2394-3580, Vol. – 9, No. – 3, Jan. – 2022, Conference Special Issues
2022

सोशल मीडिया का समाज पर बढ़ता प्रभाव

डॉ. राजेश कुमार धुर्वे
सहायक प्राध्यापक हिन्दी, शासकीय महाविद्यालय माड़ा, जिला–सिंगरौली (म.प्र.)

प्रारूप – हमारे देश में पहले सूचना देने हेतु डोंडी पिटावाई जाती थी, माईक से सूचना पत्राचार, दूरसंचार के माध्यम से सूचना भेजी जाती थी, लेकिन आज व्यक्ति अपने मन की बात हुनर कला या अन्य आवश्यक बातें सोशल मीडिया एप के माध्यम से तत्काल भेज देता है। सोशल मीडिया एप जैसे व्हाटसाप, फेसबुक, यूट्यूब, इन्स्ट्रग्राम, ट्यूटर आदि के द्वारा संभव हुआ है। ये एव व्यक्तियों हेतु एक मंच मिला इससे व्यक्ति पर बैठे अपनी बात विचार हुनर कला एवं अन्य जानकारी देता है। पहले व्यक्ति अपनी बातों या विचारों को रखने हेतु मंच ढूढ़ना पड़ता था या किसी व्यवसायिक संस्था से जुड़ना पड़ता था। सोशल मीडिया एक अपरम्परागत मीडिया है, जो सारे–सारे मीडियाओं (प्रिंट मीडिया, इलेक्ट्रानिक, एवं सामान्तर मीडिया) से अलग है। जिसे उपयोग करने वाला व्यक्ति सोशल मीडिया के किसी भी प्लेटफार्म का उपयोग कर अपनी पहुँच बना सकता है। आज के दौर में सोशल मीडिया जिन्दगी का एक महत्वपूर्ण अंग बन चुका है। यह एक वर्चुअल वर्ल्ड बनता है। आज हम इन्टरनेट के माध्यम से सम्पूर्ण विश्व में पहुँच सकते है। यह सबसे बड़ा एवं विशाल नेटवर्क है, जो सारे विश्व को जोड़े रखता है यह सूचनाओं के आदन–प्रदान करने में तीव्रगति से कार्य करता है, जिससे हर क्षेत्र की खबरें समाहित होती हैं। यह समाज में सकारात्मक भूमिका निभाता है। इसके माध्यम से किसी भी व्यक्ति संस्था समूह इसके माध्यम से किसी भी व्यक्ति संस्था समूह एवं देश आद को आर्थिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक रूप से समृद्ध बनाया जा सकता है।

आई. ए. एम. ए. आई की 2016 की रिपोर्ट के अनुसार भारत में 302 मीडियम इंटरनेट ग्राहक है। जिनमें 94 फीसदी मोबाइल इंटरनेट 06 फीसदी वायर्ड इंटरनेट का इस्तेमाल करते हैं। एक अन्य रिपोट के अनुसार इंटरनेट का इस्तेमाल करने वालों में 28 मीडियम स्कूल जाने वाले बच्चे हैं। 03 मीडियम मोबाइल ब्राडबैण्ड का उपयोग करने वालों में 18 वर्ष से कम उम्र के हैं। भारत में 21 प्रतिशत बच्चे मोबाइल इंटरनेट का इस्तेमाल कर रहे है। पिछले कुछ दशकों को देखकर यह कहा जा सकता है कि मोबाइल फोन जैसे उपकरण के बिना हमारा जीवन ही ठहर जाएगा। डिजीटल हो चुकी दुनियाँ ने सभी को चिंता में डाल दिया है।

बीज शब्द – सोशल मीडिया, फेसबुक व्हाटसाप एप, यूट्यूब सोशल प्लेटफार्म संदेश फोटो वीडियों अप्लोड डाउन लोड यूजर हालोवर पोस्ट करना पेस्ट करना स्मार्ट फोल इस्ट्राग्राम गूगल सोशल मीडिया वीडियों कालिंग फेसबुक अकाउट हैकिंग वायरस।

शोधालेख – आज के दौर में मीडिया किसी के लिये भी कोई अनजान शबद नहीं है। इसके विशय में बड़े हो या बचचे सभी जानते है आज हम हर समय और युग में है, जहाँ सूचना सीघ्र एक बटन दबाने पर मिल जाती है। इसके कारण हम अपने चारों ओर की जानकारी से अवगत हो जाते है। सोशल मीडिया वह जगत है, जहाँ हमें किसी भी चीज के विषय में पड़ने समझने का मोका मिलता है। सोशल मीडिया बेव साईटो अनुप्रयोग और अन्य प्लेट फार्मो का संग्रह है, जो हमें जानकारियों का आदान–प्रदान करने एवं सोशल नेटवर्किंग साईट में भाग लेने में मदद करता है। सोशल मीडिया का प्रभाव बहुत अधिक दूर तक पहुँच रहा है, लेकिन सोशल मीडिया आज विवाद का विषय बना हुआ है, लेकिन कुछ लोग इसे वरदान समझते है। वहीं कुछ लोग इसे अभिशाप मानते है, अधिकांश लोग यह महसूश करते है, कि सोशल मीडिया में तेजगति के साथ मानवीय अतः क्रियाओं को नजर–अंदाज कर आधुनिक मानव संबंधों को नष्ट कर दिया है, जिस प्रकार एक सिक्के के दो पहलू होते है, ठीक उसी प्रकार सोशल मीडिया के दो पाये है।

सोशल मीडिया के बिना हमारे जीवन की कल्पना करना मुश्किल है। सोशल मीडिया समाज के सामाजिक विकास में अपना योगदान देता है, और कई व्यवसायों को बढ़ाने में भी मदद करता है। यह व्यक्तियों को बिना किसी रोक–टोक के दुनियाँ के साथ सामाजिक, आर्थिक विकास करने में मदत करता है। सोशल मीडिया बाकी सारे मीडिया से अलग है। सोशल मीडिया, इन्टरनेट के माध्यम से एक वर्ल्ड बनाता है, जिससे उपयोग करने वाला व्यक्ति इसके किसी भी प्लेट फॉर्म जैसे फेसबुक, ट्यूटर, इस्ट्राग्राम का उपयोग कर अपनी पहुँच बना रहे है। सामाजिक, सांस्कृतिक एवं आर्थिक सभी क्षेत्रों में महत्व है। सोशल मीडिया के जरिये ऐसे कई विकासात्मक कार्य हुआ है। जिनसे कि

लोकतंत्र को समृद्ध बनाने के काम भी हुये है, जिससे किसी भी देश की एकता अखण्डता का धर्मनिरपेक्ष, समाजवादी गुटों में वृद्धि हुई है। कई चिकित्सको का मानना है, कि सोशल मीडिया लोगों में नकारात्मक अपवाद पेदा करने वाला एक कारक है। साईवर हैकिंग एक छवि खराब होना आदि जैसे– नकारात्मक हैकिंग बुरी आदतें, घोटाले में धोखा–धड़ी स्वास्थ्य समस्याएँ सामाजिक एवं पारिवारिक जीवन को नुक्शान हो रहे है। इसके माध्यम से कई बार नकारात्मक जानकारी साझा की जाती है, जिससे जन–मानस पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। साईवर अपराध सोशल मीडिया से जुड़ी सबसे बड़ी समस्या है। सोशल मीडिया का अत्यधिक उपयोग मानव के लिये भारी मुसीबत में डाल सकता है। इससे रोकने के लिये फेसबुक, ट्यूटर, यूट्यूब जैसे सोशल मीडिया पर अपना समय सीमित करना होगा।

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है यह वाक्य हमेशा रटाया गया है। सामाजिक होना ही इंसानों एवं जानकारी के बीच का अन्तर है, परन्तु क्या मनुष्य असामाजिक प्राणी हो चुका है। सोशल मीडिया के बढ़ते वर्चस्व में मनुष्य सामाजिकता को खत्म कर दिया है। सोशल मीडिया आज सम्पूर्ण विश्व में एक अगल पहचान बन गया है। सोशल मीडिया का समाज पर प्रभाव पहले केवल नई उम्र के लोग सोशल मीडिया से जुड़े अब धीरे–धीरे अधिक उम्र के लोग भी इससे जुड़ते गये। ऐसा कहा जाता है, कि अगर पूरे परिवार को एक साथ बात–चीत करने के लिये इकठ्ठा करना हो तो वाई–फाई थोड़ी देर के लिये बन्द कर दो सोशल मीडिया एक ऐसी दुनिया से लोगों को जोड़ रहा है जो नजर से बहुत दूर है, और उन अपनो से भी दूर नये तरीकें दिये है। जहाँ मिलकर बात–चीत करने का स्थान संदेशों ने ले लिया। जिसके परिणाम स्वरूप लोगों के बीच दूरियाँ कई गुना बढ़ गई है, एवं सामाजिक संबंध प्रभावित हो रहे है। इन दूरियों में लोगों को अकेलापन से भर दिया। सोशल मीडिया ऑनलाइन ट्रेनिंग प्लेटफॉर्म उपलब्ध करा रहा है, जिससे लोग अपने व्यवसाय को विश्वस्तर पर पहचान दिला रहे है। कृषि के विकास के लिये सरकार द्वारा सोशल मीडिया का प्रयोग किया जा रहा है। कई ऑनलाइन पोर्टल शुरू किये गये है, जिसके द्वारा कृषि से संबंधित जानकारियाँ दी जा रही है। अनाज के अपडेट बाजार भाव को किसानों को मुहईया कराने के लिये मोबाइल ऐप विकसित किया गया है। आज के समय में शायद ही ऐसा कोई होगा जो सोशल मीडिया का इस्तेमाल नही करता होगा। बच्चे, युवा और बूढ़े सभी आज कल सक्रिय रहते है लोग घण्टे–घण्टे अपने जरूरी काम छोड़कर फेसबुक, व्हाटशाप, ट्यूटर जैसे प्लेटफॉर्म पर लगे रहते है। आज कल यह बहुत प्रसिद्ध हो गया है। हर कोई व्यक्ति इसका उपयोग कर रहा है। हम अपने दोस्तों को संदेश या फोटो भेजने के लिये इसका इस्तेमाल करते है।

देश के प्रगति और विकास में सोशल मीडिया का महत्वपूर्ण योगदान है। आज सोशल मीडिया ने विश्व की शत–प्रतिशत घट रही जन आन्दोलन की विभिन्न गतिविधियों एवं सूचनाओं को प्रसारण के माध्यम से लोगों तक पल भर में पहुँच चाती है। सोशल मीडिया जीवन का हिस्सा बन गया है। इसका प्रभाव समाज में इतना प्रचार–प्रसार से जन–जन तक संदशों को देश के प्रत्येक कोने में चहुँचता है। किसी भी जन आन्दोलन को बढ़ावा देकर इलेक्ट्रानिक मीडिया ने पूरे विश्व को समेट कर वायु और प्रकाश की तरह उसकी प्रगति एवं सफलता के लिये लोगों को प्रेरित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। सोशल मीडिया के समारात्मक एवं नकारात्मक दोनों ही पहलू है। सोशल मीडिया जिन्दगी का एक हिस्सा बन गया है। समाज का प्रत्येक वर्ग छोटे व्यक्ति से लेकर बड़े–बड़े राजनेता, अभिनेता, कलाकार तथा उद्योगपति अपने व्यवसायी दोस्तों एवं अन्य परिचित लोगों से जोड़ने के प्रयास करते है, और समाज में अपन प्रतिष्ठा प्राप्त करते है। सोशल मीडिया ज्ञान का भण्डार है। दूसरी तरफ आज सोशल मीडिया एक अभिशॉप बनता जा रहा है। व्यक्ति चाहकर भी सोशल मीडिया से दूर नही रह सकता है। सोशल मीडिया के बढ़ते प्रभाव के कारण आज का समाज वर्ग हमारी प्राचीन रीति–रिवाज, परम्परायें, वेशभूशा आदि ने बहुत कुछ परिवर्तन देखने को मिल रहा है। देश की विकास गति को बढ़ावा देने एवं असमानता दूर करने के लिये समाज को संघर्ष करने की आवश्यकता है। जिसमें महिलाओं के प्रति अत्याचार, महिलाओं सेस छेड़–छाड़ तथा अन्य घअनाएँ घटित हो रही है। इसमें कहीं न कहीं सोशल मीडिया का प्रभाव है। इस तरह की सोशल मीडिया पर निगरानी एवं नियंत्रण के लिये सरकार द्वारा कानून बनाना चाहिये।

मीडिया ने जहाँ जनता को निर्भिता पूर्वक जागरूक करने भ्रष्टाचार को उजागर करने सत्ता पर तार्किक नियंत्रण एवं जनहित के कार्यों की अभिवृद्धि में योगदान दिया है। वह लालच, भय, द्वेष, स्पर्द्धा, दूरभावना एवं राजनीतिक कुचक्र के जाल में कसकर अपनी भूमिका को कलंकित भी किया है।

व्यक्तिगत य संस्थागत निहित स्वार्थ के लिये ब्लेकमेल द्वारा दूसरों को शोषण करना, चटपटी खबरों को तबज्जो देना, और खबरों को तोड़ मरोड़ कर पेश

करना। दंगे भड़काने वाली खबरे, प्रकाशित करना। घटनाओं एवं कथनों को द्विअर्थि रूप प्रदान करना। भय य लालच में सत्ता रूढ़दल की चापलूसी करना। अनावश्यक रूप से किसी की प्रसंशा और महिमा मण्डल करना, और किसी दूसरे की आलोचना करना जैसे– अनेक अनुचित कार्य आज कल मीडिया के द्वारा किये जा रहे है। दुर्घटना एवं संवेदनशील मद्दो को बढ़ा–चढ़ा कर पेश करना। इमानदारी नैतिकता कर्तव्य निष्ठा और साहस से संबंधित खबरो को नजर–अंदाज करना। आज कल मीडिया का एक सामान्य लक्षण हो गया है। मीडिया के इस व्यवहार से समाज में अव्यवस्था और असन्तुलित की स्थिति पैदा होती है।

प्रिंट मीडिया और टी. वी. एवं सिनेमा के माध्यम से पश्चिमी संस्कृति का आगमन और प्रसार हो रहा है। जिससे समाज में अनावश्यक फैसन, अशलीलता गुण्डा–गर्दी जैसी घटनाओं में वृद्धि हुई है। इस पतन के कारण युवा पीढ़ी भी पतन के गर्त में धस्ती जा रही है।

इंटरनेट के माध्यम से असामाजिक क्रियाकलाप युवाओं तक पहुँच रहे है। जिससे उनमें नैतिकता, संस्कृति और सभ्यता की लगातार कमी आती जा रही है। इन सब को देखते हुये मीडिया की भूमिका पर विमर्श करना जरूरीी हो गया है। आज हम मीडिया की भूमिका पर बात करें तो मीडिया, मीडिया यथार्थ प्रदाता ऐजन्सी समाज सेवक के रूप में सामाजिक समरसता का निर्माता एवं पोषक सूचक भूमिका के रूप में कार्य करता है।

सोशल मीडिया समाज पर सकारात्मक प्रभाव :–

- सोशल मीडिया का सबसे बड़ा सकारात्मक प्रभाव यह भी है कि आज हम हमारे प्रियजनों से सीधा सम्पर्क कर सकते है। चाहे हम दुनिया के किसी भी कोने में बैठे हो।
- हम अलग–अलग लोगों को विचारों समझने का अवसर मिलता है और हमारा ज्ञान का भण्डार बढ़ता है।
- आज किसी को रक्त की आवश्यकता होती है, तो इसकी सूचना सोशल मीडिया पर संदेश देने से कई लोग इसके लिये तत्पर रहते है। रक्त समूह भी लिख दिया ज ाता है, जिससे और स्पष्ट हो जाता है।
- बहुत ही तेज गति से होने वाला संचार का माध्यम है।
- इससे फोटो वीडियों सूचना प्रमाण–पत्रों आदि को आसानी से शेयर किया जा सकता है।
- हम अपने बिजनेश को सोशल मीडिया के द्वारा लाखों लोगों तक पहुँचा सकते है।

सोशल मीडिया समाज पर नकारात्मक प्रभाव :–

- समय की बर्वादी– व्यक्ति हमेशा मोबाइल पर व्यस्थ रहता है, जिससे उसकी कार्य क्षमता पर विपरीत प्रभाव पड़ता है।
- सोशल मीडिया से व्यक्ति एवं परिवार में स्नेह की कमी देखने को मिली है। संस्कार विलुप्त हो रहा है।
- इससे सामाजिक कार्यक्रमों में रौनक में कमी आई जैसे– विवाह समारोह, नवरात्रि, गणेश उत्सव एवं अन्य कार्यक्रमों में जश्न का उत्साह कम देखने को मिलता है।
- यह बहुत सारी जानकारी प्रदान करता है, जिसमें से बहुत सी जानकारी भ्रामक होती है।
- फोटो या वीडियों को ऐडिटिंग कर के भ्रम फैला सकते है, जिनके माध्यम कभी–कभी दंगे जैसी स्थिति बन जाती है।
- छोटे बच्चों को इससे दूर रखना चाहिये इसकी आदत पड़ जाये तो उसको छोड़ना बहुत कठिन होता है।

निष्कष :– हांलाकि सोशल मीडिया के सीमित इस्तेमाल से फायदा भी हो सकता है सोशल मीडिया के सीमित से साथियों से तेज और बढ़िया कनेक्शन संभव है। सोशल मीडिया से जरूरी सूचना लेना या देना आसान है। सोशल मीडिया से स्टडी मटेरियल शयर करने में सुविधा होता है। साथ ही सोशल मीडिया से हमारा तकनीकि ज्ञान और गैजेट्स की जानकारी सदैव अपडेट होता रहता है। सोशल मीडिया से प्रोफाइल डिजाइन और नेटवकिंग स्किल लिखी जाती है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. सोनी सु.(2009) नवीन मीडिया प्रविधियाँ जयपुर बुक एनक्लेव।
2. Arya N, Sosal Media New Delhi Anmol Publication Pvt. T.D.
3. शर्मा (2011) आधुनिक पत्रकारिता प्रभाव एवं कार्य जयपुर इशिका पब्लिसिंग हाउस।
4. चतुर्वेदी 'ज' (2013) मीडिया समग्र भाग–3 ज्ञान क्रांति और साइबर संस्कृति दिल्ली स्वराज

प्रकाशन।

5. सिंह सुरजीत (2012) मीडिया अचिवर्स, जयपुर हार्स बैक पब्लिकेशन समसामयिक पत्र पत्रिकाएं, समाचार पत्र इटरनेट।
6. डॉ. पुष्पराज जैन, राजनीति विज्ञान, साहित्य भवन आगरा (2004)
7. आभा सक्सेना सामाजिक परिवर्तन एक दृष्टिकोण, किताब महल एजेन्सी, इलाहाबाद (1996)।
8. राकेश कुमार सोशल नेटवर्किंग, कल और आज आर आई. जी. आई. पब्लिकेशन।
9. रिगि पब्लिकेशन सौरभ शुक्ला – नये जमाने की पत्रकारिता।
10. डिजिटल आधी (लेखक) डॉ. अल्का जैन।